मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाओी देसाओी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–१४

पहली आवृत्ति ३०००

रु० १.५०

जुलाओी, १९६०

मातृ-स्मरण

हमारे बाल्यकालमे ही हमे छोडकर जिन्हे अिहलोकसे जाना पडा, परन्तु अितने अल्पकालमे ही दिये हुअे जिनके धर्म-सस्कार आज तक मेरी अुन्नतिमे अुपयोगी सिद्ध हुअे है, अुन तीर्थस्वरूप माताजीका अत्यन्त नम्रता और कृतज्ञतापूर्वक स्मरण।

केदारनाथ

सम्पादकके दो शब्द

परम पूज्य केदारनाथजीकी यह पुस्तक पाठकोके समक्ष रखते हुअे मुझे बडा आनन्द होता है। 'विवेक और साधना' तथा 'विचारदर्शन भाग – १'* के समान यह भी केदारनाथजीके लेखो, पत्रो और सवादोका सग्रह है। अब जीवन-विषयक अुनके विचारोका हिन्दी-भाषी जनताको धीरे धीरे परिचय होता जा रहा है। यह सग्रह मानवताकी विचार-धाराकी विशद कल्पना करानेमे सहायक सिद्ध होगा। अिस भागमे श्रेयार्थी भाअियोको लिखे गये कुछ अप्रकाशित पत्रोका भी समावेश किया गया है। सारे सग्रहको पुस्तकाकार छापते समय पूज्य नाथजीके साथ पढ लिया गया है और जहा स्पष्टता करना आवश्यक मालूम हुआ वहा वैसी स्पष्टता कर दी गअी है। अिसका गुजराती अनुवाद मूल मराठी परसे हुआ है। सारी सामग्री फिरसे पढते समय अुस चर्चा तथा विचारणाका लाभ अुठाया गया है, जो हिन्दी मासिक 'जैन-जगत' के सम्पादक श्री रिषभदासजी राका समय समय पर पू० नाथजीके साथ किया करते थे। अिसके लिअे मै श्री रिषभदासजी राकाका आभारी हू।

'विवेक और साधना' के निवेदनमे पू० नाथजीके सम्बन्धमे और मानवताके ध्येय-सम्बन्धी अुनके विचारोके बारेमे आवश्यक बातोका अुल्लेख कर दिया गया है। अुन्होने स्वय अुस पुस्तकमे अपना आत्म-परिचय भी दिया है। अत यहा अिस सम्बन्धमे कुछ विशेष लिखना आवश्यक नही है।

गुजरातीसे हिन्दी अनुवाद श्री रिषभदासजी राकाने किया है।

यह पुस्तक तैयार करनेमे जिस प्रकार मुझे कृतार्थताका अनुभव हुआ है, अुसी प्रकार पाठकोके लिअे अिसका वाचन और मनन विचार-जागृतिमे सहायक सिद्ध होगा, अैसी मुझे आशा है।

अहमदाबाद,
१०–६–'६०

---

* नवजीवन द्वारा प्रकाशित।

प्रस्तावना

'विचार-दर्शन' का पहला भाग चार वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था। अुसमे कहे अनुसार लोगोकी अभिरुचि देखकर यह दूसरा भाग प्रकाशित करनेका अवसर आया, अिससे मुझे आनन्द होता है। पहले भागके लेखोकी तरह अिस भागके लेख भी मासिकोमे प्रकाशित हो चुके है। अुन्हीको सुधार कर और अलग अलग विपयोके अनुसार जमा कर अुनमे कुछ क्रम और व्यवस्थितता लानेका प्रयत्न किया गया है। मुझे आशा है कि पहले भागके समान यह भाग भी लोगोमे प्रिय होगा।

मूल मराठी लेखोका गुजराती अनुवाद मेरे मित्र श्री रमणीकलाल मोदीने किया है। पहले भागके लेखोके अनुवादकी तरह अिस भागके अनुवादमे भी अुन्होने मूल लेखोके अर्थ, आशय, भाव अथवा रहस्यमे थोडी भी कमी नही आने दी है। अिसके लिअे अुन्होने जिस दक्षता और सूक्ष्मताका अुपयोग किया है वह प्रशसनीय है। लेखोके विषय-प्रतिपादनमे अधिक स्पष्टता लानेके लिअे अुन्होने विशेष स्थानो पर जो सूचनाअे की, अुनसे मुझे बडा लाभ हुआ है।

नवजीवन प्रकाशन मदिरने मेरे प्रति रहे प्रेमके कारण अिस भागका प्रकाशन वहुत थोड़े समयमे तत्परतासे कर दिया, अिसके लिअे मै श्री जीवणजीभाअीका आभारी हू।*

अभय ब्लॉक न २, प्लाट नं. ३२ केदारनाथ
अरोरा सिनेमाके पीछे, मार्ग नं. १४
किंग्स सर्कल, बम्बअी–१९
ता १८–३–'५९

* मूल गुजरातीकी प्रस्तावना।

अनुक्रमणिका

	सम्पादकके दो शब्द	५
	प्रस्तावना	६
१	ध्येयनिष्ठ जीवन अर्थात् धन्य जीवन	३
२	जीवनकी सार्थकता	९
३	जीवन और धर्म	१४
४	जीवन और जीवन-शुद्धि	१९
५	श्रेष्ठ जीवनकी शिक्षा	२८
६	शुद्ध मकल्प और असका विकास	३५
७	सद्गुणोकी पूर्णता ही मानवताकी सिद्धि है	४३
८	प्रकृति, विकृति और सस्कृति	५०
९	दु ख-निवृत्ति और सुखप्राप्ति	५७
१०	मानसिक नीरोगता	६६
११	भक्तिका शुद्ध स्वरूप	७०
१२	आत्म-विश्वास और साध्य-साधनका विवेक	७९
१३	व्याकुलता और योग्य साधना	८१
१४	मित्रधर्म और असका दृढतापूर्वक पालन	८४
१५	भावस्मृति और भ्रम-निरसनकी आवश्यकता	८६
१६	व्रतोकी आवश्यकता	८९
१७	धारणा-शक्तिकी आवश्यकता	९३
१८	धारणा-शक्तिका अभ्यास – १	९८
१९	धारणा-शक्तिका अभ्यास – २	१०७
२०	धारणा-शक्तिका अभ्यास – ३	११४
२१	मौन और वाचाशुद्धि	१२१
२२	मानवताकी सिद्धिका सकल्प	१२८
२३	तत्त्वज्ञानमे सशोधन-वृत्तिकी आवश्यकता	१३१
२४	सबकी भलाअीमे हमारी भलाअी	१४२

विचार-दर्शन

१

ध्येयनिष्ठ जीवन अर्थात् धन्य जीवन

जीवनका ध्येय और योजना

घर, खेती, गाय, बैल, घोडा, कपडे और हमारे बच्चे ही नही, बल्कि हमारे भोजन आदिमे से भी किसी सजीव या निर्जीव वस्तुके विगडनेके कारणका पता लगाने पर सामान्यत मालूम होता हे कि ठीक समय पर ध्यान न देनेसे तथा विवेकपूर्वक अुचित सभाल न रखनेसे ये सब विगडते है। घर खराब क्यो हुआ ? खेतीमे नुकसान कैसे आया ? बच्चे क्यो विगडे ? अिसकी जाच करने पर पता चलेगा कि अधिकाशमे अुनकी ओर जिस समय जितना ध्यान देना चाहिये था अुतना नही दिया गया। हमारे शरीरके विगडनेका भी सामान्यतया यही कारण होता है। बाहरी प्राकृतिक कोपके कारण कभी-कभी घर-खेती आदिका भयकर नुकसान होता है, हवाके विगडनेसे सक्रामक बीमारिया होती हैं, स्वास्थ्य बिगडता है। लेकिन अैसे अवसर हमेशा नही आते। अिस सम्बन्धमे नित्यका कारण तो हमारी अुपेक्षा, अज्ञान, लापरवाही, आलस्य और असयम या अैसी ही दूसरी कोअी बात रहती है। जीवन और व्यवहारके विषयमे गहराअीसे विचार करके जिसने पवित्र और अुदात्त ध्येय धारण किया है, अैसा विवेकी, निरलस और पुरुषार्थी व्यक्ति अैसी किसी बातके बारेमे कभी भूल नही करता। गहरा और सूक्ष्म विचार करके धारण किये हुअे अुदात्त ध्येयको प्राप्त करनेके लिअे वह अपने व्यवहारकी योजना अपने हृदयमे बनाता है और अुसके अनुसार जीवन बितानेका प्रयत्न करता हे।

अच्छी तरहसे ससारका व्यवहार या व्यापार चलानेवाला व्यक्ति जैसे अपने पास जो कुछ होता है अुसका अदाजा लगाकर अपना खर्च या व्यापार निश्चित करता है, सावधानी अेव मितव्ययितापूर्वक अपना व्यापार या गृहस्थी चलाता है, वैसे ही विवेकी और श्रेयार्थी व्यक्ति अपनी सभी

शक्तियोका विचार करता है, अुन शक्तियोको बढाता है और अपना ध्येय सिद्ध हो अिस प्रकारकी जीवन-प्रणाली निश्चित करता है। विवेक, दृढता, सयम, दया, क्षमा, प्रेम, शाति, अुत्साह, अुदारता आदिसे वरतनेका प्रसंग आने पर वह अपने ध्येयके अनुसार जागृतिपूर्वक वरतता है और जीवनभर वैसा व्यवहार रखकर ध्येयप्राप्तिमे सफल होता है।

मानवताकी कमी

अिससे विपरीत मार्ग पर चलनेवाले व्यक्तियोके विषयमें विचार करने पर दिखाअी देता है कि वे अपनी खेती, घर और वाल-वच्चोकी ही नही, वल्कि अपने शरीर और मन तककी भी परवाह नही करते। वे अपने मनमे अुठनेवाली भली या वुरी वृत्तियोके अनुसार जीवन विताते है। अुनके जीवनमे कोअी अुदात्त ध्येय ही नही होता। विवेक और दूरदृष्टिके विषयमे वे कुछ जानते ही नही। आलस्य तथा कर्तृत्व-हीनताके कारण अुनका ससार और शरीर दोनो ही विगडते है। खान-पान, रहन-सहन, वस्त्र, पोशाक आदिके विषयमे स्वास्थ्यकी अपेक्षा लुब्धता और मौजशौककी ही प्रभुत्व अुन पर अधिक होता है। वालकोके कल्याणकी भावनाकी अपेक्षा अुनमें वालकोके प्रति मोहका ही प्रावल्य अधिक रहता है। अिस सवका कारण यह है कि वे मानव-जीवनका महत्त्व नही समझ सके है। मानव-जीवनका महत्त्व समझनेकी अिच्छा भी अुनमे नही होती। ससारमे लाखो लोगोका जीवन अिसी प्रकार चलता हुआ दिखाअी देता है। अन्य प्राणियोसे मानवका वौद्धिक विकास अधिक हुआ है, फिर भी आज तक वह ध्येयहीन जीवन विता रहा है। यह मानवताकी दृष्टिसे बहुत वड़ी कमी है।

ध्येयहीन जीवनके विपरीत परिणाम

संसारमे जो लोग विद्या, धन, सत्ता, वल, वैभव, अैश्वर्य, प्रतिष्ठा और कीर्तिके पीछे लगे होते है, जिनमे वडी-बड़ी आकाक्षाये होती है, जिनमे अपने अिच्छित हेतु और विषयके लिअे आवश्यक विवेक अथवा दूरदृष्टि भी होती है, पर जो अिनका अुपयोग केवल अपनी महत्त्वाकाक्षा पूरी करनेमे ही करते है तथा जो अपनी घर-गृहस्थी अच्छी तरह चलाते हुअे भी केवल अपने खुदके सुख-दुखोको ही

महत्त्व देते है, अुन्हे भी अपने जीवनके विषयमे कोअी अुच्च ध्येय प्राप्त करना नही होता। जब तक मनुष्यको मानवताका महत्त्व नही प्रतीत होता, सद्गुणोमे रुचि पैदा करके अुन्हे प्राप्त करनेका वह प्रयत्न नही करता और जीवन-विषयक पवित्रताकी कल्पना अुसके हृदयमे स्थिर नही होती, तब तक अुसके जीवनमे कोअी अुदात्त ध्येय हे अैसा नही कहा जा सकता। जिस आकाक्षा या हेतुके पीछे पवित्रता और अुदात्तताका भाव रहता हे, अुसे ही 'ध्येय' कहा जा सकता है। मनके किसी भी क्षुद्र हेतुको ध्येय शब्दसे सबोधित नही किया जा सकता। 'व्रत' शब्दका अुपयोग किसी श्रेष्ठ नियम, सयम और निग्रहपूर्वक चलनेके निश्चयके लिअे किया जाता हे। जिन प्रसगोमे विवेक, सयम, दृढता, त्याग, अुदारता आदि सद्गुणोको जाग्रत करना पडता है, वहा 'व्रत' शब्दकी योजना की जाती है। किसीको आवश्यकतासे अधिक खाने-पीने, सोने और चाहे जैसे निरकुश बोलने आदिकी आदत लग गअी हो या कोअी स्वच्छन्दतासे बरतता हो, तो अुसने अधिक खाने-पीने, सोने, बडबडाने या स्वच्छदतासे बरतनेका व्रत लिया है अैसा कोअी नही कह सकता। वह स्वय भी वैसा नही कह सकता। अिसी प्रकार हम अपनी अिद्रियोके अधीन होकर अविवेकपूर्वक केवल अपनी मनोवृत्तियोके अनुसार बरते, तो अुसके पीछे हमारा कोअी जीवन-ध्येय है अैसा नही कहा जा सकता। समर्थ रामदास स्वामीने कहा है

'पर्णाळी पाहोन अुचले। जीवसृष्टि विवेकें चाले।
आणि पुरुष होअुनि भ्रमले। यासी काय म्हणावे।।

दासबोध, १२–१–११

पर्णाली यानी पत्ते परका कीडा। वह भी आगेका आधार देखकर और जाच कर ही पिछला पैर अुठाता है, आगे बढता हे। सामने सुरक्षित और निर्भय आधार देखे बिना वह आगे नही बढता। परन्तु खुदको बुद्धिमान समझनेवाला मानव चाहे जेसा अविवेकपूर्ण व्यवहार करता हे। अिसे क्या कहा जाय? हर व्यक्तिको जो ससारके अनेक कष्ट और मुसीबते, आपत्तिया और विपत्तिया भोगनी पडती है, वे ससार और व्यक्तियोके दोषो और दुर्गुणोसे ही निर्मित होती है, अैसा हम देखते है और अैसा ही

अनुभव भी होता है। मानव-जातिके अज्ञान, लोभ, आशा, तृष्णा, दुष्टता, मिथ्या अहकार, विद्या, धन, सामर्थ्य और सत्ताके कारण आनेवाले प्रमाद आदि दोषोके कारण आज हम सब दु खी है। आज हमे जगली हिस्र प्राणियोका अितना भय नही है जितना आपसमे अेक-दूसरेका है। अिस स्थितिके लिअे हम स्वय जिम्मेवार है। हमारे अुदात्त ध्येय-रहित जीवनके ही ये सब विपरीत परिणाम है। अगर हमे अैसा लगे कि अिस स्थितिमे सुधार होना चाहिये, तो हमे अपने ही जीवनकी जाच करनी चाहिये, अुसका शोधन करना चाहिये।

जीवन-सिद्धिका मार्ग

अपने मनको कुछ स्वस्थ बनाकर हमे तटस्थतापूर्वक देखना चाहिये कि हमारा अपना तथा दुनियाका व्यवहार किस प्रकार चल रहा है। हम अपने तथा दुनियाके सुख-दु खके कारणोका सूक्ष्म निरीक्षण करे और अुन्हे खोजनेका प्रयत्न करे, तो पता चलेगा कि हम अपने अज्ञान और दुर्गुणोके कारण ही दु खी बनकर दूसरोके दु खके भी कारण बनते है। विवेक और सद्गुणोंकी रुचि न होनेके कारण केवल अपनी भली-बुरी वृत्तियोके अनुसार, अपनी भीतरी अिच्छाओके अनुसार हम बरतते है। हम अपनी वृत्तियो और अिच्छाओके पोषण, वर्धन और शमनके पीछे लगे हुअे है। अपनी वृत्तियो और अिच्छाओके तात्कालिक शमनको ही हम सुख मानते है। यह शमन और सुख तात्कालिक होता है, अतः अुससे वृत्तियो तथा अिच्छाओका पोषण और वर्धन होता है। यह बात सुख-लुब्धताके कारण हमारे ध्यानमे नही आती। किंतु बारीकीसे देखने पर मालूम होगा कि तात्कालिक शमन केवल आभासमात्र है। अुससे अुलटे हमारी वृत्तिया और अिच्छाअे बढती है। अिस मार्गसे हमारी अिच्छाओका कभी भी शमन नही होता; परन्तु शमनसे अुनका पोषण और वर्धन होता है और फिर अुनका शमन, अिस तरह यह चक्र हम चलाते रहते है। अथवा अिसी चक्रमे हम फसे रहते है। अिस चक्रमे फसे रहने पर भी हम स्वय अुसे गति देते रहते है। अिस प्रकारके अपने जीवन-क्रममे अपनी विभिन्न अिच्छाअे, वासनाअे और आशा-तृष्णाअे पूरी करते समय हमसे कितना ही अन्याय, दुष्टता, कठोरता, असत्य,

अप्रामाणिकता आदि दोप होते रहते है, और अुनके कारण अनेक निरपराध दीन, दुर्बल, असहाय व्यक्तियोको दु ख भुगतना पडता है, अिस पर गहरा विचार करे तो कुल मिलाकर क्या सार निकलता है? हम सब अिस तरहका जीवन-क्रम चलाते रहे तो क्या कभी निर्भय और सुखी बन सकते है? निसर्ग कहिये या परमात्मा, अुससे हमें जो विशिष्ट बौद्धिक देन मिली है अुसका अुपयोग हम अिस तरीकेसे करेगे, तो वैसा करना हमारे लिअे शोभाकी बात नही होगी।

मनुष्याणा सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धाना कश्चिन्मा वेत्ति तत्त्वत ।।७–३

यह गीताका वचन है। अिसका अभिप्रेत अर्थ यह है कि हजारो लोग जीवनके विषयमे विना कुछ सोचे ही जीवन विताते है। अुनमे से अेकाध व्यक्ति ही अैसा होता है जो जीवन-सवन्धी अुच्च विचारोके अनुसार जीवन-सिद्धि प्राप्त करता है। अिस श्लोककी रचना अथवा अिस वचनका प्रकटीकरण सैकडो वर्ष पहले हुआ है, किंतु अितना समय बीतने पर भी मानव-स्वभाव या मानव-जीवनमे कोअी खास परिवर्तन हुआ नही दिखाअी देता। हमारे पहलेकी पीढीके अनुभवोसे आजकी पीढीको और आजकी पीढीके अनुभवोसे भावी पीढीको सुधरनेका प्रयत्न क्यो न करना चाहिये? मनुष्य केवल गतानुगतिक ही क्यो रहे? यह सबसे बडा सवाल है। सत, सज्जन, जगतके कल्याणकी चिंता रखनेवाले और अुसके लिअे अपने आपको समर्पित करनेवाले महापुरुष हम सबसे यही कहते है

'हित नाही ठावे जननी-जनका। दाविला लौकिकाचार तिही।
आधळयाचे काठी लागले आधळे। घात अेके वेळे पुढे मागे।
न धरावी चाली करावा विचार। वरील आहार गळी लावी।'

माता-पिताओको सतानके सच्चे हितकी जानकारी नही होती। वे तो केवल लौकिक तथा परपरासे चलते आये आचार ही अुन्हे सिखाते है। अेक अधेकी लकडी पकडकर दूसरा अधा अुसके पीछे चलता है, वैसा ही यह तरीका है। अिसमे आगेवाले तथा अुसके पीछे चलनेवाले दोनोको ही धोखा है। अिसलिअे परपरासे चले आये मार्गको न पकड़

कर विचारपूर्वक सच्चा मार्ग ग्रहण करना चाहिये। मछली पकडनेके लिअे काटेको लगाये गये मासकी तरह अूपरी सुखमे हमे नही फसना चाहिये। अैसा सत सज्जन कहते आये है। अुनके कहे अनुसार यदि हम सावधान न हो और विवेकसे जीवनका अुदात्त ध्येय निश्चित करके अुसके अनुसार चलनेका प्रयत्न न करे, तो मनुष्य-जन्म पाकर जो सिद्धि हमे प्राप्त करनी चाहिये वह सिद्धि हम प्राप्त न कर सकेगे। जैसे खेती, घर या अन्य कोअी वस्तु अुचित समय पर ठीक ध्यान न देनेसे बिगड जाती है, वैसे ही हमारा जीवन भी विगडकर व्यर्थ न बन जाय अिसकी सावधानी रखकर हमे विवेकपूर्वक जीवन वितानेका प्रयत्न करना चाहिये। और प्राप्त मूल्यवान मानव-जीवनका सदुपयोग करना सीखना चाहिये। अुदात्त हेतु धारण करनेवाला विवेकी मनुष्य अिस सबधमे कभी गलती नही करता, कभी अुपेक्षा नही करता। जैसे धनका लोभी अपनी समस्त शक्तियोको अेकत्र करके अपने धनकी रक्षा करता है, माता जैसे अपनी अिकलौती सतानका पालन-पोपण सारा ध्यान अुसी पर केन्द्रित करके करती है, वैसे ही विवेकी मनुष्य मानवताको अपना ध्येय बनाकर अपने शील और सत्त्वका रक्षण करता है। प्रसग आने पर वह अपने प्राण अर्पण करके भी शीलके रक्षणका प्रयत्न करता है। अुसकी यह श्रद्धा होती है कि यही अेक अैसी बात है जो सबको, मानव-जातिको पूर्ण सुखी बनानेमे समर्थ है। अिसके अतिरिक्त दूसरी बाते — लोभ, मोह और आसक्ति आदि — हम सबकी दुर्गति करनेवाली है। यह अुसका निश्चित विश्वास रहता है। मानव-जाति अपने दोषों और दुर्गुणोसे दु खी और अपनी पवित्रता, अुदात्तता और सद्गुणोसे सुखी बनती है। यह बात वह गहरा विचार करके और प्रत्यक्ष अनुभवसे जानता है। बुरे रास्ते जानेकी या अुस मार्गसे किसी प्रकारका लाभ अुठानेकी बात वह कभी नही सोचता। वह कभी दंभ या अहकार नही करता। आडम्बरमे अुसकी रुचि नही होती। मै भला हूं अैसा लोगोको बतानेकी अपेक्षा वह भला बननेका ही प्रयत्न करता है। सज्जनताका दिखावा करनेकी अपेक्षा सचमुच सज्जन बननेमे ही अुसे कृतार्थता महसूस होती है। सद्गुणोका वर्णन करनेकी अपेक्षा सद्गुणी बननेमे ही अुसे आनन्द

प्राप्त होता है। हम सब सद्‌गुणी और शील-सपन्न बने, यही अुसकी आकाक्षा रहती है।

'एकमेका साह्य करू। अवघे धरू सुपथ॥'

हम सबको परस्पर अेक-दूसरेकी सहायता करते हुअे अच्छे रास्तेसे अुदात्त ध्येयकी ओर बढना है। यही विवेकी पुरुषका जीवन-मत्र होता है। अिस जीवन-मत्रके अनुसार वह अपना जीवन-पथ और ध्येय निश्चित करता है। अिस मार्गसे चलते चलते वह जीवन-सिद्धि प्राप्त करता है और अन्तमे धन्य बनता है।

अिसी मार्गका अवलम्बन लेकर यदि अुस पर चलते रहे, तो क्या हम सभी धन्य नही होगे?

२

जीवनकी सार्थकता

मानव-जीवन आजकल अितना अशुद्ध हो गया है कि भावी प्रजाकी क्या स्थिति होगी, अिसकी ठीक ठीक कल्पना भी हम नही कर सकते।

सामुदायिकताका अभाव

प्रत्येक व्यक्ति यदि अपने व्यवहार तथा आचरणका विचार करे, तो मालूम होगा कि अुसके अशुद्ध व्यवहार तथा आचरणसे समाजमे अशुद्धि ही बढ रही है। असत्य, अप्रामाणिकता, धोखेबाजी आदि द्वारा प्राप्त की हुअी वस्तुओकी भौतिक दृष्टिसे चाहे जितनी कीमत आकी जाती हो, फिर भी हमारे हाथसे अुन चीजोके निकल जानेमें समय नही लगेगा। लेकिन अुनकी प्राप्तिके लिअे हमने जिन दुर्गुणोका आचरण किया और जिन्हे बढाया है, अुन्हे अपने भीतरसे और समाजमे से हम मिटा नही सकेगे। अिस प्रकार प्राप्त की हुअी वस्तुसे हमारी कौनसी शक्ति बढती है? अपनी मानी हुअी कार्यसिद्धिके लिअे यदि हम दुर्गुणोकी स्पर्धामे लगेगे, तो अुसका क्या परिणाम होगा, अिसका विचार हमे करना चाहिये। तत्त्वज्ञानमे अितनी आगे बढी हुअी प्रजाकी अैसी स्थिति क्यो हुअी,

अिस पर हमे विचार करना चाहिये। हम अपनी दृष्टिको परमेश्वर, जन्म-मरण, मोक्ष या परलोक तक पहुचाते है, लेकिन प्राप्त जीवनमे किस प्रकार रहना चाहिये अिसकी ओर ध्यान नही देते। हम सब सुखी हो अिसीमे हमारा और मानव-जातिका हित है, अिस दृष्टिसे हम कभी विचार ही नही करते। हम हर तरहसे व्यक्तिगत रूपमे ही विचार और आचार करनेके आदी बन गये है। जो कुछ चाहिये वह केवल अपने ही लिअे हमे चाहिये। मोक्ष चाहिये तो भी खुद अपने ही लिअे। वैसे ही विद्या, धन आदि भी सब अपने लिअे ही चाहिये। अिससे अूची कल्पना ही हम नही कर सकते। सामुदायिक रीतिसे विचार करनेकी और जीवन जीनेकी कल्पना भी हमारे मनमे नही अुठती। अिसलिअे पहले हमे सामुदायिक ध्येय धारण करके मनको व्यापक बनाना चाहिये। अुसके अनुसार हमारा व्यवहार भी शुद्ध ही होना चाहिये। अेक-दूसरेके साथका व्यवहार शुद्ध किये बिना हम सुखी नही हो सकते। यह स्थिति कानूनसे नही सुधर सकती। मनुष्य सस्कारोसे सुधरता है। जो कुछ अशुद्धि है वह मनमे ही है। जीवनमे अच्छी आदतो और सुसस्कारोका बहुत बडा महत्त्व है। अिसलिअे बचपनसे अच्छी आदते और सस्कार डालने चाहिये। बचपनमे पडी हुअी बुरी आदते बड़ी अुम्रमे छोडनेमे कठिनाअी होती है। अधिकतर वे छूटती ही नही। बचपनमे यदि सुसस्कार पड जाय तो अुनका सद्‌गुणोमे परिवर्तन होता है। और वे सद्‌गुण आहिस्ता-आहिस्ता मनुष्यका स्वभाव बन जाते है। अिस प्रकार स्वभाव बने हुअे सद्‌गुण सदा कायम रहते है।

व्यवहार-शुद्धि और हृदय-शुद्धिका संबंध

आज हम प्रचलित प्रवाहका अनुसरण करते है। लेकिन प्रत्येक व्यक्ति शुद्ध रहनेका निश्चय करे और तदनुसार चलनेका प्रयत्न करे, तो ीश्वर अिसमे अुसकी सहायता करेगा। अशुद्धि न तो तुरन्त आती है और न तुरन्त दूर होती है। वह आती तो आहिस्ता आहिस्ता है, लेकिन अुसे दूर करनेके लिअे महान प्रयास करना पड़ता है। कभी कभी अशुद्ध व्यवहारसे मनुष्यको यश और सफलता मिलती है। अिसलिअे वह अधिकाधिक अुसी तरहका व्यवहार करता रहता है। जब हमारा

मन अशुद्ध होता है तो हमारा व्यवहार भी अशुद्ध हो जाता है। हृदयके मलिन होनेसे हमारे द्वारा होनेवाली क्रियाअे भी अशुद्ध ही होती हैं। मन बुरा न हो तो अशुद्ध भाव पैदा नही होता। मन शुद्ध हुआ है या नही, अिसका दर्शन अुसकी क्रियामे होता है। भूमि यह नही कहती कि वह कैसी है। अुसमे अुगे हुअे पेड-पौधे बता देते हैं कि वह कैसी है। अुसी तरह मन कैसा है अिसका दर्शन अिद्रियो द्वारा होनेवाले कर्मोंसे होता है। आन्तर और बाह्य अिन्द्रियोकी शुद्धिसे जीवन शुद्ध होगा। अत व्यवहार-शुद्धिके लिअे हृदय-शुद्धि आवश्यक है। हृदयकी शुद्धि मानव-जीवनका ध्येय है।

समयका सदुपयोग

मनुष्यकी परीक्षा अुसके वर्तन-आचरणसे होती है। अुसके पास धन हो और अुसे अच्छे सस्कार मिले हो, तो वह अुस धनको परोपकारमे खर्च करेगा, यदि अुस पर विलासके सस्कार हो तो वह अपने मौज-शौकके लिअे अुसका अुपयोग करेगा। जीवनमे हमने क्या कियाँ, क्या कमाया, अिसका विचार हरअेकको करना चाहिये। बीता हुआ समय वापस नही लौटता। अिसलिअे सद्गुण और सुसस्कार प्राप्त करने योग्य है, अैसा निश्चय आजसे ही हरअेकको करना चाहिये। मृत्युको कोअी टाल नही सकता। अुसे टालनेके लिअे लाखो रुपये खर्च किअे जायें तो भी वह टल नही सकती। मानव-जीवनकी सार्थकता समयको व्यर्थ न गवानेमें है। विद्या, कला और सदाचारकी प्राप्तिके लिअे हमें समयका अुपयोग करना चाहिये।

मनुष्य-जीवन श्रेष्ठ जीवन है। कोअी भी दरिद्री या दु खी मनुष्य पशुका जीवन नही चाहता। मनुष्य और पशु दोनो खुराक प्राप्त करते हैं, लेकिन दोनोकी खुराक प्राप्त करनेकी पद्धतिया भिन्न होती हैं। मनुष्यको ज्ञानेन्द्रिया, कर्मेन्द्रिया, प्राण, मन, बुद्धि आदि सब मिले हुअे हैं। अुन सबका अुपयोग करके वह अपनी जरूरतें पूरी करता है। पशुको वैसा कुछ विचार नही करना होता। मनुष्यको अपने लायक शरीर भी स्वाभाविक रूपमे ही मिल गया है। अुसे बलशाली और नीरोग बनानेका प्रयत्न करना चाहिये। वैसे ही बुद्धिको भी प्रगल्भ, प्रखर और

तेजस्वी बनानेका प्रयत्न करना चाहिये। मन पवित्र, निर्मल और अनेक सद्‌गुणोसे युक्त होना चाहिये। शरीर, मन और बुद्धिका अिस तरह विकास करना चाहिये। पशुको मनुष्यकी तरह ये सब साधन नही मिले है। वह कुदरती ढगसे जीवन बिताता है। मनुष्यको मिले हुअे अिन साधनोका अुसे सदुपयोग करना चाहिये। जीवन-सिद्धि प्राप्त करनी हो तो अेक क्षण भी अुसे व्यर्थ नही गवाना चाहिये। समयका सदुपयोग करना हमारे हाथमे है। बाजारमे जाकर हम रुपये देकर कोअी चीज खरीदते है। अिस तरह वे रुपये हमने गवाये नही, बल्कि वस्तुके रूपमे वे हमारे पास ही आये है। समयकी भी यही बात है। समयका सदुपयोग करके हमने यदि शक्ति, सामर्थ्य और सद्‌गुणोकी प्राप्ति की तो हमारा वह समय व्यर्थ नही गया। लेकिन शक्ति, सामर्थ्य और सद्‌गुणोके रूपमे वह हमारे पास ही है। जिन्होने अिस प्रकार अपने समयका सदुपयोग किया है, अुन्हे अपने जीवनमे शाति, प्रसन्नता, धन्यता और कृतार्थताका अनुभव होता है। यही यथार्थ जीवन है। अैसा जीवन बितानेवालेको मृत्युका भय नही लगेगा। मृत्युके समय वह शात और स्थिर रह सकेगा। जिसने मानव-जीवनका महत्त्व समझकर सयमका पालन करके मानवता प्राप्त की है, वह कभी चिताग्रस्त या बेचैन नही रहता। मनुष्यको धन, विद्या, सत्ता, सामर्थ्य आदिका अनेक प्रकारका मद चढता है। लेकिन अुच्च तथा अुदात्त जीवनकी आकाक्षा रखनेवाला मनुष्य भिन्न प्रकारके आत्म-गौरवका अनुभव करता है। वह कठिन प्रसगोमे — मृत्युके समय भी — शात रह सकता है। अैसे प्रसगोमे अुसका तेज बढता है। यदि वह निर्बल बनता है तो अुसके आत्म-विश्वासमे कमी आती है। शूरका तेज रणमे जाग्रत होता है। पक्षीको आकाशका भय नही होता। सिहको जंगलका भय नही लगता। मछली पानीसे नही डरती। अुसी तरह सज्जनको सकटका भय नही होता। अुसमे वह शाति अनुभव करता है। मृत्युके समय भी शाति और प्रसन्नता कायम रह सके तभी जीवन सार्थक हुआ अैसा कह सकते है।

मानव-जीवनमे अैसी शाति प्राप्त करनेका समय चला गया, अैसा नही मानना चाहिये। जाग्रत रहकर बार बार अुसके लिअे प्रयत्न

करना चाहिये। यदि हमें सुख और शांति चाहिये तो हमे सयमी बनना चाहिये। सयम, विवेक और सावधानीके विना मनुष्य सच्चा मनुष्य नही बन सकता। यदि हम अपनी अिन्द्रियोको काबूमें न रख सकें, तो अुन्हे अपनी कैसे कह सकते है? घोडे पर बैठकर लगाम अपने हाथमे न रखे तो हमारी क्या स्थिति होगी? मोटरमें बैठें और अुसका ब्रेक काम न करता हो तो क्या होगा? अिन्द्रिया हमारे वशमें हो तभी हम सुखी हो सकते है।-भोगसे हम सुखी बन सकते है यह मान्यता और अिच्छा गलत है और अुसका त्याग करना चाहिये। त्यागसे ही, अिंद्रियोको काबूमें रख कर ही, हम सुखी बन सकते है, यह ध्येय हमें स्वीकार करना चाहिये। ससारी और व्यवहारी त्याग और सयमसे ही सुखी बन सकते है। मानवता सिद्ध करनी हो, चित्तकी शुद्धि करनी हो, सद्‌गुणोकी वृद्धि करनी हो, तो हमें सयमी और विवेकशील होना चाहिये।

सयमी बननेके लिअे प्रयत्न करना पडता है। गायक, चित्रकार या विद्वान बनना हो तो वैसा प्रयत्न करना आवश्यक है। हर तरहकी विद्या, कला, ज्ञानकी प्राप्तिके लिअे दृढ सकल्प और सतत प्रयत्न जरूरी है। विद्या, कला आदिकी प्राप्ति कोअी मनुष्य कर सकता है और कोअी नही कर पाता, अिसका कारण सकल्प तथा प्रयत्नोका अभाव है। सकल्प-शक्तिको हम जहा लगावेगे वही वह काम करेगी।

मानवताका गौरव समझकर हमें मानवता बढे अैसा आचरण करना चाहिये। अुसके विरुद्ध आचरण करनेमे हमें लज्जाका अनुभव होना चाहिये। मन और अिन्द्रियो पर जिसका काबू है, वही सुखी और वही स्वतत्र है। अुस पर कोअी भी हुकूमत नही चला सकता। पवित्र हृदय श्रेष्ठ सपत्ति है। गौरव किस बातमे मानें, अिसकी ठीक समझ न होनेके कारण कुछ धन या जमीन-जायदाद बढने पर मनुष्य अुसका अभिमान करता है। सोनेकी फ्रेमका चश्मा पहनकर कुछ लोग अुसका अभिमान करते है, अुसमे प्रतिष्ठा मानते है, परन्तु यह भूल जाते है कि अुनकी आखें कमजोर हो गअी है। अुसका अुन्हे विषाद नही होता। प्रतिष्ठाके गलत खयालके कारण अैसा होता है। बत्तीका अुपयोग अधेरा दूर करनेके लिअे है, लेकिन विवाहमें बहुतसी बत्तिया जलाकर सजावट की

जाती है। लोग अुसकी प्रशसा करते है। लेकिन यह क्या वत्तियोका सदुपयोग है? भूखेको लड्डू खिलानेसे अुसकी भूख दूर होती है। पर अुनके अेवजमे लड्डूके हार बनाकर गलेमे पहने जाय, तो भूख नही मिटेगी और लोग पागल कहेगे। वैसी ही बात बत्तियोके वन्दनवारकी है। यह पैसेका व्यर्थ खर्च है। अैसा करनेका हमे क्या अधिकार है? अिसी तरह हमारी शक्तियोका भी व्यर्थ व्यय नही होना चाहिये। प्रत्येक व्यक्ति अपनी शक्तिका अुपयोग यदि जीवन और व्यवहारको शुद्ध बनानेमें करे, तो ससारमे दु ख ही नही रहेगा। जो सबको आत्मवत् समझता है, वही अपनी शक्तियोका सदुपयोग कर सकता है। अिसीमे मानवता है। सद्गुणोको अपनानेमे ही जीवनकी सार्थकता है।

(अेक प्रवचनसे)

३

जीवन और धर्म

जब समाजके विचारकोको महसूस होता है कि सामान्य जीवन जिस तरह चलना चाहिये वैसा नही चल रहा है, तब समाजको जाग्रत करके अुसमे अुचित परिवर्तन करना अुन्हे अत्यत आवश्यक मालूम होता है। अैसे विचारशील नेता विचारो और आचारोमे परिवर्तन करते है और समाजको आघात पहुंचाकर तथा स्वय दु.ख सहन करके भी सुधारका मार्ग खोजनेका प्रयत्न करते है। सारे समाजोका अितिहास जाचने पर यही बात दिखाअी देगी। जब मानव-जीवन कुठित होता है, तब अुसमे से मार्ग निकालनेके लिअे विचारक लोग समाजका नेतृत्व अपने हाथमे लेते है।

हरअेक जमानेमे मानव-समाजकी प्रगतिको कुठित करनेवाले कारणोमे कभी धार्मिक रूढ मान्यताअे होती है, कभी सामाजिक रूढिया होती है, तो कभी आर्थिक या राजनीतिक बधन होते है। ये सब कारण जब मानव-जातिकी प्रगति रोकने लगते है, तब नये आचारो और विचारोको

जाग्रत करके अुनका प्रचार करना जरूरी हो जाता है। भूतकालकी ओर दृष्टि डालने पर दिखाओी देगा कि पार्श्वनाथ, बुद्ध, महावीर, शकराचार्य आदिने अैसे ही क्रांतिकारी सामाजिक और धार्मिक कार्य किये है। जब जब भेदभाव बढे, अनेक प्रकारके कर्मकाडोकी वृद्धि हुओी, लोग रूढ आचारोके बोझसे दबने लगे, क्रियाका जीवनके साथ सबध टूटा, तब भगवान विचारकाने सोचा कि अिन बातोका जीवनके साथ क्या सबध है? अुन्होने अिन सब बधनोको तोडकर नये विचारो और आचारोकी स्थापना की तथा नये धर्मकी प्रतिष्ठा की। भगवान बुद्धने भेडके बच्चेको बचाकर बलिदानका नया अर्थ प्रत्यक्ष बताया और जीवनको धर्मके साथ जोड दिया।

पुरानी दीवारे तोडकर नये विचारो और आचारोकी स्थापना करते समय अुन्हे कोओी न कोओी नया नाम देना पडता है। ये नये आचार-विचार जीवनके साथ जुडे रहनेसे धर्म बन जाते है। परन्तु अुसमें से आगे चलकर नया पथ खडा हो जाता है। रूढ हो जाने पर वह सप्रदाय बन जाता है। अिस जमानेमें प्रार्थना-समाज और ब्रह्म-समाज कोओी पथ नही है किन्तु विचारधारायें है। शुरू शुरूमें प्रार्थना-समाजको कुछ लोग नास्तिकोका सघ मानते थे। अुसका कारण यह था कि प्रार्थना-समाजकी अेकेश्वरी निष्ठा, स्त्री-पुरुषका अभेद, स्त्री-शिक्षा, अस्पृश्यता-निवारण, विधवा-विवाह आदि सामाजिक सुधारके विचार लोगोको असह्य मालूम होते थे। लोगोकी नास्तिकताकी व्याख्या सकुचित होती है। स्वय जिसे मानते है अुसे न माननेवालोको लोग नास्तिक कहते है। लोग अपनी मान्यतामें जो सत्य है अुसके आचरणका आग्रह नही रखते, अुसमें सत्य क्या है यह खोजनेका वे प्रयत्न नही करते, अपने चालू जीवनका प्रवाह बदलना अुन्हे अच्छा नही लगता और वे अपनी मान्यताका आग्रह रखते है। जीवनके चालू प्रवाहको बदलकर जीवनका सही रास्ता बतानेवालोको लोग जल्दी समझ नही पाते और अुन्हे हर तरहसे सताते है। वर्तमान समयमे हमारे देशमें राजा राममोहनराय, दयानन्द सरस्वती, रानडे, आगरकर, भाडारकर आदिको अपने नये विचारोके कारण काफी कष्ट सहना पडा। विचारके अनुसार आचार करनेके लिअे शक्तिकी

जरूरत होती है। वह सुधारकोमे तो होती है, परन्तु आम जनतामे सामान्यत नही पाओी जाती। अिसलिअे सुधारको और जनतामे अन्तर पड जाता है। वह अन्तर दूर करनेके लिअे सुधारक कष्ट सहन करते है और भावी पीढीका मार्ग सरल बनाते है। प्रार्थना-समाज, ब्रह्म-समाज आदिका आज खास महत्त्व नही दिखाओी देता; क्योकि जिन सुधारोको वे जनतामे लाना चाहते थे, वे आज सामान्य जनतामे प्रचलित हो गये है।

अिस प्रकार धर्म, पथ या समाज अेकके बाद अेक आते है, अेक-दूसरेमे समा जाते है और बादमे नये विचारोकी परपरा खडी होती है और चलती है। सनातन हिन्दू धर्मसे अनेक पथ निकले, अुनके साथ बौद्ध, जैन आदि क्रातिकारी विचारक आये और बादमे अुनके विचार रूढ हो गये। अिस तरह नये धर्म-विचारकी परपरा चलती रही। अिस जमानेमे अुस परपरामे गाधीजी आये और अुन्होने समाजमे नया बल पैदा किया।

अिस प्रकार आचार-विचारमे सभी जगह जड़ता आनेकी सभावना रहती है। अिसलिअे मनुष्यको अपने आचार-विचारकी ओर दृष्टि रखकर और पुरुषार्थी बनकर सतत जाग्रत रहना चाहिये। कोओी भी आचार या विचार मानव-जातिकी प्रगति करनेवाला है या नही, अुसमे न्यायवृत्ति पैदा करनेवाला है या नही, अुसकी शक्ति बढानेवाला है या नही, अिसका विचार करना चाहिये। सिद्धान्त बदलते नही, लेकिन समयानुसार विकसित होते रहते है, अिसलिअे आचार सतत शुद्ध बनता रहे, अिसका ध्यान रखना चाहिये।

सतत विद्याका अभ्यास तथा सशोधन करनेवाले और वैसा आचार करनेवाले ब्राह्मण कहलाते थे। लेकिन बादमे जड़ता आओी और ब्राह्मणोने अपने अिस कर्तव्यको भुला दिया। वे सिर्फ दान लेनेवाले बन गये, जिससे ब्राह्मणोका ब्राह्मणत्व चला गया। सच्चा दान तो वही है जो गीताके कथनानुसार देश, काल और पात्रको देखकर दिया जाय। सच्चे दानमे लेनेवाले और देनेवाले दोनोका कल्याण होता है। दान लेनेवालेमे यदि पुरुषार्थ जागे तो ही वह सच्चा दान है। अगर औषध जीवनभर लेनी पडे तो वह औषध नही कही जा सकती, वैसे ही जिस दानसे हमेशाकी जरूरत दूर न हो वह दान नही है। निर्बलको मदद करनेका अर्थ

यही है कि हमेशाके लिअे वह सबल वन जाय। सच्चा दान वही है, जो दूसरी बार दानके लिअे अवकाश ही न रहने दे।

जीवन धर्मसे अलग नही हो सकता। धर्म यानी नियमन। अुसका आचार जीवनको समृद्ध, पुरुषार्थी, शुद्ध और प्रगतिशील बनाता है, अुससे जीवनमें व्यापकता आती है। जो मनुष्यको सकुचित, स्वार्थी और क्रूर बनाता है वह धर्म नही है। जिस नियमके बिना मानव-जीवन चल न सके, अुसके अनुसार आचार ही धर्म है। मानव-जीवनमे धर्म ही मुख्य वस्तु है। मनुष्यमें बुद्धि है अिसलिअे वह बडा नही है, लेकिन अुसने धर्म और सस्कृति निर्माण की अिसीलिअे वह बडा है। यही अुसकी विशाल विरासत है। अिसके द्वारा मानव-जीवन और समाज-जीवन सहकार, मित्रता, सहानुभूति आदि सद्गुणोंसे युक्त बनना चाहिये। व्यक्ति और समाजका जीवन मानवतापूर्ण बनना चाहिये। अेक समय था जब मनुष्यको मनुष्य खाता था, लेकिन आज वह सुसस्कृत बन गया है। अब अुसका आदर्श 'आत्मवत् सर्वभूतेपु' बननेका है। अिसके लिअे समभावकी आवश्यकता है। सद्गुण समभाव पैदा करते है। समभाव यानी सह-सवेदना। यही मानवताका आदर्श है। धर्मको माननेवाले अिस कसौटी पर खरे अुतरते है या नही, अिसका हमें विचार करना चाहिये। जहा समभाव है वहा प्रगति है। वही स्वाभाविक रूपमें स्वार्थत्याग होता है। तभी समाज प्रगति करता रहता है। सतोकी सच्ची पूजी समभाव है। माताकी पूजी भी समभाव ही है। अिसलिअे सन्तोको माताकी तरह माना गया है। अपने आपका ममत्व कम करके दूसरोसे प्रेम करनेवाला सत कहलाता है। अैसे माताके समान सतका अुदाहरण हमने कुछ ही समय पूर्व देखा और अुसका अनुभव किया। गाधीजी कोचरब आश्रममें रहने आये तब प्रेमकी बाते करते थे। अुस समय वे बाते लोगोको निरर्थक और पागलके प्रलाप जैसी लगती थी। लेकिन अुन्होने प्रेम, सत्य तथा अहिंसाकी बातें और आचरण चालू रखा। निष्क्रिय बनी हुअी अहिंसामें प्राण भर कर अुन्होने अुसे प्रचड शक्तिशाली बनाया। अहिंसाकी विराट शक्तिका अनुभव कराया। अुन्होने अिस प्रकार सदाचारकी फिरसे स्थापना करके बता दिया कि जीवन

और धर्म अेक-दूसरेसे भिन्न नही है। गाधीजीने जो रास्ता वताया है अुस पर हमे हिम्मतके साथ चलना चाहिये। आज भी वहुतसे धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक वधन है। अुन्हे तोडना चाहिये। अिसके लिअे व्यक्तिको अपने सुधारका विचारपूर्वक प्रयत्न करना चाहिये। सामान्य व्यक्ति अकेले यह प्रयत्न नही कर सकते, अिसलिअे समझदार और विचारशील व्यक्तियोको सगठित होकर अिसके लिअे अनुकूल वातावरण निर्माण करना चाहिये।

आजके जमानेमे कानून, पुलिस, कचहरिया, अस्पताल आदिकी वृद्धि हमे भूपणरूप लगती है। परन्तु विचार करने पर मालूम होगा कि वे दूपणरूप लगने चाहिये। लोग जीवनके नियमोका भग करते है अिसलिअे कानून वनाने पड़ते है; और जितने अधिक कानून वनते है, अुतना ही अधिक अुनका भग होता है। हम नियमसे नही चलते, अिसलिअे पुलिस और कचहरियोकी व्यवस्था की जाती है। यह हमारे लिअे शोभाकी वात नही है। पर अिससे समाजकी स्थितिका पता चलता है कि समाज कैसा है। कअी वार तो कानूनके कारण सचाअीसे चलनेवालोको कष्ट भुगतना पड़ता है। झूठ वोलनेवाले या गुनाह करनेवाले कौशलसे वच जाते है। यह धर्म नही है। जहां धर्म होगा वहा न्याय होगा, सचाअी होगी, मैत्री, प्रेम और आदर होगा। जहा सचाअी और प्रेम होता है, वहा कानूनके वाहरी वधनोकी जरूरत नही होती।

संसारके हरअेक महापुरुषने समाजको व्यापकताकी ओर ले जानेका प्रयत्न किया है। व्यापकतासे मानव-जीवन श्रेष्ठ बनता है। व्यापकता यानी सवके प्रति समभाव और सबके कल्याणके लिअे कष्ट सहन करना। अिसीका नाम समर्पण है। हरअेक महापुरुषने अिस पर जोर दिया है। अिसलिअे वे कहते आये है कि हम सव अेक ही परमात्माकी सतान है, सवमे अेक ही आत्मतत्त्व व्याप्त है, अिसलिअे हम सव अेक है। हमारे पास जो कुछ है वह सवका है। अैसे व्यापक भावसे जो विचार और आचार किया जाय वह धर्म है। अैसा धर्म ही समभाव है। अिस समभावके आधार पर राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था तथा नव समाजकी रचना करनी चाहिये। यह विचार हजारो वर्षोसे चलता

आया है। महापुरुष यही अुपदेश करते आये है। अुनके अुपदेशोका मुख्य आशय यही है। मानव-समाजको अब अुसका आग्रहपूर्वक अमल करनेमे पुरुषार्थके साथ जुट जाना चाहिये।*

४

जीवन और जीवन-शुद्धि

मानव-जीवनकी विशेषता

जीवन परमात्माकी अमूल्य देन है। सभी प्राणियोकी तरह मनुष्यको भी जीवन मिला है। लेकिन दूसरे प्राणियोके तथा मनुष्यके जीवनमें बहुत अन्तर है। दूसरे प्राणियोका जीवन प्राकृतिक धर्मोसे जितना बधा हुआ है अुतना मानवका जीवन नही बधा हुआ है। दूसरे प्राणियोकी शक्ति और बुद्धि मर्यादित है। मानवकी शक्ति और बुद्धि आज कल्पनातीत बढ गआी है। मनुष्य अपनी शक्ति और बुद्धिका जितना विकास कर सकता है अुतना दूसरे किसी प्राणीको करते नही आता। और विकसित शक्ति और बुद्धिका जैसा सदुपयोग मनुष्य कर सकता है वैसा दूसरा कोअी प्राणी नही कर सकता। किसी प्राणीकी शक्ति अथवा नैसर्गिक बुद्धि मनुष्यसे अधिक हो, तो भी अुसका अुपयोग सबके कल्याणमे करनेका भाव अुसमे नही होता। वह मनुष्यमें ही दिखाअी देता है। प्रत्येक जीव सदा अपने देह-रक्षणके प्रयत्नमें लगा रहता है। लेकिन मनुष्य अपने रक्षणके साथ-साथ दूसरोके सुख-दुःख तथा रक्षणका भी विचार करता है। यही अुसकी विशेषता है और यही मनुष्यत्वका मुख्य लक्षण है। मनुष्य और दूसरे जीवोके बीच यही बडा अन्तर है। अिस अन्तरको ध्यानमें रख कर हमें अपने जीवनको सही दिशामे मोडना चाहिये और अपने जीवनको वैसा बनानेका प्रयत्न करना चाहिये।

---

* अहमदाबादमें प्रार्थना-समाजके वार्षिक अुत्सवके समय दिये गये प्रवचनसे।

जीवन-सबंधी हमारी कल्पनाये जैसी होगी, अुसी तरह जीवन बितानेका हमारा प्रयत्न रहेगा। अुन कल्पनाओके अनुसार ही हम जीवनको महत्त्व देगे और अुसी अनुपातमे हमें सिद्धि भी मिलेगी। जीवन-सबधी अुच्च आकाक्षाअे न रखकर अुस ओरसे हम अुदासीन रहे, तो हमारा जीवन केवल दैनिक जरूरते पूरी करने और अुससे कुछ सुख प्राप्त करनेमे चाहे जब समाप्त हो जावेगा।

जीवनकी नश्वरता

'ससार म्हणजे सवेचि स्वार। नाही मरणासी अुधार।।
मापी लागले शरीर। घडीने घडी।। १ ।।'

दासबोध, ३–९–१

ससार किसी सवारकी तरह अपनी गतिसे दौडता चला जा रहा है। अिसमे मरण सदा तैयार रहता है। प्रत्येक क्षण आयुका नाप होता रहता है। वह कब पूरी हो जायगी अिसका पता नही। अर्थात् मरण कब आवेगा, यह निश्चित नही है।

'घडीघडी पलपल आयुष्य जाते तेल-मीठ-सर्पणात।
हे मुख किति पाहसिल दर्पणात?।।'

तेल, नोन, लकडीकी चिन्तामें घडी-घड़ी, पल-पल आयु बीत रही है। अिस बातको ध्यानमे न रखकर बार बार दर्पणमे तू कितनी बार यह मुख देखता रहेगा?

अैसे सद्वाक्योसे जीवनकी नश्वरताके विषयमे संत हमेशा हमे सावधान करते आये है।

'वर्तमान जीवन ही हमारे वशमे है। भविष्यमे कितना शेष है, यह निश्चित नही कहा जा सकता। अिसलिअे वर्तमान जीवनका सदुपयोग करना ही हमारे हाथमे है। जीवनके प्रवाहको रोका नही जा सकता। अुसके अेक क्षणका सग्रह भी हम नही कर सकते। विश्वके छोटे-बडे सभी पदार्थ गतिके चक्र या प्रवाहमे पडे हुअे है। जिस पृथ्वीके आधार पर हमारे व्यवहार चलते है, जिसके आधार पर हमारा

मानव-बुद्धिका प्रभाव

अस्तित्व है, वह पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, ग्रहमाला, यह सारा विश्व, सभी चक्रकी तरह सदैव भ्रमण कर रहे हैं। अिसी तरह हम भी भ्रमण कर रहे हैं। हमारे लिअे कही रुकनेके लिअे समय या स्थान नही है। यह सच होने पर भी परमात्माने हम मनुष्योंको बुद्धिरूपी महान शक्ति दी है। अपनी प्रिय वस्तुको किसी भी रूपमें यथासभव अधिक समय तक टिकाये रखे और अुसका सुख अधिकसे अधिक समय तक भोगे, अैसी मनुष्यमात्रकी अिच्छा होती है। अुस अिच्छाको सफल बनानेका प्रयत्न बुद्धिमान लोगोने किया है और अुसमे अुन्हे कुछ हद तक सफलता भी मिली है। अिन्ही प्रयत्नोंसे चित्रकला और शिल्पकलाकी अुत्पत्ति हुअी है और अुसके द्वारा भूतकालके मनुष्यो तथा प्राणियोंके स्वरूप हमें देखनेको मिलते हैं। आज-कल तो मृत व्यक्तियोंके शब्द, सगीत, हावभाव, क्रिया, बातचीत आदि का ठीक वैसा ही अनुभव हो सकता है जैसा अुनके जीवन-कालमें होता था। अिस प्रकार हम भूतकालकी घटनायें प्रत्यक्षकी तरह देख सकते है। भृतकालका महानसे महान पुरुष भी हमे देख नही सकता, किंतु आज सामान्य व्यक्ति भी अुसका जीवन-चरित्र देख सकता है। मनुष्य अल्पजीवी हो तो भी अुसके रूपका, अुसकी क्रियाओका अेव अुसके शब्दोका लाभ मानव-जाति प्रत्यक्षकी तरह हजारो वर्षो तक ले सकती है, अैसी बौद्धिक शक्ति मनुष्यने आज प्राप्त की है। आज जिस कला और विज्ञानकी अुन्नति हुअी है, अुसकी शोध यदि प्राचीन कालमे हो जाती, तो बुद्ध, महावीर, शकराचार्य, ज्ञानेश्वर, तुलसीदास, तुकाराम, कबीर, रामदास आदिके दर्शनका आनन्द और अुनके अुपदेशका लाभ आज भी हम अुठा सकते थे।

जीवनमें शुद्धिका महत्त्व

अिस विषयमें अितने विस्तारसे लिखनेका हेतु यह बताना है कि चाहे तो बीतनेवाले वर्तमान कालमे से भी हम कुछ बचाकर दीर्घ समय तक अुसे टिकाये रख सकते हैं। अिस बातकी ओर हमारा ध्यान जाना चाहिये और अुससे अुपदेश ग्रहण करके अपने वर्तमान जीवनमें ही हमें कुछ अैसा प्राप्त करते रहना चाहिये जो अिसी जीवनमें हमारे लिअे अुपयोगी सिद्ध होता रहे। भूतकालकी घटनाओको यदि मनुष्य अपने बुद्धिबलसे

प्रत्यक्षमे अुतारकर अुनसे आनन्द और ज्ञान प्राप्त कर सकता है, तो अपने जीवनके वर्तमान कालसे भावी जीवनमे अुपयोगी हो सके अैसा कुछ क्या वह प्राप्त नही कर सकता? यदि वह अैसी वात साध सका तो 'ससार म्हणजे सवेचि स्वार' अिसके अनुसार जीवन बीतने पर भी अुसमे से अधिक शाश्वत या अुपयोगी अुसने जो प्राप्त किया होगा वह अुसके पास रहेगा। जैसे पैसा खर्च करके मनुष्य कोअी वस्तु खरीदता है तो पैसे व्यर्थ गये अैसा अुसे प्रतीत नही होता, बल्कि सपत्ति अधिक अुपयोगी रूपमे मेरे पास सुरक्षित है अैसा ही वह समझता है। हमारे अुपयोगमे आनेवाली वस्तु नश्वर हो या अल्पकाल तक टिकनेवाली हो, तो भी मानव-बुद्धि अुसे अधिक टिकानेकी कोशिशमे लगी रहती है। हमारा जीवन-काल नदीके प्रवाहकी तरह तेजीसे वह रहा हो तो भी अुसी कालमे हम सदा अुपयोगी सिद्ध होनेवाली अधिक महत्त्वपूर्ण और शाश्वत वस्तुअे प्राप्त करे, तो अुनकी प्राप्तिमे बीता हुआ जीवन अुन वस्तुओके रूपमे अधिक मूल्यवान बनकर हमे मिला अैसा ही लगेगा। वर्तमान जीवनमे ही हम ज्ञान, चारित्र्य, सद्गुण, कला और चित्तकी पवित्रता रूपी महान वस्तुअे प्राप्त कर सके, तो हमारा जीवन अनेक सिद्धियोसे युक्त बनकर पहलेसे अधिक समृद्ध बना है अैसा हमे अनुभव होगा। अज्ञान, कृपणता, भ्रष्टता, विकारवशता आदि दोषोसे युक्त दीर्घायुकी अपेक्षा क्या वह अल्पायुवाला जीवन हमे कृतार्थ नही करेगा, जिसमे अज्ञान न हो, विकारकी गध न हो, कृपणता या स्वार्थका नाम न हो और अधर्मका लेश भी न हो? मनुष्यको अपना सर्वस्व लगाकर और अनेक कष्ट सहन करके भी अैसा ही जीवन प्राप्त करना चाहिये। मानव-जीवन अिसीलिअे है, और जीवनकी सिद्धि अिस प्रकारकी शुद्धिकी प्राप्तिमे ही निहित है।

भागे जा रहे जीवनको हम रोक नही सकते। बीते क्षणको हम वापस नही ला सकते। सूर्य-चन्द्रकी गतिको या पृथ्वीके सतत भ्रमणको यदि हम रोक सकते हो तो ही हम अपना बीता हुआ जीवन शायद वापस ला सकते है। बीता हुआ यौवन फिरसे प्राप्त करनेका प्रयत्न करनेवाले 'ययाति' या योगाभ्याससे आयु बढानेका प्रयत्न करनेवाले 'चागदेव'

जैसे व्यक्ति आज भी कही-कही मिलेगे। मृत्युको टालने, अुमे लम्बाने या तारुण्यको सदा बनाये रखनेका प्रयत्न करनेवाले लोग हर समय रहेगे ही। लेकिन अिस मार्गसे किसी भी व्यक्तिको जीवनकी सार्थकता अुपलब्ध नही हो सकी, अैसा आज तकके प्रयत्नोंके अितिहाससे सिद्ध हो चुका है। जीवनका प्रवाह अधिक समय तक चलता रहे और हम केवल दीर्घायु हो, अिसमें जीवनकी सार्थकता नही है। जीवनकी शुद्धि और सद्गुणोकी वृद्धिमे ही जीवनकी सार्थकता है। दीर्घायु अथवा धन-सपन्नताकी अपेक्षा चारित्र्य, शील, ज्ञान, अनुभव, सुसस्कार, सद्गुण, पवित्रता आदिके अैश्वर्य या वैभवमे समृद्ध बने हुअे जीवनका मूल्य तथा महत्त्व मानवताकी दृष्टिसे कअी गुना अधिक है। अिस प्रकारका जीवन अल्पकालमे ही सिद्ध करनेके कुछ अुदाहरण ससारके अितिहासमें मिलते हैं। अिसे मानव-जातिका सौभाग्य ही मानना चाहिये। आद्य शकराचार्यने अैसी ही जीवन-सिद्धि बत्तीस वर्षकी आयुमें प्राप्त करके अपनी जीवन-यात्रा पूरी की। अीसाका जीवन केवल तैतीस सालमें समाप्त हुआ। ज्ञानेश्वर, निवृत्तिनाथ, सोपानदेव और मुक्ताबाअीने बीस-बाअीस वर्षके आसपास अपनी-अपनी जीवन-ज्योति परम ज्योतिमें मिला दी। अितिहासमे अुपलब्ध अिन अुदाहरणोके अतिरिक्त कअी अप्रसिद्ध विभूतिया भी अिस प्रयत्नमे अल्पायुमें ही सफल हुअी होंगी, अैसा मानना अुचित होगा। जीवनकी शुद्धिमें ही जीवनकी सार्थकता है और अुसे प्राप्त करनेके लिअे ही मानव-जीवन है।

सुखकी भ्रात कल्पना

पशु-पक्षियो और दूसरे प्राणियोके जीवनमें तथा मानव-जीवनमे यही बडा अन्तर है। योग्य खानपान, अुचित परिश्रम, विश्राम, चितारहित जीवन-व्यवहार, समयानुसार औषधोपचार आदि अनुकूल साधनो और सुविधाओंके कारण मनुष्यकी आयु बढ सकती है। लेकिन केवल आयु बढने या दीर्घजीवी होनेमें जीवनकी सार्थकता नही है। मनुष्यकी श्रेष्ठता दीर्घ आयुष्यमे नही, किन्तु अुसके द्वारा प्राप्त की हुअी मानवतामे है। मानवता जीवनकी शुद्धि पर अवलबित है। शुद्ध जीवन खुदको आनद और प्रसन्नता देनेवाला और दूसरोकी अुन्नति करनेवाला और अुन्हे अुन्नतिकी प्रेरणा देनेवाला बन सकता है। आज मानव-जाति भयभीत और दुःखी दिखाअी देती है।

सर्वत्र शंका और अविश्वास दिखाओी पडता है, जिससे किसी भी स्थान पर किसी भी व्यक्तिको अपनी वर्तमान·स्थितिके सबधमे निश्चितता अनुभव नही होती। क्योकि हम सब जीवन-शुद्धिकी अपेक्षा दूसरी बातोको ही अधिक मूल्यवान समझकर अुनके पीछे लगे रहते है। चाहे जिस बातको हम भव्य या सुख-सर्वस्व मान लेते है। हमे अुसमे कुछ अैसा आकर्षण लगता है कि हम अपनी सारी शक्ति और बुद्धि लगाकर अुसके पीछे पड़े रहते है। जिसके पीछे हम पड़े है, वह सत्य है या भ्रांति, वह सचमुच सुख है या केवल आकर्पण, अुसमे कर्तव्य-निष्ठा है या मोह — यह जाचनेकी वात भी हमे नही सूझती। हमारी परंपराको देखनेसे यही मालूम देता है कि अिस मार्ग पर आगे बढ़े हुअे, धन, वैभव, सत्ता, अैश्वर्य प्राप्त किये हुअे और विद्या, कला या अिसी तरहका वैशिष्टच प्राप्त किये हुअे लोग जीवन-शुद्धिकी दृष्टिसे हम कहा है और हमारी सही स्थिति क्या है, यह संसारको स्पष्ट रूपसे नही बताते। अिसलिअे किसीका धन, किसीका वाहरी ठाटवाट, किसीका आडंबर, किसीकी वाक्पटुता और चातुर्य, किसीका सौंदर्य, किसीका वल, सत्ता या सामर्थ्य, किसीका कठ-माधुर्य, तो किसीकी चित्र-कुशलता या अैसी ही कोअी आकर्षक विशेषता देखकर हम मोहवश अुसे ही जीवनकी सार्थकता समझने लगते है। असख्य लोग, जिन्हे अिनमे से कोअी विशिष्टता प्राप्त नही हुअी है, अिसी भ्रातिमे जीवन विताते है। अिनमे से चाहे जिस बातको हम जीवन-सार्थकताका साधन मानते है और अिनमे से किसी भी प्रकारकी विशेषता प्राप्त न करते हुअे अपना जीवन पूरा करते है। अिसके सिवा, अपनी गलत मान्यताके कारण जीवनका सही रास्ता भूलकर गलत प्रवाहमे पडे हुओको अुनका वाहरी आडवर देखकर हम जो मान और आदर देते है, जो श्रेष्ठता प्रदान करते है, अुससे अुनमे सही मार्गका भान होनेके लिअे आवश्यक जागृति कभी नही आती। अनेक प्रकारकी दुर्वलताके कारण तथा अपनी प्रतिष्ठा संभालनेके मोहमे वे गलत मार्गसे ही आगे बढ़ते रहते है। वे दरअसल सुखी है और अुनका जीवन सफल हुआ है, अिसी भ्रममे हम भी रहते है। अिस प्रकार हम सभी भूल-भुलैयाके चक्करमे पड़कर जीवन काटते है।

आदर्शका चुनाव

ससारके अधिकाश लोग अपना और अपने कुटुवका जैसे-तैसे अिज्जतके साथ भरण-पोपण करनेमे लगे हुअे है। फिर भी हरअेकके मनमें जीवन-सवधी किसी न किसी अुच्चताकी कल्पना ही नही परन्तु कुछ अस्पष्ट आकाक्षा भी होती है। वह आकाक्षा पूर्ण न होनेसे प्रत्येक व्यक्तिको असतोप रहता है। जिन वस्तुओके अभावमे हमे सदा कठिनाअी भोगनी पडती है, दु ख और कष्टमें दिन विताने पडते है, अुन वस्तुओका जिन लोगोके पास अभाव नही किन्तु विपुलता होती है, अुन्हे हम विशिष्टता-प्राप्त मानते है और वह विशेषता प्राप्त होने पर हमारे सभी दु ख दूर होगे, हमारी आकाक्षाकी पूर्ति होगी और हमें सुख मिलेगा, अैसा हर व्यक्ति मानता है। लेकिन यह परीक्षा या निर्णय अधिकाशमे गलत सावित होता है। किसी भी विशेपताकी प्राप्ति होने पर अुसके अभावके कारण जो दु ख सहन करने पडते है वे जरूर दूर होते है। लेकिन वाकीके दूसरे दु खोको और अुस विशेपताके कारण ही निर्माण होने-वाले अनिष्टोको रोकनेकी शक्ति अुस विशेपतामें है या नही, अिसका विचार किसीके भी मनमे अधिकतर नही आता। वचपनमे रेलमें वैठनेवाले वच्चोमे से कअियोके मनमें होता है कि वडे होने पर हम गार्ड वनें तो अच्छा। रेलगाडी पर गार्डकी सत्ता, अुसकी पोशाक, अुसके सीटी वजाने और झडी दिखानेका ठाठ और सवके अन्तमें चलती हुअी गाडीमें वैठना आदि वाते किसी भी वच्चेको आकर्पक लगती ही है। वैसे ही शिक्षक वननेकी, और वह भी मारनेकी आदतवाला शिक्षक वननेकी, अभिलाषा किस विद्यार्थीके मनमें पैदा नही होती? (कमसे कम मेरी विद्यार्थी-अवस्थामे तो विद्यार्थियोकी अैसी ही मनोदशा दिखाअी पडती थी।) जादू तथा ताशके खेल और शरीर-सामर्थ्यके प्रयोग देखने पर आकर्पक लगते है और हर युवकके मनमें वह कला सिद्ध करनेकी अिच्छा होती है। अिस प्रकार वढती हुअी आयुके अनुसार जिस समय हमे जो भी कुछ भव्य और आकर्पक लगता है, अुसकी प्राप्तिकी महत्त्वाकाक्षा हम जीवनमे धारण करते रहते है। अिनमे से हमारी पसद की हुअी आकाक्षाअे व्यापक ज्ञान और अनुभवके कारण जैसे अभी तक गलत ठहरती गअी है वैसे

ही आज भी हम सुख-सम्बन्धी जो कल्पनायें धारण करके जीवन चलाते है, वे भी क्या आगे चल कर हमारे बढ़े हुअे ज्ञान और अनुभवके आधार पर गलत नही सिद्ध हो सकती? अिसलिअे जीवनके सम्बन्धमे गहराअीसे विचार करके जीवनका आदर्श निश्चित करना चाहिये।

भिन्न-भिन्न महान आकाक्षाअे धारण करके जिन्होने अुनमें सफलता प्राप्त की है अैसे व्यक्तियोके जीवनका हमे अध्ययन करना चाहिये। अुनमे से मानवोचित सुख, शाति, प्रसन्नता, धन्यता और सार्थकता किसे प्राप्त हुअी, किसका जीवन अपने सबधमे आनेवालोके लिअे सहायक, अुन्नतिप्रद और प्रेरणादायक बना, किसका जीवन मानव-जातिके लिअे बोधप्रद या अनुकरणीय बना आदि बातोका विचार करके हमे जीवन-सबधी आदर्श निश्चित करना चाहिये। केवल कुछ समयके लिअे आकर्षक या बाहरसे भव्य दिखाअी देनेवाले जीवनका परिणाम अुस व्यक्ति या दूसरोके लिअे कितना शातिदायी और धन्यता अनुभव करने जैसा सिद्ध हुआ, यह समझकर हमे अपने जीवनका आदर्श निश्चित करना चाहिये। गभीर विचार किये बिना केवल बाह्यत आकर्षक और लाभदायक दिखाअी देनेवाली बातोके पीछे पड़नेमे श्रेय नही है। परमात्मासे प्राप्त विवेक-बुद्धिको अधिक तीक्ष्ण और तेजस्वी बनाकर जीवनका आदर्श निश्चित करनेमे हमें अुसका अुपयोग करना चाहिये।

जीवनका सच्चा अुद्देश्य, सच्चा आदर्श जिन्होने समझा और पुरुषार्थ द्वारा सिद्ध किया है वे लोग धन्य है। प्राप्त मानव-जीवनको सार्थक न बनाकर जिन्होने क्षणिक सुखोके पीछे

जीवन-शुद्धिका प्रभाव

जीवनको खर्च किया, अुन्होंने व्यर्थ ही जन्म लिया और व्यर्थ ही अुसे खोया, अैसा समर्थ रामदास स्वामीने कहा है। जिन्होने जीवन-शुद्धि साधी है, अैसे महापुरुष ससारमे सर्वत्र और सदा वदनीय होते है। ससारमे अब तक अनेक सम्राट, अनेक चक्रवर्ती राजा और महान सत्ताधारी हो गये है। अुनके जमानेमे अुनके कानूनो, आज्ञाओं और शब्दोका अुल्लघन करनेकी शक्ति या हिम्मत किसीमे नही थी। पर आज अुनके शब्दो और कानूनोका क्या मूल्य है? लेकिन जिन्होने मनुष्यमात्रका कल्याण हो अैसे धर्मका

आचरण किया, समाजमें ज्ञान और धर्मका प्रचार किया और अुसके लिअे जिन्हें बहुत कुछ सहना पडा, फिर भी जो ससारके दु ख कम करनेका प्रयत्न करते रहे, वे निष्कांचन और मत्ताहीन थे, फिर भी अुनके शब्दोको लोग आज भी परम वद्य मानते हैं। सैकडो-हजारो वर्ष पहले अुन शब्दोका अुच्चारण हुआ था, लेकिन अुनका प्रभाव और अुनका आदर अब तक वैसा ही बना हुआ है। अपनी दुर्वलता या विकारवशताके कारण हम भले ही अुनके अुपदेशोंके अनुसार आचरण न कर पायें, फिर भी अुन अुपदेशों और शब्दोंके लिअे हममें आज भी श्रद्धा है। यह प्रभाव जीवन-शुद्धिका है। चित्तकी निर्मलता, कर्मोंकी परिशुद्धता, सद्‌गुणोंकी पूर्णता, नित्य जागरूकता, विवेककी सूक्ष्मता और प्रगल्भता आदिसे यही सिद्धि हमे भी प्राप्त करनी है। ससारके समस्त ज्ञान, विद्या, कला, भक्ति, योग आदि साधनों द्वारा यही भूमिका हमें सिद्ध करनी है। मनुष्य-जन्म पाकर हमे अिस स्थिति तक पहुचना है। हमारे जीवन और शुद्धिका यही सबध है और यही हमारे जीवनकी विशेषता है। यदि वह प्राप्त हो जाय तो मानव-जन्म पाकर दूसरा कुछ सिद्ध करना बाकी नही रह जाता।

जीवन-शुद्धिके प्रयत्नकी आवश्यकता

विचार करनेसे यह ध्यानमे आयेगा कि हर व्यक्तिके मनमे शुद्धिके विषयमें अुचित कल्पना रहती है, अितना ही नही, परतु वैसा बननेकी अिच्छा और स्वाभाविक रुचि भी होती है। अन्न, जल, वस्त्र, बरतन, घर और दूसरी अिस्तेमालकी चीजे स्वच्छ हो अैसा सभी चाहते है। हमारे साथ रहनेवाले व्यक्ति भी स्वच्छ रहे अैसा हम चाहते हैं। भले ही परिस्थिति, कुछ आलस्य, जडता आदि कारणोसे हम अनेक बातोमें अस्वच्छता चला लेते है, सहन कर लेते है, लेकिन हमारी स्वाभाविक रुचि तो स्वच्छताकी ओर ही होती है। अन्धेरेकी अपेक्षा प्रकाश, अज्ञानकी अपेक्षा ज्ञान, दुर्वलताकी जगह बल, दरिद्रताकी जगह समृद्धि जैसे हमे स्वभावत प्रिय है, वैसे ही स्वच्छता भी हमे प्रिय है। यह स्वाभाविक होने पर भी हम अपने मनकी पवित्रता साधनेमे, जीवन-शुद्धि प्राप्त करनेमे और सद्‌गुणसपन्न बननेमें अत्यत अुदासीन हैं, यह बडे आश्चर्य और दु खकी बात है। मानवोचित सुख तथा मानवता सिद्ध करनेकी

५

श्रेष्ठ जीवनकी शिक्षा

सभी प्राणियोंमें मनुष्य श्रेष्ठ है, अैसा मनुष्य गर्वपूर्वक मानता है। लेकिन क्या दरअसल वह श्रेष्ठ है? सूक्ष्म दृष्टिसे विचार करने पर मालूम होगा कि जहां कुछ बातोंमें वह श्रेष्ठ है, वहां कुछ बातोंमें वह श्रेष्ठ कहलाने योग्य नहीं है। मनुष्य जब विवेकसे संयमपूर्वक, न्यायनीतिकी बुद्धिसे बरतता है, धर्माचरण करता है, तब वह श्रेष्ठ कहलाने योग्य होता है। किंतु अपने आपको बुद्धिमान समझनेवाला मनुष्य जब अविवेकसे, स्वच्छंदतासे, केवल अपनी वृत्तियोंके अनुसार बरतकर अपने तथा दूसरोंके दुःखका कारण बनता है, तब वह श्रेष्ठ नही माना जा सकता। केवल स्वार्थके लिअे छल-कपट, दुष्टता, अन्याय और अत्याचार करनेवाला बुद्धिमान प्राणी मनुष्यके अतिरिक्त दूसरा कोअी दिखाअी नही देता तब वह सब प्राणियोमे श्रेष्ठ है, यह कहनेका अर्थ अुसके किये हुअे दोषोंमें वृद्धि करना ही होगा। मनुष्यके अतिरिक्त दूसरे प्राणी केवल कुदरती धर्मोंके अनुसार बरतते है। अुनकी अिच्छाअें, भावनाअे, वासनाअे तथा विकार सब मर्यादित होते है। कुदरतने अुन्हे जैसा निर्माण किया है और जो विकार तथा भावनाअे अुनमे रखी है अुन्हीके अनुसार वे बरतते है। अुनमें विकार हैं, लेकिन वे केवल प्रकृति-धर्मके अनुसार है। अुनमे संयम भी है, लेकिन वह प्रयत्नपूर्वक सिद्ध किया हुआ नही है। वह प्रकृति-धर्मके अनुसार

है। अिसलिअे अुन्हे विकारोके लिअे दोष तथा सयमके लिअे श्रेष्ठ पद नही दिया जा सकता। विकार और सयमके भले-बुरेपनका ज्ञान प्राप्त करके अुन्हे कम-अधिक करनेकी शक्ति और बुद्धि अुनमें नही होती। मनुष्यमें अिस प्रकारकी बुद्धि और शक्ति होने पर भी अुसका अुपयोग न करके विकारोके पीछे लगकर तथा सयम त्यागकर अुसने विकृति निर्माण की है और अुसे बढाया है। यह बात अुसकी श्रेष्ठताके लिअे शोभनीय नही है। अविवेक, असयम, विकृतिकी वृद्धि और सयमका अभाव मानव-जीवनमे पूर्ण रूपसे दिखाअी दे तो अुसे श्रेष्ठ कैसे कहा जाय? अेक बात नि शक रूपसे कही जा सकती है कि विवेक और सयमसे अपने विकारोको काबूमे लाकर, अिच्छाओ और वासनाओको रोककर, प्रकृति पर विजय प्राप्त करके सस्कृति निर्माण करनेवाली विभूतिया मानव-जातिमे पैदा हुअी है। अपना जीवन सदा दूसरोके लिअे खर्च करनेवाले, सद्धर्मानुसार आचरण करके शाति प्राप्त करनेवाले और जीवनको सार्थक बनानेवाले व्यक्ति मानव-कुलमें ही पैदा हुअे है। सत्यके लिअे प्राणोकी परवाह न करनेवाले, व्यक्तिगत सुख-दु खोका विचार न करके मानव-जातिके सुखके लिअे और दु खको मिटानेके लिअे अपना सर्वस्व अर्पण करनेवाले व्यक्ति मानव-वशमे ही निर्माण हुअे है। अुन्होने मानव-जातिमे बढी हुअी विकृतिका नाश करके केवल प्राकृतिक धर्मोका भी नियत्रण करके अुच्च सस्कृति निर्माण की है तथा मानव-जातिको श्रेष्ठताकी ओर ले जानेका प्रयत्न किया है। अैसी कुछ विभूतिया, अैसे कुछ धर्मनिष्ठ व्यक्ति, मानव-समाजमे निर्माण होनेसे मानव-जातिको श्रेष्ठ कहलानेका आधार प्राप्त हुआ है, अितना ही कहा जा सकता है। लेकिन अिससे यह नही कहा जा सकता कि मनुष्यमात्र दूसरे प्राणियोसे श्रेष्ठ है। जिन्होने मानव-जातिके लिअे श्रेष्ठ सस्कृति निर्माण की, विवेकका आधार लेकर सयमकी सहायतासे क्षुद्र मनोवृत्तियोको रोका और अपनी अुन्नति साधी, वे ही श्रेष्ठ कहलाने योग्य है। अुनके नाम पर हम सब अपनेको श्रेष्ठ माने, यह अुचित नही मालूम होता। सत सज्जनोने मानव-सस्कृति निर्माण की और अुसके अनुसार अुन्होने आचरण किया। अुन्होने हमे सस्कृतिके पाठ सिखाये। अुनके आदेश और अुपदेशके अनुसार बरते तो हम भी अुनकी तरह अुन्नत बनेंगे और दूसरे सब

प्राणियोसे मानव प्राणी श्रेष्ठ है, अिस समझ और मान्यताको हम अपने आचरणसे सत्य कर बतायेंगे।

ससारके सभी सत-महात्मा कहते आये है कि जीवनको व्यर्थ न खोओ, सदा जाग्रत रहो। यदि जाग्रत न रहोगे तो अनेक क्षुद्र बातोंमें तुम्हारा जीवन व्यर्थ खर्च होता रहेगा। तुम्हारे संबधी, निकटके लोग तथा मित्र निकम्मी बातोमे तुम्हारा जीवन खर्च कर देगे। तुम्हारे निकटके लोग, तुम्हारे मित्र यदि विवेकी, सयमी और जीवनके विषयमें अुच्च विचार करनेवाले न हुअे, तो अपने क्षुद्र हेतुओकी सिद्धिमे वे अपना जीवन व्यर्थ बितावेगे, और अपने क्षुद्र हेतुओके लिअे तुम्हारी सहायता लेकर तुम्हारे जीवनका भी अुपयोग करेगे। यह अुपदेश सत-महात्मा करते आये हैं। परन्तु अुनके सद्भावनापूर्ण अुपदेशकी ओर हम ध्यान नही देते। व्यवहारमे देखा जाता है कि कोअी निठल्ला आदमी अपना फुरसतका समय बितानेके लिअे काममे लगे हुअे व्यक्तिके पास जाकर गप्पे हाकता है, तो कभी ताश खेलनेमे अपना तथा दूसरोका समय बिगाड़ता है। अेक व्यसनी व्यक्ति दूसरे अनेकोको व्यसनी बनाकर अपना और दूसरोका जीवन बिगाड़ता है। मनुष्य अपने जैसा दूसरोको बनाकर अपनी वृत्तियोको शात करता है। अिस प्रकार हम सब अेक-दूसरेकी बुरी वृत्तियोमे परस्पर सहायता करके व्यर्थ जीवन बिताते है। जीवनको सार्थक बनानेके लिअे हम अेक-दूसरेके सहायक नही बनते, पर जीवनको व्यर्थ और हानिकर कामोमे बितानेके लिअे अेक-दूसरेकी मदद करते है। परमात्माकी दी हुअी विशेष बुद्धिका सदुपयोग करके हम अपने जीवनको सार्थक नही करते। अिसका कारण यह है कि भले ही हम मुहसे अपनेको मनुष्य कहते हो, लेकिन वास्तवमे हम मानवताके सच्चे अुपासक नही हैं। जीवनका अुच्च अुद्देश्य हमने धारण नही किया है। चित्तमे अुठनेवाली वृत्तियोके शमनसे जो कुछ तात्कालिक सुख या स्वास्थ्य मिलता है अुसके पीछे हम लगे हुअे हैं। हमारी वृत्तिया योग्य है या अयोग्य, वे धर्म्य हैं या अधर्म्य, अुनके शमनमे मानवताका विकास है या ह्रास, यह विचार न करके हम केवल अपनी वृत्तियोके प्रवाहके अनुसार चलते है। अैसे प्रयत्नसे अिस प्रवाहको अधिक वेग मिलता है और अुस वेगमे हमारा जीवन चलता है।

लेकिन अिस प्रकारके जीवनमें हमें सुख प्राप्त होता ही है अैसी बात नहीं है, बल्कि दु खका अनुभव ही अधिक होता है। फिर भी अुस प्रवाहको हम टाल नहीं सकते, रोक नहीं सकते या अुससे बाहर निकल नहीं सकते। अैसी हमारी स्थिति है और अिसीमें दिवस, मास तथा वर्ष बीतते बीतते हमारा जीवन पूरा हो जाता है।

हम सब सुखकी अिच्छा रखते हैं, लेकिन कुल मिलाकर देखें तो दु खकी अनुभूति ही हमें अधिक होती है। अिसका कारण हमारी आजकी सदोष जीवन-पद्धति है। हमारा मनोधर्म ही अैसा बन गया है कि हमें सुखकी अपेक्षा दु खकी तीव्रता ही अधिक महसूस होती है। सुखके समय मनुष्यको अपनी सुखी अवस्थाका भान तक नहीं होता। दु खकालीन अवस्थाका स्मरण होने पर चालू सुखकी परिस्थितिका अुसे भान होता है या दूसरोंके दु ख देखकर अपनी सुखद स्थितिका अुसे भान होता है। वरना सुखके समय भी अुसे सुखका सतत भान नहीं रहता। सुखकी अनुभूति अुसे तीव्र नहीं मालूम होती। सुख अुसे अपने अधिकारकी वस्तु मालूम होने लगती है। हम प्रत्येक सुख भोगनेके अधिकारी और योग्य हैं, अैसा ही अुसे सदा लगता है। अुसकी सुखी अवस्थाके लिअे दूसरोंकी भलाअी, अुदारता और श्रम कारण हैं, अैसा प्रत्यक्ष दिखाअी देने पर भी वह समझता है कि अुसका सही कारण सुख भोगनेकी अुसकी अपनी योग्यता ही है। यही कारण है कि सुखके विषयमें वह किसीका अुपकार या कृपा माननेको तैयार नहीं होता। लेकिन दु खके विषयमें भले ही केवल अपनी मूर्खता या दोषके कारण ही अुसे दु ख भोगना पडा हो, फिर भी अुसे वैसा नहीं लगता। दूसरे किसीके दोषके कारण यह आपत्ति मुझ पर आअी है, अैसा ही वह समझता है। अपने आपको निर्दोष मानकर हमारे दु खोंके कारण दूसरे ही हैं अैसा हम समझते हैं, और दु ख हमारे दोषोंका फल या परिणाम है अैसा न समझनेके कारण अुसकी तीव्रता भी मनुष्यको अधिक लगती है। स्वाभाविक ही मनुष्यको सुखसे दु खकी अनुभूति अधिक तीव्र होती है। लेकिन जब वह यह समझता है कि मेरा दु ख दूसरोंके दोषोंका परिणाम है तब अुसे यह अन्याय लगता है और अिससे अुसके दु खकी तीव्रता

और भी बढ जाती है। अैसी स्थितिमे मनुष्यको चित्तकी स्वस्थता -- शाति कैसे मिल सकती है?

अिस गलतफहमी और भ्रातिसे निकलकर जीवनको सार्थक करना हो तो अपने सुख-दु खके कारणोको हमे सूक्ष्मता और गहराअीसे ढूढ़ना चाहिये। अतर्मुख बनकर आत्म-निरीक्षण और परीक्षणकी आदत हमे डालनी चाहिये। हमारे सुख-दु खके लिअे हमारे अपने और दूसरोके गुण-दोप कितने अशमे कारणभूत है, अिसकी हमे खोज करनी चाहिये। यह अतर्मुखता और आत्म-परीक्षण साधे बिना हम गलत मार्गसे जाये, तो हमे जीवनमे जिस सत्य और अनमोल वस्तुकी प्राप्ति 'करनी है वह कभी नही होगी। अुसके लिअे हमे जीवन-विषयक अुच्च आकाक्षा धारण करनी होगी और अुसके लिअे प्रयत्नशील रहना होगा। अंतर्मुखता और आत्म-परीक्षणके विना हमे सच्ची स्थितिका ज्ञान नही होगा और हम अपने सुख-दु खोके यथार्थ कारण नही जान सकेगे। सुख-दु खके कारण जाने विना हम अपने दु खोका नाश करके सुख प्राप्त नही कर सकेगे। अपने अहकार और ममत्वके कारण हम अपने आपको सदा निर्दोष और दूसरोसे अच्छा मानते है। अैसी अतर्मुखता और आत्म-परीक्षणकी आदत डाले बिना अिस दोषसे हम छुटकारा नही पा सकेगे। हमे जो सुख प्राप्त हुआ है अुसके लिअे कअियोको कष्ट सहना पड़ा है और आज भी सहन करना पडता है यह विचार हम नही करते, और हमारा सुख हमारे पुरुपार्थका फल है और अिससे भी आगे बढ़ कर दूसरोके सुखके लिअे भी हमी कारणभूत है, अैसा हम मानते है। परन्तु हमे अैसा कभी नही लगता कि हमारे अपने और दूसरोके कितने ही दु खोके लिअे हम कारण वनते है। अिसका कारण अतर्मुखता और आत्म-परीक्षणका अभाव ही है। हमारी अिस कमीके कारण हममे छिपे हुअे अन्य कअी दोषोकी तरफ हमारा ध्यान नही जाता। अतर्मुखता और आत्म-परीक्षण दर्पणकी तरह है। जैसे अपना ही मुख बिना दर्पणके हम देख नही पाते, अुसी तरह हमारे ही दोष बिना अतर्मुखताके हमारे ध्यानमें नही आते।

सत-महात्माओने मनुष्यके षड्रिपुओका वर्णन किया है। अुसे पढकर यदि हमे अैसा न लगे कि वह हमारे ही रिपुओका वर्णन है, तो अुसे

पढनेका आत्मोन्नतिकी दृष्टिसे हमारे लिअे कोअी अुपयोग नही। छह रिपु हरअेकके शरीरमें रहते है और वे सबको ठगते और दुःख देते है, अैसा सामान्य वर्णन पढकर हमारे गले वह अुतरता तो है, लेकिन वे ही रिपु हममें भी है अैसा हमारे गले नही अुतरता। गले अुतर भी जाय तो वह हमें रुचता नही है। जगतके मनुष्यमात्रमें दोष है, यह हम भी मानते है। लेकिन अुसका अर्थ हम अैसा करते है कि हमें छोडकर अन्य हर मनुष्यमें दोष है। अैसा अर्थ हम बिना समझे करे या समझ-बूझकर करे, तो भी अुससे सृष्टिके कानून और मनके धर्म बदलते नही। अुलटे, हमें जिन बातोंमें सावधान होकर प्रयत्नशील रहना चाहिये अुनकी अुपेक्षा करनेसे हमारे भीतरके रिपु प्रबल होकर अनेक दोषोंकी वृद्धि करते है। वास्तवमें संत-महात्माओंने हमें सावधान करनेके लिअे ही हमारे रिपुओंका वर्णन किया है।

हमारे काम-क्रोध, लोभादि विकारोंके कारण हमारा जितना नुकसान होता है, अुनके कारण हमारे जीवनमें जितने दुःखके प्रसंग आते है, अुतना हमारा अहित दूसरा कोअी नही कर सकता। अथवा अुतने दुःखके प्रसंग भी दूसरोंके कारण हमारे जीवनमें नही आते। यह सच्ची स्थिति है। अिसे ध्यानमें रखकर अुन विकारोंको काबूमें लानेका प्रयत्न हम करे, तो हमारे बहुतसे वर्तमान दुःख आसानीसे नष्ट हो जायेंगे। हमारे जीवनका, अुसके छोटे-बडे कृत्यों और घटनाओंका तथा हम बोलते है अुन शब्दोंका अवलोकन, पृथक्करण या संशोधन करे तो हमारे दुःखोंके कारण हमारी समझमें आ जावेंगे। कारणोंके ध्यानमें आने पर दृढ निश्चयसे हम अुनका नाश करे, तो हमारे दुःख नष्ट होंगे और हम सुखके मार्ग पर चल सकेंगे।

हम अच्छे अच्छे ग्रंथोंका अध्ययन करते है, महान पुरुषोंके जीवन-चरित्र पढते है। लेकिन अुनका जीवनमें अुपयोग करनेके लिअे हम सूक्ष्म-दर्शी या विवेकी न बने और वैसा प्रयत्न न करे, तो यह सब पढनेसे क्या लाभ? चिकित्सा-शास्त्रके ग्रंथ पढकर अपने रोगका निदान करना हमें न आये, हमें रोगका कोअी अुपाय न मिले और मिल जाय तो भी अुसका हम अुपयोग न करे, तो अुस पठनका क्या लाभ? केवल मनोरंजनके लिअे अैसे ग्रंथोंका पढना जीवनकी अुन्नतिकी दृष्टिसे लाभदायक नही है।

गीता, अुपनिषद्, रामायण, महाभारत और संतो तथा महापुरुषोंके चरित्र केवल मनोरंजनकी दृष्टिसे पढें तो अुससे जीवन नही सुधरता। तत्त्व-ज्ञानके ग्रंथ पढकर हम अपना जीवन अुन्नत कर सकें, अैसी दृष्टि हमें न मिले तो अुसका क्या लाभ? रामायणका स्वाध्याय करने पर भी हममें माता-पिताकी भक्ति, बंधुप्रेम, कुटुंब-वत्सलता, धर्मनिष्ठा, शरणागतके लिअे कारुण्य, दीन-दुखियोंके प्रति समभाव आदि गुण न आवें, सौतेली माके मत्सरसे किस तरह कुटुंबका नाश होता है यह ध्यानमें आने पर भी हम अुससे बोध ग्रहण न करें और दूसरे विवाहका मौका आवे तब घरमें रामायण मचनेकी संभावना होने पर भी हम दूसरा विवाह करें, हमसे माता-पिताका द्रोह और बंधुद्रोह हो, तो रामायण पढ़नेसे क्या लाभ? सद्ग्रंथोंसे अुपदेश ग्रहण करके अुसे अपने जीवनमें अुतारना है, यह अुद्देश्य सद्ग्रंथोंके पढने और सुननेके पीछे न हो, तो अुसका जीवन पर कोअी अुदात्त परिणाम नही हो सकता। अिसलिअे वाचन या श्रवण जीवन-निर्माणके लिअे करना है, अैसी दृढ़ श्रद्धा और अुद्देश्य अुसके पीछे होना चाहिये।

वाचन या श्रवण मनन और चिंतनके लिअे करना चाहिये। मननसे अर्थबोध निकालकर, अुसका सार लेकर अुसे आचरणमें अुतारनेका हमारा हेतु होना चाहिये। मननसे निष्कर्षके रूपमें निकाला हुआ अुपदेश हमारे जीवनमें कैसे और कहां अुपयोगी हो सकता है, यह देखनेके लिअे अपने दोष और कमियां हमारे ध्यानमें आनी चाहियें। और अिसीलिअे अंत-र्मुखता तथा आत्म-शोधन आवश्यक है। संत-महात्मा हमें अिस विषयमें जाग्रत और सावधान रहनेका अिशारा करते आये हैं। काम, क्रोध, लोभ आदि विकारों और ममत्व तथा अहंकारके कारण हमारे भीतर अुठनेवाली मनोवृत्तियोंके शमन तथा तृप्तिके पीछे हम न लगें, अैसा वे अुत्क-टतापूर्वक कहते आये हैं। अुनके कथनके रहस्य और अुद्देश्यको पहचानकर अुसका अुपयोग दुःखोंको कम करने और सुखकी वृद्धिके लिअे हमें करना चाहिये। अिसीसे हमारा जीवन सुखी और सार्थक बनेगा और हमारे जीवनसे मनुष्य दूसरे प्राणियोंसे श्रेष्ठ है यह सिद्ध होगा।

स्वच्छंदता, स्वेच्छाचार और असंयमसे मनुष्य सुखी नही होता। संयम, दृढता, नियमबद्धता, विवेक, पुरुषार्थ आदि सद्गुणोंसे ही वह

सुखी बन सकता है। धन, बल और विद्यासे मनुष्य सुखी नही होता। अिनका अुपयोग दूसरोंके कल्याणके लिअे करनेसे ही वह सुखी होता है। अिस सिद्धान्तको हमें अपने धर्ममय जीवन-व्यवहारसे सिद्ध करना चाहिये। अितनी बडी जिम्मेदारी मानवके रूपमे हम पर है यह समझकर हम बरतें तभी मानव-जीवन श्रेष्ठ है अैसा कहनेमे कुछ अर्थ है। विकृतिको नष्ट करके तथा प्रकृतिको काबूमें लाकर मानव-सस्कृतिका विकास करके अुसे अुत्तरोत्तर शुद्ध करना चाहिये। यही श्रेष्ठ जीवनकी शिक्षा है। अिस बातको, अिस जिम्मेदारीको कभी भूलना नही चाहिये, यही अिस लेखका रहस्य है।

६

शुद्ध सकल्प और अुसका विकास

अच्छे फलोंके लिअे बीजसे लगाकर जमीन, खाद, पानी, सार-सभाल, रक्षण आदि सभी बातोंके प्रति हमें सावधान और तत्पर रहना पडता है। अनाज खूब पके और कसवाला पके अिसके लिअे हमे सब तरहका परिश्रम करना पडता है। अिसी तरह किसी भी व्यावहारिक कार्यकी सिद्धिके लिअे हमें तत्पर और सावधान रहना जरूरी है। भूल होने पर कार्यसिद्धि नही होती। यही न्याय मानव-जीवन पर भी लागू होता है। मानव-जातिमें अुत्तरोत्तर मानवता बढती रहे, वह सुखी बने, अैसा यदि हम सब चाहते है तो अिसके लिअे हम सबको प्रयत्नशील रहना चाहिये।

फल-फूल, अन्न-वस्त्र, अुपयोगी पशु-पक्षी — सबके बारेमें अुनके गुण, धर्म, जाति और अुपयोगिता आदिमें मनुष्य सदा सुधार और वृद्धिके प्रयत्न करता है। अिसी तरह मनुष्यमे निहित मानवताको बढानेके लिअे, अुसके गुणोंकी शुद्धि और वृद्धि करके अुसकी अुपयोगिता बढानेमे हमें प्रयत्नशील रहना चाहिये। सपूर्ण मानव-जातिकी अैसी जिम्मेदारी अुठानेकी शक्ति और योग्यता किसी अेक व्यक्तिमें नही हो सकती, यह सच है। लेकिन अिसमे भी सदेह नही कि यदि हर व्यक्ति अच्छा बननेका प्रयत्न करे और दूसरोंके अैसे प्रयत्नमे मददगार बने, तो अुससे हम सबकी मानवता

वढ़ेगी और हम सव सुखी वनेंगे। हम केवल अपने अथवा विल्कुल निकटके कुटुवियोंके मुखसे ही सुखी नही हो सकते, यह हमें पूर्ण रूपसे समझ लेना चाहिये। अैसा सुख मनुष्यके लिअे शोभनीय नही है। अिसलिअे जो सुखी वननेकी अिच्छा रखते है अुन्हे चाहिये कि वे सवके मुखका विचार करे और अुसके लिअे प्रयत्नशील भी रहे। अैसे प्रयत्नोमे ही मानवता है और अिसी मार्गसे हमारी मानवताकी वृद्धि होगी। जिस प्रमाणमें दुनियाके साथके हमारे सवधोमे वृद्धि होती जाती है, अुसी प्रमाणमे हमारा मन भी विशाल वनता रहना चाहिये। परिवारके सव लोगोकी चिंता रखकर अुनके सुखके लिअे प्रयत्न करनेवालेको परिवारमे श्रेष्ठ समझा जाता है। अुसी तरह जो लोग समाज, राष्ट्र तथा मानव-जातिके सुख तथा कल्याणकी चिंता करते है अुन्हीको हमे श्रेष्ठ समझना चाहिअे। क्योंकि वे व्यक्तिगत सुखका लोभ न रखकर दूसरोंके सुखके लिअे प्रयत्न करनेवाले अर्थात् मानवताके अुपासक होते है। यह अुपासना मानव-धर्मके निरन्तर आचरणसे ही हो सकती है।

अिस अुपासनाको स्वीकार करके अुसके लिये प्रयत्नशील वने, तो हम अिस मार्गमें सफल हो सकते है। प्रयत्नसे वृक्ष पर अच्छे फल लग सकते है, खेतमे अधिक फसल अुपजाअी जा सकती है; सुंदर मकान तथा आकर्षक और आनदप्रद अुपवन तैयार किये जा सकते है, अुपयोगी प्राणियोकी जातियोमे सुधार कर सकते है। वुद्धिके असीम सामर्थ्य और विलक्षण प्रयत्नसे मनुष्य आकाश-पाताल सव जगह विचरण करनेमें और कुछ ही क्षणोमे लाखों मनुष्योंका सहार करनेमें समर्थ वन सका है। यदि वह सद्हेतु धारण करके मानवताके मार्गसे सुखी वननेका प्रयत्न करे और ससारमे मानवताको वढानेमे अपनी सारी शक्ति तथा वुद्धि लगाये, तो अुसमे वह अवश्य सफल होगा। मानव-जातिको अस्तित्वमे आये हजारो वर्ष हो गये है। अव भी यदि अुसमे मानवताका पूर्ण विकास न हुआ हो, तो अिससे निराश होनेकी कोअी वात नही है। यह सच है कि हम सवमे अभी वहुत सकुचितता और स्वार्थवुद्धि है। अपने आदर्शसे भी हम वहुत दूर है। अेक समय अैसा था जव मनुष्य मनुष्यको खाकर जीवन विताता था। यज्ञमे मनुष्यो तथा पशुओकी वलि

देनेमे वह पुण्य मानता था। वही मनुष्य आज दूसरे मनुष्यके लिअे अुपयोगी बननेमे, अुसके दु खोका निवारण करनेमे तथा परोपकारमें धन्यता मानने लगा है। वह अन्य मनुष्यो तथा अन्य प्राणियोके प्रति सहानुभूति, दया, अनुकपा रखने जितना करुणाशील बना है। वात्सल्य, प्रेम तथा अुदारताके भाव अुसके रक्तमें वश-परपरासे आये हैं। यह परिवर्तन अविस्मरणीय है। अपना बलिदान देकर दूसरोका रक्षण करनेवाली विभूतिया मानव-समाजमे ही पैदा हुअी हैं। अेक ही ओीश्वरने हमारा निर्माण किया है, अिसलिअे हमे सबके साथ समता तथा आत्मीयताका आचरण करना चाहिये — अैसे अुदात्त तथा सर्वव्यापी प्रेम प्रकट करनेवाले महान वाक्योका अुच्चारण जिनके मुहसे हुआ और जिन्होने अपना जीवन भी तदनुरूप बनाया, अैसे श्रेष्ठ मनुष्य भी अिसी जातिमें सब देशोमें पैदा हुअे हैं। अुनके अुपदेशोके फलस्वरूप हम सबमें थोडी-बहुत मानवता प्रकट हुअी है। अुसी मानवताको बढानेका हर व्यक्ति सकल्प करे और प्रयत्न-शील रहे, तो वह अिस मार्गमे आगे बढ सकता है। फिर हमारे लिअे निराशाका कोअी कारण नही रह जायगा। मानव-जीवन परमात्माकी ओरसे हमें मिला हुआ महान वरदान है। अुसका महत्त्व समझकर, अुसका अुपयोग करके जीवन सार्थक करनेकी अुच्च महत्त्वाकाक्षा हम रखें, तो हममें तथा ससारमे अिष्ट परिवर्तन हुअे बिना नही रहेगा। हम जीवन-शुद्धिका सकल्प करे, सद्गुणोकी वृद्धिके लिअे धारणा-शक्तिकी आराधना करे, तो यह बात हमें कठिन प्रतीत नही होगी। मानव-धर्मका पालन हम जीवनमे करते रहे, तो हम मानवता सिद्ध कर सकेंगे।

अुत्तम बीज, अुचित सार-सभाल, ऋतुके अनुसार देखभाल आदिसे वृक्ष पर अच्छे फल लगते हैं। यह बात तो प्रत्यक्ष ही है। अिससे हम अुचित बोध ग्रहण न करे, तो हमारा ज्ञान बेकार है। बाजारमे हम अच्छे और सुदर फल पहले पसद करते हैं। फिर अुन फलोकी जातिकी पूछताछ करते हैं। आम हो तो आफुस, पायरी, लगडा आदि किस जातिके है, अिसकी जानकारी प्राप्त करते हैं। अुनकी जातिसे अुनके गुण-धर्मका पता चलता है। जब फलके विषयमें हम अितना ध्यान देते है, अितनी सावधानीसे काम लेते हैं, तब मानव-जीवन जैसे महत्त्वके

विपय पर हमे कितने अधिक दीर्घ, अुदात्त और व्यापक दृष्टिसे विचार करना चाहिये। फल अच्छी जातिके, सुदर, स्वादिष्ठ, मधुर और स्वास्थ्य-प्रद तथा अधिक दिनो तक टिकनेवाले अेव अन्य सभी गुणोसे युक्त हो अैसा हम चाहते है। फल ही नही, फूलोके विषयमे भी हमारी यही चाह रहती है कि वे सुदर हो। अन्न, वायु, जल, घर, घरके लोग, नौकर, पडोसी, जानवर तथा पशु-पक्षी ही नही, हमसे सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु अच्छी होनी चाहिये अैसा हम चाहते है। हम यह भी चाहते है कि हमे किसीसे भी दु.ख न हो। स्त्री चाहती है कि अुसका पति अच्छा हो। पति भी चाहता है कि अुसकी स्त्री सेवापरायण और सद्‌गुणी हो। भले ही हम माता-पिताके भक्त न हो, फिर भी हमारी सतान हमारी भक्त और आज्ञाकारी बने, अैसी हमारी अिच्छा होती है। सब अच्छे हो तो हमे किसीकी ओरसे भय न रहे और हम निश्चित हो जाये, अैसा हमे लगता है। लेकिन हम दूसरोसे जो अिच्छा और अपेक्षा रखते है, वैसा बरताव हम भी दूसरोके साथ करे, अैसा विचार कितने लोग करते है? प्रत्येक व्यक्ति हमे सुख दे, कोअी हमे ठगे नही, हमारे साथ अप्रामाणिकताका व्यवहार न करे, असत्य, दुष्टता या कपटका व्यवहार न करे और हमारा अपमान न करके हमे मान-प्रतिष्ठा दे —— अैसी हरअेककी अिच्छा रहती है। स्वार्थी, दुष्ट, कपटी और मूर्खको भी अैसा ही लगता है। लेकिन क्या हम भी अपने जीवनका अैसा अुद्देश्य रखते है कि दूसरोके साथ सौजन्यका व्यवहार करे? दूसरोसे अच्छे व्यवहारकी अपेक्षा रखनेके लिअे हममे मानवताकी जरूरत नही है, परन्तु हम दूसरोसे जैसे व्यवहारकी अपेक्षा रखते है, वैसा व्यवहार दूसरोके साथ करनेके लिअे मानवताकी जरूरत है। वह हममे निर्माण न हो, अुसकी रुचि भी हममे पैदा न हो, तब तक दूसरोसे हम अैसी ही अपेक्षा रखते है और अपने आचरणके विषयमे लापरवाह रहते है। अगर प्रत्येककी यही भूमिका रहे तो हम सुखी कैसे होगे?

जीवनके विपयमे सामुदायिक तथा अुदात्त दृष्टिसे विचार न करनेके कारण हम सबकी यही भूमिका है। अच्छी बातोका आचरण पहले दूसरे करे, और अन्तमे बुरा व्यवहार करना अशक्य हो जाने पर ही हम

अच्छा व्यवहार करेंगे, अैसी विचारसरणी अधिकांश लोगोंकी है। चारित्र्य, शील, शुद्धि, सद्‌गुण और मानवता हमें प्रिय न होनेके कारण सबके अन्तमें मजबूरीसे हम सदाचरणका विचार करते हैं। लेकिन कोअी स्वार्थी मनुष्य अैसा नहीं चाहता कि पहले सब धनवान हो जाय, फिर हम धन-प्राप्तिका प्रयत्न करेंगे, पहले सबको मान-प्रतिष्ठा मिल जाय, फिर हम फुरसत मिलने पर अुसका विचार करेंगे, पहले सबके विवाह हो जाय और अुनकी गृहस्थी ठीकसे चलने लगे, बादमें हम विवाहका विचार करेंगे या सबकी सुख-सुविधा पूरी होने पर ही हम अपनी सुख-सुविधा देखेंगे, अपनी प्रिय वस्तु या विषयकी प्राप्तिके पीछे हम तुरंत लग जाते हैं। हम यह भूल जाते हैं कि मानवता सिद्ध करने, चारित्र्य और सद्‌गुण-संपन्न बननेके लिअे ही हमारा जन्म हुआ है। संत कबीरने कहा है 'अब तुम कब सुमरोगे राम?' गर्भावस्था, बालपन और युवावस्था कुछ जडता और कुछ स्वच्छंदतामें बीती। बुढापेमें हाथ-पैर कांपने लगे, शक्ति नहीं रही। जीवनकी सभी अवस्थाअें अैसी ही बरबाद हो गअी, फिर भी हमारा अुस ओर ध्यान नहीं गया।

'अब तुम कब सुमरोगे राम'—हम अपने जीवनमें मानवता कब प्राप्त करेंगे अिसका विचार हमें करना चाहिये। अब तक मनकी अैसी श्रेष्ठ अवस्था प्राप्त न होनेके कारण, जीवन-संबंधी विवेक-दृष्टि हममें न आनेके कारण हम मानवताका मूल्य समझ नहीं सके। अिसीसे मानवताके प्रति हममें अुत्कंठा भी नहीं दिखाअी देती। हम सुखकी अिच्छा तो रखते हैं, लेकिन मानवताको शोभा दे अैसा सुख प्राप्त करने योग्य पुरुषार्थ और निर्मलताका हममें अभाव है। यही कारण है कि हम चाहे जिस प्रकारके साधनसे अपनी सुख-संबंधी अिच्छाकी तृप्ति करते रहते हैं। अिस स्थितिमें चित्तकी मलिनतासे प्राप्त आनंद भी हम भोग लेते हैं। अच्छे वस्त्र न मिलने पर दरिद्र व्यक्ति मलिन तथा फटे वस्त्रोंमें ही सर्दीसे बचनेका प्रयत्न करता है। पोषक आहार न मिलने पर गरीबको अपनी भूखकी तृप्ति सामान्य आहारसे कर लेनी पडती है। क्या हमारी सुख-प्राप्तिका प्रयत्न कुछ हद तक अिसी तरहका नहीं है? चाहे जिस मार्गसे अपनी वृत्तियोंका शमन करनेमें, अपनी जरूरतोंकी पूर्तिमें ही क्या हम

अपने आपको सुखी नही समझते? चेहरा दर्पणमे भी दिखाओी देता है और गदे पानीमे भी दिखाओी देता है। परन्तु समझदार व्यक्ति गटरके गदे पानीमे अपना चेहरा देखकर आनन्द लेना पसद नही करेगा। सुखके विपयमे गहराओीसे विचार न करनेके कारण पवित्रतासे न मिले तो अपवित्रतासे, अुदारतासे प्राप्त न हो तो कृपणतासे, प्रामाणिकता और सचाओीसे न मिले तो अप्रामाणिकता और असत्यसे, सामर्थ्यका अभाव हो तो दुर्बलतासे और वीरताके अेवजमे डरपोक बनकर सुख प्राप्त करनेका, जीवनको सुखी और सुरक्षित बनानेका हम प्रयत्न करते है। लेकिन अिस मार्गसे सच्चा सुख कदापि नही मिल सकता। ससारके सभी महापुरुषोने अेकमत होकर यही अुपदेश दिया है।

हममे सदा स्फूर्ति, अुत्साह और गतिशीलता बनी रहे, अिसके लिअे कोओी महान आकांक्षा हमारे मनमे होनी चाहिये। अिस प्रकारकी आकाक्षाके बिना हममे पुरुपार्थ प्रकट करनेकी प्रेरणा ही जाग्रत नही होगी। अुसके बिना हमारी सुप्त शक्तिया कभी भी जाग्रत नही हो सकेगी और हम सही मार्गसे प्रयत्नशील नही बन सकेगे। वह आकाक्षा पवित्र, अुदात्त और मानव-जन्मकी शोभा बढ़ानेवाली होनी चाहिये। भूखकी तृप्ति और आरोग्य तथा बलकी प्राप्तिके लिअे आहार आवश्यक है। किंतु कोओी भी सस्कारी व्यक्ति जैसे क्षुधासे अत्यत पीड़ित रहने पर भी किसी प्राणी या मनुष्यका जूठा भोजन नही करता, वैसे ही मानवताकी सिद्धिका अिच्छुक व्यक्ति मानवताको शोभा न देनेवाले कलकित मार्गसे सुखप्राप्तिकी अिच्छा नही रखता। क्योकि वह पवित्रतासे प्राप्त सुख और आनंदकी महत्त्वाकाक्षा रखता है। अुसका सद्गुणोसे सपन्न बननेका ही प्रयत्न होता है। वह प्रामाणिकता और अुदारताको ही जीवनका भूपण तथा शोभा मानता है। परोपकार, सेवा और कर्तव्यको वह परम धर्म मानता है। अिन सवमे मुख्य और महत्त्वकी वस्तु वह मानवताको ही मानता है और जीवनकी सर्वागीण शुद्धि ही जीवन-सिद्धि है अैसी अुनकी श्रद्धा होती है। अुसके जीवनका यही सकल्प होता है।

अिस प्रकारके शुद्ध जीवन-सकल्पको ही हमे अपने जीवनका शुद्ध बीज समझना चाहिये। हमारी पुरानी पीढ़िया अिसी प्रकारके सकल्पको

धारण करती और अुसकी सिद्धिका प्रयत्न करती आयी है। अिसलिअे अज्ञात रूपसे अुमी सकल्पका वीज जन्मके साथ हममें अुतर आया है। कुछ समझ आने पर अिस सकल्प-वीजमें से सदिच्छाके कुछ अकुर फूटते है। वचपनमे प्राप्त सस्कार, अुसके वाद समझ और प्रयत्नपूर्वक प्राप्त किये हुअे सस्कार, अनुकूल परिस्थिति आदि वातें अुन अकुरोंके लिअे खाद, पानी, हवा, अुचित सार-सभाल आदिका काम करती है और अुसमे से जीवनरूपी महान वृक्ष पनपता है। हमारा शुद्ध सकल्प ही वीज है और अुममें मे निर्माण होनेवाला वृक्ष ही मतत विकसित होने-वाला हमारा जीवन है। जैसे अुत्तम वीजवाले वृक्षको सरस और सुदर फल लगते है, वैसे ही शुद्ध सकल्पसे अकुरित होकर वढनेवाले पुरुषार्थी जीवनमें जो मत्कर्म होते है वही अुसका विस्तार है और अुनके शुभ तथा कल्याणप्रद परिणाम अुमके सुदर और सरस फल होते है। सद्-गुणोंके रूपमें हमें और जनकल्याण या जनहितके रूपमे ससारको अिन परिणामोंका अनुभव मिलता है।

सकल्पकी दृढता, मनकी निर्मलता, कर्मोंकी निर्दोषता, निरन्तर प्रयत्न तथा परिस्थिति और अनुकूल सयोगोंके अनुसार अुस जीवन-वृक्षका विस्तार होता है। अुसके विस्तार और अन्तर्वाह्य सुपरिणामोंसे मानवताका प्रकटीकरण होता है। अपने शुभ सकल्पसे प्रारभ हुअे और प्रयत्नपूर्वक वनाये गये सद्गुण-सपन्न जीवनमें हमे मानवताकी प्राप्ति करनी है, अिस वातका हमें सदैव स्मरण रखना चाहिये। यह स्मरण हमारे सकल्पके लिअे पोषक होगा तथा सिद्धिकी ओर ले जानेमें प्रेरक सिद्ध होगा। वह मानवताके रास्ते आगे वढनेका अुत्साह वढाता रहेगा। अिस प्रकार प्रारभसे लेकर अन्त तक जीवनके अुद्देश्यके विषयमें हम सावधान रहेगे, तो ससारमें मानवता वढेगी और हम सुखी होगे।

आज भले ही जीवनमें जो वस्तु हमें प्राप्त करना है अुससे विपरीत दिशामें हम जा रहे हो, लेकिन हम आज भी सावधान हो जाय तो निरर्थक वीते समयकी पूर्ति अपने निश्चय और प्रयत्नशीलताके द्वारा हम कर सकते है। आज हम भले ही स्वार्थी हो, हममें वहुत ही थोडी मानवता हो, फिर भी हमें निराश नही होना चाहिये और न हमें वैसे जीवनमें

सतुष्ट ही रहना चाहिये। बेशक, आदर्शकी तुलनामे हममे बहुत अधिक कमिया है, अिसीलिअे हम सब अितने दु खी है। हम सबको अेक-दूसरेके प्रति सशय तथा अविश्वास है। हमारे दु खोकी जड हमारी स्वार्थवृत्ति और हमारी दुर्बलता है। अुसे दूर करके हमे मानवताके रास्ते जाना चाहिये। अगर हम सबको सुखी बनना हो तो यह हमारे अकेलेके प्रयत्नसे नही परन्तु सबके प्रयत्नोसे ही हो सकता है अैसी हमारी दृढ मान्यता होनी चाहिये। परन्तु सब करेगे अिसकी राह न देखते हुअे हममे से प्रत्येकको अन्त.करणपूर्वक मानवताका रास्ता अपनाना चाहिये। अेक-अेक व्यक्ति मिलकर ही हम सब बनते हैं। हममे से प्रत्येक अपना धर्म समझकर प्रयत्नशील बने, तो दूसरोके लिअे अलगसे चिंता करनेकी जरूरत नही पड़ेगी। शुद्ध सकल्पमे से अिस मार्गका प्रारभ होता है और वह मानव-जातिके अन्त तक चलता ही रहेगा, अैसी हमारी श्रद्धा होनी चाहिये। व्यक्तिके अन्तसे अिसका अन्त नही आता। मानव-जातिकी अनेक पीढिया अिसी मार्गसे चलती आयी है। वर्तमान पीढीको भी अिसी मार्गसे जाना है और भावी पीढीके लिअे भी यही मार्ग है। अिस मार्गसे चलना अभी तक ठीकसे सध नही पाया है, अिसीलिअे हमारी यह दु खद स्थिति है, यह समझकर हमे अन्त करणपूर्वक और अुत्साहके साथ अिस मार्गको अपनाना चाहिये। मार्ग बहुत लबा है, अिसलिअे निरुत्साहका कोअी कारण नही है। यदि मार्ग लबा है तो मानव-जाति भी अुतनी ही चिरंतन है। हमारा जीवन समाप्त होने पर हमारा आगामी सस्करण अिस मार्ग पर प्रयाण करेगा। हमारी भावी पीढिया यदि शुद्ध संकल्प धारण करके अिस मार्गसे चलती रही, तो शुद्ध सकल्पोसे प्राप्त मधुर फल भविष्यकी हर पीढीको मिलते रहेगे। अिसी मार्ग और धर्म पर चलनेसे हम सब धन्य बनेगे। अिस मार्गमे परमात्मा पर रही हमारी निष्ठा हमे सदा बल प्रदान करेगी।

शुद्ध बीजा पोटी। फळे रसाळ गोमटी॥१॥
मुखी अमृताची वाणी। देह देवाचे कारणी॥२॥
सर्वांग निर्मळ। चित्त जैसे गगाजळ॥३॥
तुका म्हणे जाती। ताप दर्शने विश्रांति॥४॥

शुद्ध बीजसे सुदर और रसाल फल पैदा होते है। जिनके मुखमें अमृतकी तरह मधुर वाणी है, जिनका शरीर ओश्वरको समर्पित है, जिनके सभी अग निर्मल है और चित्त गगाजलकी तरह पवित्र है, अैसे पुरुषके दर्शनसे तापका नाश होता है और विश्राति अर्थात् शाति प्राप्त होती है।

जीवन-शुद्धिके, मानवताके ये स्पष्ट लक्षण है। अिन्हीमें सुदर और रसाल फल भरे है।

७

सद्‌गुणोकी पूर्णता ही मानवताकी सिद्धि है

पशुका होत पन्हैया, नरका कछू न होय।
नर करनी करे तो नरका नारायण होय ॥

यह वचन किस सत या किस विचारकका है अिसका मुझे ठीक पता नही। पर बचपनसे समय समय पर मै यह वचन सुनता आया हू। विशेषत नरदेहकी दुर्लभताकी बात और भक्ति, ज्ञान, योग या श्रेष्ठ कर्मोंसे नरदेह सार्थक होता है यह बात लोक-मानस पर अकित करनेके लिअे अिस वचनका अुपयोग किया जाता है। भक्ति तथा ओश्वर-सबधी ज्ञानसे सत पुरुष ओश्वर-पदको पहुचते है, अैसी हमारी श्रद्धायुक्त मान्यता है। अिसके आधार पर हम समझते है कि वे नरसे नारायण बनते है। अुपरोक्त वचनमें यही अर्थ या हमारी यही मान्यता दिखाओ देती है। अिस वचनके मूल कर्ताने किस अर्थमें यह वचन कहा होगा, नर और नारायणके विषयमें अुसकी क्या मान्यता या व्याख्या रही होगी, यह समझनेके लिअे हमारे पास कोओ साधन अुपलब्ध नही है। सत तुकारामका अिसी अर्थसे मिलता-जुलता यह वचन है

तरी च जन्मा यावे। दास ओश्वराचे व्हावें ॥१॥
नाही तरी काय थोडी। श्वान शूकरे बापुडी ॥२॥

अिसका अर्थ यह है कि जन्म पाकर अीश्वरका दास यानी भक्त बनना चाहिये। यदि हम अीश्वरके दास या भक्त नही बन सकते तो अिस ससारमे असंख्य श्वान और शूकरोंमें ही हमारी गणना होनी चाहिये। पहले वचनके 'करनी' शब्दका अर्थ लगभग अिसी तरहका कुछ माना गया होगा। भक्तको भगवान-स्वरूप माननेकी श्रद्धा हमारे यहा प्रचलित है। और अुसके अनुसार भक्तको भी भगवानकी तरह वंदनीय माना जाता है। सामान्य मनुष्य केवल अपनी सासारिक अिच्छा, वासना, आशा, तृष्णा और स्वार्थ आदिके पीछे लगा रहता है और भक्त भगवानके अतिरिक्त और किसीकी अिच्छा नहीं रखता। वह मनसे पवित्र, अुदार, परोपकारी, सत्यवचनी, प्रामाणिक, नि स्वार्थ, दूसरोके लिअे कष्ट सहनेवाला और दयालु होता है। अिसलिअे हम संसारके पीछे न लगकर या न रहकर अीश्वरके भक्त बने, अैसा सत तथा भक्त-पुरुष हमसे कहते आये है। अीश्वरका भक्त या दास गुणसपन्न ही होगा, वह चरित्रवान, नि स्वार्थ और शील-सम्पन्न ही होगा; वह पवित्र हृदयवाला और दयालु ही होगा अैसी भक्तोकी धारणा थी। अपनी अिस प्रकारकी कल्पनाके अनुसार अुन्होने केवल मनुष्य न रहकर 'करनी' करके नारायण बननेका अुपदेश हमें दिया है। जिस समय यह अुपदेश दिया गया था, अुस समय मानवताके ध्येयकी * कल्पना नही रही होगी। वह ध्येय कितना अुदात्त है, यह बात कल्पनामे नही आयी थी। अिसलिअे अीश्वरका दास या भक्त ही सच्चा मानव है और बाकीके सब कुत्ते या सूअरके जैसे है, यह कल्पना अुस समय निर्माण हुअी होगी।

परतु आज तक अिस कल्पनाका विपर्यास ही होता आया है। मनुष्य चाहे जितना सद्गुणी हो, वह चाहे जितनी प्रामाणिकता, सत्य-निष्ठा और कर्तव्य-बुद्धिसे अपनी गृहस्थी चलाता हो, फिर भी अगर वह भजन-पूजन नही करता, जटा, मुडन या दूसरा बाह्य चिह्न धारण नही करता, गीता-कुरान-पुराण-बाअिबल जैसे ग्रथोका स्वाध्याय नही करता,

* नवजीवन द्वारा प्रकाशित 'विवेक और साधना' नामक ग्रंथके 'ध्येय-निर्णय' नामक प्रकरणमे अिस विषयका अधिक विवेचन किया गया है।

आसन-प्राणायाम-धौति आदि क्रियाये नही करता, अथवा वह चमत्कारके लिअे प्रसिद्ध नही है—साराश यह कि यदि अिस प्रकारका कोअी वाह्याचार अुसके पास नही है या लोगोकी मनोकामना सिद्ध करनेके सामर्थ्यके विषयमे वह भ्रम नही फैला सकता, तो अुसे पूज्य या श्रेष्ठ नही माना जाता। मनुष्यताका सच्चा लक्षण है पवित्रता या चारित्र्य। किंतु हम अुसे आदरणीय या अनुकरणीय नही मानते। अिसके बजाय साधुत्वका केवल वाह्याचार ही हमे वदनीय मालूम होता है। कर्तव्य-निष्ठ तथा अुदार-चरित गृहस्थाश्रमी मनुष्यके मूल्यको हम नही आकते। वैराग्यका वाह्याडबर ही हमे पूजनीय मालूम होता है। अत मैं हमेशा यह महसूस करता हू और कहता भी हू कि हमारे समाजमे मनुष्य वनना कठिन है, पर देवता या अीश्वर वनना सहज और आसान है। अिसी कारणसे हममे मानवताकी, सद्गुणोकी वृद्धि नही हो पाअी है। मानवताको अपने जीवनका ध्येय मानकर अुसे प्राप्त करनेके लिअे हम प्रयत्न नही करते। भगवद्-भक्तिको प्रधान मानकर सद्गुणोकी अुपासना तथा अुनकी वृद्धि करनेवाले कुछ सत हममे हो गये हैं। पर अुनमें सद्गुण थे, मानवीय गुणोका विकास हुआ था, यह हम भूल जाते है। अिसकी अपेक्षा वे अीश्वरके साथ तद्रूप हो गये थे और अीश्वरकी सहायतासे चाहे जैसा चमत्कार कर सकते थे, अैसी लोकश्रद्धा ही अुनकी पूजनीयताका कारण रही और आज भी है। यह वात लोक-मानसका निरीक्षण करने पर ध्यानमे आती है। प्रत्यक्ष सज्जनताकी अपेक्षा वाह्याडवर और चमत्कार-सवधी भ्रमके कारण हमारे समाजमें तत्सम्वन्धी दभ और भोलापन वढता गया है। हमारी अिस मन स्थितिके कारण साधु कहलानेवाले या माने गये लोगोका दभ जीवनभर चल सकता है। अुनके मरने पर अुनकी समाधिया वनाअी जाती है, अुन समाधियो पर अुनकी कीर्तिके प्रमाणमे छोटे-वडे मदिर वनते है और अुन स्थानोको तीर्थक्षेत्र माना जाता है। फिर हजारो यात्री पुण्य प्राप्त करने या कामना-पूर्तिके लिअे वहा जाने लगते है। हम लोगोमे पहलेसे ही कामनिक भक्तिकी परपरा चली आ रही है। अिससे अैसी लोकश्रद्धा वन गअी है कि मृत साधु अपनी समाधिमें जाग्रत रूपसे वास करता है। अुस समाधिका

दर्शन करनेसे, समाधिके आगे कुछ दक्षिणा, मिठाअी, फल आदि पदार्थ चढानेसे, स्तुति-प्रार्थना करनेसे और फिर अुसके नाममे कुछ दान-धर्म करनेसे वह हमारी अभीष्ट कामना निश्चित रूपसे पूरी कर देता है। अिसमे साधुके सामर्थ्यका दरअसल कही कोअी सबध नही है। समाधि सच्चे साधुकी हो या दाभिककी हो, हमारी अभीष्ट कामनाकी पूर्तिका समाधि-पूजनके साथ कोअी सबध नही है। यह बात हम अपनी परपरागत श्रद्धाके आवेगमे तथा कामना-विषयक व्याकुलतासे अुत्पन्न बुद्धिभ्रमके कारण समझ नही पाते। हमे विवेक नही सूझता। यदि समाधि किसी सच्चे साधुकी हो तो वह भक्ति, ज्ञान, सत्यकी अुपासना, मनकी शुद्धि तथा सद्‌गुणोका अुत्कर्ष साध कर अपने जीवनको सार्थक कर गया है। अुसका समाधिके साथ, मदिरके साथ या हमारे द्वारा की गअी पूजा या स्तुतिके साथ किसी प्रकारका सबध नही है। अिसके विपरीत, जिसने साधुताका ढोग किया है तथा कितने ही भोले-भाले लोगोकी श्रद्धाके कारण प्रसिद्धि प्राप्त की है अैसे दाभिक व्यक्तिकी समाधि हो तो वह भी मरनेके बाद लोगोकी कोअी कामना पूरी नही कर सकता। अैसा होने पर भी कामनिक भक्तिके अनेक प्रकार समाजमे रूढ है। अुसमे केवल भोली-भाली या अशिक्षित जनता ही फसी हुअी है सो बात नही; अच्छे और अपने आपको समझदार तथा शिक्षित कहनेवाले भी अगुआ बनकर भक्तिके अिन सब प्रकारोको बढावा देते है। अिसमे भक्तिका अंश कितना है, समाजकी अधश्रद्धा और भोलापन कितना है, तथा जिनको कामनिक भक्तिके अिन प्रकारो और अैसी स्थितिसे द्रव्य, प्रतिष्ठा, सम्मान तथा अन्य भौतिक लाभ मिलते है अुन शिक्षित और अशिक्षित लोगोकी धूर्तता और कपट कितना है अिसका पता चलाना कठिन है।

हम जितना महत्त्व बाह्य भक्तिको देते है, अुतना सद्‌गुणोको तथा पवित्रता, शील और सदाचारको नही देते। अिस बातकी ओर ध्यान खीचनेके लिअे ही अिस विषय पर अितना विस्तारसे लिखा गया है। सत्यकी अुपासनाकी अपेक्षा किसी देवताकी भक्ति करना हमे ज्यादा अच्छा लगता है। जितना मान और आदर हम चमत्कार करनेवालेको देते है, अुतना सद्‌गुण-संपन्न मनुष्यको नही देते। त्यागी-वैरागीको हम

अपनी कामनाकी सिद्धिके लिअे तथा अुनका पुण्य हमारे काममे आये, अिस आशासे मान देते है। अुनके त्याग और वैराग्यको हम अनुकरणीय नही मानते। बहुजन-समाजकी यह स्थिति है।

अिस प्रकारकी परपरागत श्रद्धाके कारण हम लोग अब तक मानवताका मूल्य नही पहचान पाते। सज्जनताकी ओर हमारा ध्यान नही जाता। अैसी स्थितिमे भी सद्भाग्यके अुदयके कुछ लक्षण दिखाअी देने लगे है। नेतागण तथा कुछ खास व्यक्तियोके द्वारा भी अब 'मानवता' शब्द प्रचारमे आने लगा है। अुस पर जोर भी दिया जा रहा है। मोक्षका महत्त्व कम होने लगा है। और सबके कल्याणमे हमारा कल्याण है, अैसी सामुदायिक कल्याणकी भाषा बोली जाने लगी है। भूदानमे तथा राजनीतिमे भी अब मानवता और सामुदायिक ध्येयकी दृष्टिसे विचार होने लगा है। अब देशभक्ति, राष्ट्रभक्ति आदिमे भी मानवताकी तरफ ध्यान जाने लगा है। राज्योके राज्यपाल, मत्री तथा राष्ट्रपति भी अब मानवताके महत्त्वका वर्णन करने लगे है। मै अिसे सद्भाग्यका ही लक्षण समझता हू।

मै लगभग साठ सालके भारतीय सार्वजनिक आन्दोलनके अितिहासको कम-अधिक प्रमाणमे जानता हू। अुसमे कभी मानवताको महत्त्व दिया गया हो अैसा मुझे याद नही पडता।

३०–३५ साल पहलेकी स्थिति तो अब तक मेरी नजरके सामने ही है। अुस समय माननीय नेताओ, देशके सुख-दुखका विचार करनेवालो और देश-कल्याणकी प्रवृत्तियोमे हिस्सा लेनेवालो तथा अुनकी सस्थाओमे भी मानवताका महत्त्व नही था। मानवता आदर्शके रूपमे मान्य करने जैसी अवस्था है, वह अेक महान अुच्च ध्येय है, यह बात किसीके गले नही अुतरती थी। राम और कृष्णको मै अवतार न मानकर आदर्श पुरुष और महापुरुष मानता हू। बुद्ध, महावीर, शकराचार्य, ज्ञानेश्वर, तुकाराम, रामदास आदिने भी साधना करते करते अुच्च अवस्था प्राप्त की थी, मेरा यह कहना अुस समय किसीको अच्छा नही लगता था। व्यक्तिगत कल्याण या वैयक्तिक मोक्षकी कल्पनामे या मान्यतामे मानवताके दृष्टिकोणसे सकुचितता है, यह विचार अुस समय किसीको भी

स्वीकार नही था। पर अब नेताओकी समझमें यह वात आने लगी है यह आनदकी बात है। मेरा यह कथन कहा तक ठीक होगा यह कहना कठिन है, क्योकि अुस पर विश्वास होनेमे अव भी कुछ समय लगेगा। छोटे बालक अर्थ न समझते हुअे भी वडे वडे शब्दोका प्रयोग करते हैं। अुन शब्दोका अर्थ कितना व्यापक है, अुनके अर्थमे कितना गाभीर्य और सामर्थ्य है, यह न जानते हुअे वे कही भी और किसी भी समय अुनका प्रयोग करते है। केवल शब्दोच्चारसे शब्दका अर्थ ध्यानमे आ गया है, अैसा नही कहा जा सकता। क्योकि आज भी हमारे सम्माननीय नेताओमे से कोअी तीर्थोको, कोअी शास्त्रग्रथोको, कोअी समाधिको, तो कोअी गगास्नानको या हिमालयकी यात्राको महत्त्व देते है। अुसमे भी भक्तिका, मनोरजन या लोकप्रियताका अश कितना होता है, यह तय करना मेरे जैसेके लिअे आसान नही है। "सबै भूमि गोपालकी" यह बात अच्छी तरह समझाये बिना जिनके गले सामाजिक न्याय नही अुतरता, अुनकी दृष्टिमे मानवताका महत्त्व कितना है यह ढूढ निकालना कठिन है।

जो भी हो, आज हम जो शब्द वोलते है अुन्हे वालकोके समान अर्थ न समझकर वोले, तो भी यह बात विलकुल सही है कि मानवताको हमारा जीवन-ध्येय बनाये सिवा और अुसकी सिद्धिके लिअे ठीक आचरण किये सिवा हमारे लिअे दूसरा चारा नही है। अुसके बिना हम सच्चे मानव नही वन सकेगे। मानवताके मार्गमे हम चाहे जितने पिछडे हुअे हो, अुस आदर्शके अनुपातमे हम आज बहुत अवनत स्थितिमे है अैसा माने, तो भी मानवताके मार्गसे ही हमे चलना चाहिये, यह हम दृढता-पूर्वक समझ ले।

मानवताकी व्याख्या पूर्ण रूपसे हमारे ध्यानमे न आअी हो, मानवताकी पूर्णता तक हमारी दृष्टि न पहुचती हो, तो भी अपने आदर्शोको वदलने या अुसमे अश्रद्धा रखनेका कोअी कारण नही है। आज हम अिस विषयमे चाहे जितने अज्ञान हो, तो भी आजकी स्थितिकी अपेक्षा मानवताकी दृष्टिसे कौनसी स्थिति अधिक अुच्च है, यह तो हम जान ही सकते है। प्रगति क्या है और अवगति क्या है, यह भी हम समझ सकते है। अितना ज्ञान मानवताके मार्ग पर अग्रसर होनेके लिअे पर्याप्त

है। सद्‌गुण किसे कहे, दुर्गुणको कैसे पहचानें, यह हम जान सकते है। मनकी शुद्धि-अशुद्धिको हम समझते है। हमारे विपत्ति-कालमे दूसरोकी जो सहानुभूति और सहायता अुपयोगी होती है तथा जिसके बल पर सरल और न्यायमार्गसे हम अपनी विपत्तिको पार करते है, अुस सहानुभूति और सहायताका मूल्य हम समझ सकते है। दूसरोकी अुस सहृदयताको हम समझ सकते है और अुसे हम सद्‌गुण मानते है। अिसके आधार पर हम सद्‌गुणोको जानते है, मानवताको पहचानते है। दूसरोके सद्‌वर्तनसे हम लाभ अुठाते है। अुससे मानवताका आदर्श जीवन और समाजके लिअे कितना अुपयोगी और आवश्यक है, यह हम समझ सकते है। अितनी बात समझकर हम अपना आचरण वैसा रखनेका प्रयत्न करे, तो हमारे द्वारा मानवताकी अुपासना होती रहेगी। अिस मार्ग पर हम निश्चयपूर्वक जैसे जैसे आगे बढेगे, वैसे वैसे आगेका मार्ग सहज ही दिखाअी देगा। अधेरेमे हाथमें ली हुअी बत्ती गतव्य स्थान तकका पूरा रास्ता नही बता सकती, फिर भी दस-पाच कदम तक अुसका प्रकाश फैलता है, अुतना मार्ग चलने पर आगेका अुतना ही मार्ग हमे फिर दिखाअी देता है। अिस तरह हर समय दिखाअी देनेवाले मार्ग पर चलकर बढते बढते अन्तमें हम अिच्छित स्थान पर पहुच जाते है। मानवताके मार्ग पर भी हम अिसी तरह बढे तो नि सदेह अपने ध्येयको प्राप्त करनेमे सफल होगे।

अिस प्रकार जीवनमे सफल बननेके लिअे प्रथम हमे अपना ध्येय विवेकपूर्वक निश्चित करना होगा। फिर सावधानी, धीरज और दृढतापूर्वक अपने ध्येयकी ओर आगे बढना चाहिये। हम आज मानवके नाते दुनियामे रहते हो तो भी जब तक हममे मानवता नही आती, हम सद्‌गुणोको अपना स्वभाव नही बना लेते, तब तक हम केवल शरीरसे ही मानव है।

मनुष्य बालकके रूपमे पैदा होता है। फिर अुसके अग-प्रत्यगोका, कर्मेन्द्रियो और ज्ञानेन्द्रियोका विकास होते होते शरीरसे वह मनुष्य बनता है। लेकिन सच पूछा जाय तो बुद्धि और मनके विकाससे ही अुसमे मानवता आती है और बढती जाती है। सद्‌गुणोके कारण बुद्धि और मनका विकास प्रकट होता है। सद्‌गुणोकी पूर्णता ही मानवताकी सिद्धि है। अुसीके लिअे

मानवका जन्म है। अैसी सिद्धि जिसको प्राप्त हुअी होगी अुसीको किसीने 'नारायण' कहा होगा। 'नारायणत्व' का अर्थ अिससे अधिक कुछ नही है। 'नारायणत्व' का अर्थ 'भगवान' नही। विश्वके सूत्र चलाना अुसका काम नही। सत्यकी और सद्‌गुणोंकी अुपासना ही अुसका जीवनकार्य है और मानवताकी पूर्णता ही अुसकी जीवन-सिद्धि है।

८

प्रकृति, विकृति और संस्कृति

जीवनका महत्त्व

परमात्माकी अतर्क्य कलामें से विश्व और विश्वके असख्य छोटे-वडे पदार्थोंकी अुत्पत्ति हुअी है। अुसीमें से प्राणीसृष्टि तथा जीवसृष्टि निर्माण हुअी और अतमें मानव पैदा हुआ। अिन सवके कारण विश्वमे अनत विविधता दिखाअी देती है। अिस विविधतामें मानव-प्राणी जितनी विशेपता और महत्त्व दूसरे किसी भी प्राणीको प्राप्त नही हुआ है। मनुष्यका विलक्षण पुरुपार्थ देखकर परमात्माने अुसे पैदा करके अपनी कलाको सपूर्णता तक पहुंचाया है, अैसा कभी-कभी लगता है। वच्चा छोटा होता है तव तक माता-पिता अुसका पालन, पोषण, रक्षण और संवर्धन करके अुसको सव तरहसे सभालते है और वड़ा होने पर औरोकी तरह जीवन चलानेमे वह समर्थ होता है तव वे ही मां-वाप अुसे स्वतत्रता देकर अुसकी चितासे मुक्त हो जाते है। अुसी तरह मानवका निर्माण करनेके वाद अुसके कल्याणका कार्य परमात्माने अुसे ही सौप दिया है अैसा लगता है। कुछ तात्त्विक ग्रथोमे मानवको परमात्माका अश कहा गया है। जिन जिन कार्योंको परमात्मा करता है, अुन कार्योंको अल्प प्रमाणमे करके मनुष्य अपना अीश्वरत्व सिद्ध करता है, अैसा कुछ संतोका भी कथन है। अिस कथनमे वहुत कुछ सत्य है अिसमे शक नही। परमेश्वरको अुत्पत्ति, स्थिति और लयका कर्ता कहा जाता है। मनुष्य भी कुछ निर्माण करता है, कुछ रक्षण करता है और जो वस्तु वह नही चाहता अुसमे

से कुछका नाश करता है। परमात्मा सृष्टिका कर्ता है। मनुष्य भी अपनी शक्ति और वुद्धिके अनुसार अपनी सृष्टिका निर्माता है। अिस दृष्टिसे मनुष्य अल्प प्रमाणमे औश्वरकी प्रतिकृति है, अैसा कहा जाता है। अिस तरहके महान कार्य करनेवालेको — सृष्टिकी या कमसे कम मानव-जगतकी अनर्थकारी बातोको नष्ट करके अच्छी बातोकी प्रतिष्ठापना करनेवालेको — औश्वरका अवतार, पुत्र या अुसका पैगवर माना जाता है। अैसे अवतार, पुत्र या पैगवरका जन्म मानव-कुलमे ही होता है। अिससे मानव-जीवनका महत्त्व हमारे ध्यानमे आना चाहिये। ससारमे जितने श्रेष्ठ पुरुष हुअे, साधु-सत हुअे, वे सब मानव-जीवनका महत्त्व जानते थे। सर्व-साधारण लोगोकी अपेक्षा जीवन-विषयक कुछ अुच्च तथा अुदात्त दृष्टि अुन्हे प्राप्त हुअी थी। अिसी कारणसे वे अपना जीवन अुदात्त बना सके थे।

दु ख-निवृत्ति तथा सुखप्राप्तिकी निर्दोष योजना

परमात्माने मनुष्यको कुछ विशेष शक्ति-सपन्न बनाया है और अुसे अपनी शक्ति बढानेकी अनुकूलता भी दी है। सृष्टिमें मनुष्य ही अेक अैसा प्राणी है जिसने प्राकृतिक धर्मोमे से अपने अनुकूल शक्तिया चुनकर अुनके अुपयोगसे प्रतिकूल शक्तियोसे अपना रक्षण करनेमे आशिक सफलता पाअी है। अनेक प्राकृतिक धर्मोके द्वारा मनुष्य अपने दु ख-निवारणके तथा सुखप्राप्ति और अुसकी वृद्धिके अुपायोकी शोध करता आया है। गरमी, हवा, वर्षा, सरदी आदि प्राकृतिक कष्टोसे बचनेके लिअे मनुष्यने घर बनानेकी कला सीखी है। व्याधियोका निवारण करनेके लिअे औषध-विद्याकी खोज की है। अन्य प्राणियोकी तरह नग्न अवस्थामे जन्म लिये हुअे मानवने अपने ज्ञान और कौशलसे केवल अपने शरीरको ढाकने तथा अुसके रक्षणकी ही नही, लेकिन भिन्न भिन्न प्रकारसे अुसे सजानेकी भी कला सिद्ध की है और अुसका विकास किया है। पचमहाभूतो तथा अुनसे परे सूक्ष्म तत्त्वोका भी अपने सुख-सुविधाके लिअे अुपयोग करनेकी स्पर्धा आज मानव-जातिमे चल रही है। भौतिकशास्त्र तथा विज्ञानका विकास करते-करते अुस क्षेत्रमे मानव आज आश्चर्यजनक स्थिति तक पहुच चुका है। दूर-दूरके गावो, प्रातो तथा देशोका ही नही, किंतु हजारो मील दूरके

खंडोंको भी मनुष्य अेक-दूसरेके निकट लानेका प्रयत्न कर रहा है। अिन सब विद्याओ तथा कलाओमे वह जितनी व्यवस्थितता और सुयंत्रितता साध चुका है अुतनी ओश्वर-निर्मित नैसर्गिक योजनामें भी दिखाओी नही देती। प्रकृतिकी तुलनामे मनुष्य द्वारा निर्माण की हुओी सृष्टिकी योजना और व्यवस्था अधिक अचूक है, अैसा कभी कभी अनुभव आता है। हजारो वर्षसे बारिश होती है, गरमी पडती है, सरदी पडती है, लेकिन वनस्पति-सृष्टि या जीवसृष्टिके लिअे अुपयोगी और मौसमके अनुसार हितप्रद अुनका कोओी प्रमाण सृष्टि-चालक आज तक निर्धारित नही कर पाया है, अैसी शका बीच बीचमे आनेवाले अनुभवोंसे होती है। अिसीसे कभी अतिवृष्टि तो कभी अनावृष्टि और अुसके कारण कभी गीला तो कभी सूखा अकाल, कभी अत्यत गरमी तो कभी असह्य सरदी जैसी आपत्तिया मानव-जाति और दूसरी जीवसृष्टिको भोगनी पड़ती है। अुसकी अपेक्षा मनुष्य द्वारा अपने दु.ख-शमन और सुखके लिअे निर्माण की हुओी विद्याओ और कलाओका प्रभाव ज्यादा अचूक दिखाओी पड़ता है। बबओी या अुसके सदृश दूसरे बडे शहरोको पानी या बिजली जैसी सुविधा पहुंचानेवाली योजना और व्यवस्थामे अूपर लिखे वर्षा, गरमी या ठड जैसे प्राकृतिक धर्मोंसे अधिक योजना-चातुर्य तथा व्यवस्थितता है, अैसा कहना चाहिये। अिस तुलनात्मक दृष्टातमे कुछ विनोदका अंश जरूर है। लेकिन मानवीय योजना और व्यवस्था कुदरती धर्मोसे अधिक सुयत्रित है, अैसा थोड़ी मर्यादा स्वीकारते हुअे कहना पडता है। क्योकि यह सब योजना और व्यवस्था मनुष्यके सुख-दु खका विचार करके की हुओी है और अुसका संचालन मनुष्यके हाथमे है। माअिक्रोस्कोप, टेलिस्कोप, टेलिफोन, वायरलेस, रेडियो, हवाओी जहाज, टेलिवीजन आदि बातोमे मनुष्य अधिकसे अधिक नियमितता और व्यवस्थि-तता लानेका प्रयत्न करता आया है। ज्यो ज्यो मनुष्यकी बुद्धि और योजना-शक्तिकी वृद्धि होती जायेगी, त्यों त्यो अुसके सभी व्यवहारोमे सुयंत्रितता और निर्दोषता आती जायगी और अुसका लाभ मानव-जातिको मिलता रहेगा, अैसा विश्वास होता है।

अूपरकी दृष्टिसे विचार करने पर अिस विषयमें मनुष्यकी प्रगति हुअी है, अिसमें शंका नहीं। लेकिन अिस प्रगतिको सही प्रगति तभी कहा जा सकता है, जब कि ये सब बातें मानवताके लिअे पोषक बनकर मनुष्यकी सर्वांगीण अुन्नतिके लिअे अुपयोगी हो सकें। यदि मानव-जातिमें मानवता बढानेके बदले अुसके बौद्धिक सामर्थ्यसे मानव-जातिके कुछ लोगोंकी या अेकाध वर्गकी सुख-सुविधामें बढती होती रहे, सत्ता और सामर्थ्य अुनके हाथमें रहता हो, तो अुन लोगोंमें या अुस वर्गमें मानवता न बढकर दानवता और विलास बढेगा और बाकीके तमाम लोगों या वर्गोंमें दीनता, हीनता, खुशामद, गुलामीकी वृत्ति और द्वेष तथा वैर जैसे दुर्गुण बढते रहेंगे। अिसमें मानवताके लिअे कहीं भी अवकाश नहीं रहेगा। केवल विद्या, कला, ज्ञान, धन, अैश्वर्य, सामर्थ्य या सत्ताकी वृद्धिके आधार पर मानवताका प्रमाण निश्चित नहीं किया जा सकता। भौतिक शास्त्रों तथा विज्ञानके विकासके साथ ही मानवीय मनका विकास और शुद्धि न हो, विद्या तथा कलाके विकासके साथ साथ हममें सत्यनिष्ठा, प्रामाणिकता तथा कर्तव्य-परायणताकी वृद्धि न हो, सामर्थ्यके बढनेके साथ ही हममें बंधुभाव और मैत्रीभाव जाग्रत होकर हमारे व्यवहारमें समता न आवे, तो हम सब मानवताकी ओर न जाकर दानवताकी ओर जा रहे हैं अैसा समझना चाहिये। बाह्य ज्ञानके साथ साथ हमें मानव-मन प्राप्त करना है, कौशलके साथ साथ हमें चारित्र्य और सद्‌गुण संपादन करने हैं, यह न भूलना चाहिये। मानवताका जो आदर्श हमारे सामने हो, अुसके लिअे हम सतत प्रयत्न करते रहें, तो ही हमारी सच्ची प्रगति होगी, यह हमें निश्चित समझना चाहिये।

सच्ची प्रगति किसे कहा जाय?

अिस प्रकारकी जागृति हममें रहे और मानव-जाति प्रगतिके मार्ग पर सदा चलती रहे, अिसके लिअे संतोंने प्रयत्न किये हैं। फिर भी मानव-मन सरल भावसे अुस मार्ग पर नहीं आ सका है। संसारमें समय समय पर पैदा हुअे सत्पुरुषोंने मानव-धर्मका ही अुपदेश दिया है। अुस धर्मको देश, काल, व्यक्तिकी विशेषता आदि भेदोंके कारण भले

जागृति, अंतर्मुखता तथा शोधन

ही भिन्न-भिन्न नाम मिले हो, फिर भी अुन सबका साध्य मानवता ही है। आजकी हमारी विकसित शक्ति और बुद्धिसे प्राप्त की हुअी भौतिक शास्त्रीयतासे वही साध्य हम अधिक आसानीसे साध सके, तभी ये सब बातें गौरवास्पद मानी जायेगी और हमारी प्रगतिके लिअे सहायक होंगी। अिसके विपरीत अिस विकासके कारण हमारी मानवताका नाश होता हो, हम अधिक स्वार्थी बनते हो और स्वार्थको साधनेके लिअे अधिक दुष्ट बनते हो, तो यह सिद्ध होगा कि हम अपने धर्मको भूलकर अवनत बन रहे है। अिसलिअे सही प्रगति किसे कहा जाय और किस मार्गसे जाने पर वह प्राप्त होगी अिसका हमे विचार करना चाहिये। तथा अन्तर्मुख बनकर अपना शोधन और समाजका निरीक्षण करके हमे अपनी आजकी स्थितिको ध्यानमे रखना चाहिये।

पुरुषार्थयुक्त संस्कृति

हर प्राणी अपने देहको सर्वस्व मानकर सुखी बननेका प्रयत्न करता है। अपने सुखके सामने वह दूसरी किसी भी बातको महत्त्व नही देता। यह स्थिति मानवेतर प्राणियोको लज्जाजनक नही मालूम देती। लेकिन परमात्माने जिससे श्रेष्ठ और साधन-संपन्न प्राणी दूसरा कोअी नही बनाया, अुस मनुष्यको अपने लिअे यह स्थिति शोभास्पद नही किंतु लज्जाजनक मालूम होनी चाहिये। दूसरे प्राणियोकी तरह जड, मूढ और कुदरती अवस्थामें मनुष्यने जन्म लिया हो तथा दूसरे प्राणियोकी तरह अुसमें भूख, प्यास और नैसर्गिक प्रेरणाये तथा आवश्यकताअे हो, तो भी अब वह केवल कुदरती अवस्थामे नही रहा और अपनी नैसर्गिक प्रेरणाअे और जरूरते पूरी करनेका मार्ग भी अुसने नैसर्गिक नही रखा। दूसरे प्राणियोको अुनकी प्राकृतिक प्रेरणाओके लिअे लज्जा या गौरव जैसा कुछ भी नही लगता। अथवा किसी भी स्थितिके लिअे अभिमान महसूस नही होता। लेकिन मनुष्य हजारो वर्ष पूर्व अिस स्थितिसे निकल गया है और तभीसे वह वल्कलका या वस्त्रका अुपयोग करना सीखा है। अग्निकी अुपयोगिता अुसी समयसे अुसके ध्यानमे आअी है। समूहमे रहकर वह सामूहिक धर्मका निर्माण करता आया है। केवल कुदरती धर्मोका अनुसरण न कर, अुसी पर अवलंबित न रह कर बौद्धिक शक्तिकी

सहायतासे कठिनाअिया दूर करनेके प्रयत्नमें अुसमें कुछ कमिया या दुर्बलताअें आअी हो, और केवल निसर्ग पर निर्भर रहनेकी अुसकी शक्ति कम हुअी हो, तो भी बौद्धिक तथा मानसिक सामर्थ्यसे वह मानवको शोभा दे, अैसी अेक जीवन-पद्धति निर्माण करता आया है। अुस जीवन-पद्धतिके लिअे जिन सस्कारोकी आवश्यकता है, अुन्हे प्राप्त करनेका अुसका प्रयत्न चल रहा है। अिन सवको सहायतासे जो जीवन-पद्धति बनती है, अुसे ही मानव-सस्कृति कहा जाता हे। अिस प्रकारकी सर्वगुण-सपन्न, तेजस्वी, पवित्र, प्रभावशाली और पुरुपार्थयुक्त सस्कृति मनुष्यको बनानी है। यह सस्कृति मानव-धर्मका आधार है। अैसी अुत्तरोत्तर तेजस्वी, सामर्थ्य-शाली और चिरतन काल तक टिकनेवाली सस्कृति निर्माण करनेका काम मनुष्य मात्र सके, तभी मानव-जाति चिरतन बन सकती है।

मानवताकी पूर्णता किसमें है?

मानवका जन्म अिसीलिअे है कि वह अैसी सस्कृतिका निर्माण करे, और हजारो वर्पसे वह अिस ध्येयके पीछे लगा हुआ हे। जो अिस ध्येयको समझकर अुसके अनुसार जीवन विताते हैं, वे मानवताके अुपासक हैं। अुसी ध्येयके लिअे अपने बालकोंको विशिष्ट प्रकारके अच्छे सस्कार देनेका वे प्रयत्न करते हैं। मनुष्यके अतिरिक्त दूसरे प्राणी बरतन, घर तथा वस्त्र नही बना सकते, वे विद्या, कला, शास्त्र, तत्त्वज्ञान आदि कुछ भी नही जानते। समाज बनाकर कोअी दूरगामी ध्येय प्राप्त करनेकी कल्पना भी अुन्हे नही आती। लेकिन मनुष्यने ये सब बातें सिद्ध की है। वह जो सस्कृति निर्माण करनेके प्रयत्नमें लगा है, अुसके लिअे अिन सब बातोकी आवश्यकता है। केवल प्राकृतिक अवस्था अुसे लज्जाजनक मालूम देती है। कपडे न हो, समय पर अच्छा खानेको न मिले, रहनेको घर न हो, पासमे कुछ सग्रह न हो, समाजमे प्रतिष्ठा न हो — आदि स्थितियोमें से कोअी भी स्थिति अुसे लज्जाजनक लगती है। केवल नैसर्गिक जीवन छोडनेके कारण मनुष्यकी प्रगति हुअी है और अुसमे अुसे धन्यता अनुभव होती है। अिस दृष्टिकोणसे विचार करने पर दिखाअी देता है कि केवल प्राकृतिक नियमसे बरतनेवाले मनुष्यके अतिरिक्त दूसरे सभी प्राणी प्राकृतिक प्रेरणाके

अनुसार चलते है। अुन प्राकृतिक प्रेरणाओकी वृद्धि तथा क्षय करना अुनके वशमे नही है, अिस सबधमे अुनको कोअी कल्पना भी नही होती। प्रकृति-धर्म ही अुनकी जीवन-पद्धति और जीवदशा ही अुनकी सच्ची अवस्था है, अैसा कहनेमे कोअी भूल नही है। केवल प्राकृतिक अनुकूलता पर अवलवित न रहकर अपनी बुद्धि चलाकर सुख-सुविधाके साधन निर्माण करनेवाली अेकमात्र मनुष्य-जाति ही ससारमे है। अुनमे से कुछ लोगोका झुकाव प्राकृतिक अवस्थाको त्यागकर सुख-सुविधाके साधन निर्माण करके तथा अुन्हे बढाकर अुनकी सहायतासे प्राकृतिक प्रेरणाओको अधिकाधिक अुत्तेजित करने तथा विलासमय जीवन वितानेकी ओर है। सुखोपभोगकी अुत्तान अवस्था अुनके जीवनमे दिखाअी देती है। नैसर्गिक प्रेरणाओको अुत्तान और अुत्तेजित करके जीवनको विलासमय बनानेका अर्थ स्वाभाविक प्रेरणाओको विकृत बनाना है। अिस प्रकारकी जीवन-पद्धति मनुष्यको अवनत बनाकर मानवताके बदले अुसे दानवताकी ओर ले जाती है। अुसमे विकृतिका प्राधान्य रहता है। अत जन्म मनुष्यका होने पर भी अुसमे सदा जीवदशा ही बनी रहती है। लेकिन जीवदशा त्यागकर जिनका झुकाव प्रकृतिगत प्रेरणाओको शुद्ध और क्षीण करनेकी ओर होता है, जो सयमकी सहायतासे अनावश्यक प्रेरणाओका सपूर्ण क्षय करनेका प्रयत्न करते है, अुसके लिअे जो योग्य सस्कारोका आग्रह रखते है और जिनकी गति अुदात्त ध्येय सिद्ध करनेकी दिशामे होती है, वे मानव-सस्कृतिके अुपासक होते है। अिसलिअे अुनके जीवनमे मानव-सस्कृति व्यापक रूपसे दिखाअी देती है। अिस दृष्टिसे विचार करने पर मनुष्यके अतिरिक्त दूसरे प्राणियोकी जीवन-पद्धति प्रकृति है, स्वाभाविक प्रेरणाओको अुत्तेजित करनेवाली विलासयुक्त जीवन-पद्धति विकृति है, तथा अिन प्रेरणाओको नियत्रणमे रखकर अुन्हे क्षीण और आवश्यकतानुसार नष्ट करके मानवता सिद्ध करनेके लिअे आवश्यक पद्धति सस्कृति है। अैसे तीन भेद स्पष्ट रूपसे दिखाअी देते है। संसारमे भिन्न भिन्न अनेक धर्म है, फिर भी मानव-जाति विकृति और सस्कृतिके दो भेदोमे बटी हुअी है। हम बाहरसे किसी भी धर्मके कहलाते हो, लेकिन यह बात सच्ची प्रगति या मानवताकी दृष्टिसे महत्त्वकी नही है। क्योकि अुससे हम मानवताके सच्चे अुपासक है या नही अिसका निश्चय नही

किया जा नकता। लेकिन हमारे जीवनका झुकाव विकृतिकी ओर है या सस्कृतिकी ओर, अिस परसे हमारे जीवन-प्रवाहकी दिशा पहचानी जा सकती है।

अतर्मुख बनकर शोध करनेसे मालूम होगा कि हममें न तो केवल विकृति ही भरी है और न केवल मस्कृति ही भरी हुअी है। हममे दोनोका कम-अधिक प्रमाणमें मिश्रण रहता है। अिस परसे विकृतिको त्यागकर प्राकृतिक प्रेरणाओको भी शुद्ध और क्षीण बनाते हुअे, सस्कृतिकी वृद्धि करते हुअे और अुसे दृढ बनाते हुअे मानवताकी पूर्णताकी ओर जाना है, यह हमे निश्चयपूर्वक समझना चाहिये। चित्तशुद्धि और सद्‌गुणोका अुत्कर्ष मानवताका शिखर है। अुस शिखर तक पहुचनेकी शक्ति परमात्मा हमें दे।

९

दुःख-निवृत्ति और सुखप्राप्ति

मनुष्य तथा अन्य मब प्राणियोमें सुख-दु खका ज्ञान होता है। दु खके निवारण और सुखकी प्राप्तिकी अिच्छा भी मनुष्यकी तरह अन्य प्राणियोमे दिखाअी देती है। मनुष्यमें यह ज्ञान तथा यह अिच्छा स्पष्ट रूपसे दिखाअी देती है। दूसरे प्राणियोमे वह कम स्पष्ट यानी कुछ अशमें सुप्त होती है। दूसरे प्राणियोमें ज्ञान स्पष्ट दिखाअी देता है, लेकिन अिच्छा अुतनी स्पष्ट नही दिखाअी देती। कदाचित् वे मनुष्यकी तरह अपनी अिच्छाको प्रकट नही कर पाते, अथवा हम स्पष्ट रूपसे अुसे समझ न पाते हो। अिससे अधिक नही कहा जा सकता। किंतु अितना अवश्य कहा जा सकता है कि मनुष्य और दूसरे प्राणियोमे ज्ञान और अिच्छा दोनो है। मनुष्यके मन और अुमकी वुद्धिका विकास अधिक होनेसे अुसमे सुख-दु खका ज्ञान और अिच्छा दोनो तीव्र तथा विविध प्रकारकी होती है। मनुष्यमें भी बचपनमें ज्ञान और अिच्छाके प्रकार कम प्रमाणमे दिखाअी देते हे। ज्यो ज्यो अुसके मन और वुद्धिका विकास होता जाता है, त्यो त्यो ये प्रकार अधिक

तीव्र और विविध होते जाते है। शब्द, स्पर्श, रस, गध और रूपकी सवेदनाये मनुष्यको ज्ञानेन्द्रियोके द्वारा होती है। अनुकूल या प्रतिकूल सवेदनाओके अनुसार मनुष्यको सुख या दु:खकी प्रतीति होती है। अिसी तरह मानवीय अनुभव बताता है कि कुछ मानसिक भाव थोड़ा आनन्द तथा थोड़ा दु:ख और क्षोभ निर्माण करते है। मनुष्य दु:खकी निवृत्ति और सुखकी प्राप्तिका प्रयत्न करता ही रहता है। अन्य प्राणियोकी बुद्धि केवल नैसर्गिक तथा मर्यादित रहती है। अत: अुनमे अिस विषयके प्रकारो और प्रयत्नोमे विशेप वृद्धि नही हो पाअी है। मनुष्यकी बुद्धि ज्यो ज्यो वढती जाती है त्यो त्यो शव्द, स्पर्श आदि सभी विषयोके प्रकार वह वढाता जाता है। वह अुनसे प्राप्त होनेवाले सुखानुभवोको ग्रहण करता हे और अुनके कारण होनेवाले दु:खोको टालनेका प्रयत्न करता है। प्राकृतिक धर्मोको यथासभव नियत्रित करके दु:ख-निवृत्ति और सुखप्राप्तिके प्रयत्न वह अनादि कालसे करता आया है। अुसके ज्ञानकी वृद्धिके अनुपातमे अुसे सफलता भी अिस प्रयत्नमे मिली है। सृष्टिके धर्मोके बारेमे मनुष्यका ज्ञान पहलेकी अपेक्षा बढा है। भौतिक शास्त्रोकी, विज्ञानकी प्रगति आज वडी तेजीसे हो रही है। अनावृष्टि, अतिवृष्टि, अकाल, जल-प्रलय, अग्नि-प्रलय तथा असाध्य माने जानेवाले विभिन्न रोगोसे बचनेके लिअे पहलेकी अपेक्षा आज अधिक साधन अुपलब्ध है। नअी नअी दवाअियोके आविष्कारोके कारण मृत्युसख्या कम हो रही है। आज मनुष्य बहुत कम समयमे ससारके अेक सिरेसे दूसरे सिरे तक आसानीसे आ-जा सकता है। यातायातके साधन बढ गये है। अुनकी गति भी कल्पनातीत बढती जा रही है। मनुष्य अब पृथ्वीके गर्भमे खूब गहराअी तक पहुचने लगा है। पानीके भीतर और अूपर भी चाहे जहा वह जा सकता है। आकाशमे विहार करनेकी अत्यन्त तेज गति और शक्ति अुसने सिद्ध कर ली है। अन्न, वस्त्र, पात्र तथा अन्य जीवनोपयोगी वस्तुओका अुत्पादन भी पहलेसे वहुत अधिक और थोड़े समयमे हो रहा है। साथ ही मानव-सहारक साधनोकी अुग्रता, भयानकता और विध्वसकता भी चरम सीमा तक पहुच गअी है। मानवकी बौद्धिक शक्तिका यह आश्चर्यजनक प्रभाव है। अिन नव वस्तुओका निर्माण मनुष्यने दु:ख-निवृत्ति तथा सुखकी प्राप्ति

और वृद्धिके लिअे ही किया है। अिन सबके पीछे मनुष्यका यही अेकमात्र अुद्देश्य रहा है

विचार करने पर मालूम होता है कि मानवके सुख-दु खोके कारणोके तीन प्रकार है (१) निसर्गकी अनुकूलता और प्रतिकूलता। (२) मानव तथा अुसके लिअे अुपयोगी और अनुपयोगी पशु आदि प्राणियोकी अनुकूलता और प्रतिकूलता। तथा (३) मनुष्यके अपने मनकी स्वाधीनता और पराधीनता। मुख्यत अिन्ही तीन बातोंमें मनुष्यके सुख-दु खके कारण मिलते हैं। निसर्ग, सृष्टि और पच महाभूतोके गुणधर्म जानकर तथा अुनकी अनुकूलतासे लाभ अुठाकर प्रतिकूलतासे अपने रक्षणके अुपाय मनुष्य खोज लेता है। सरदी, गरमी, हवा, बारिश आदि अुपद्रवोसे बचनेके लिअे पहले मनुष्य गुफाओंका आश्रय लेता था और वल्कलका अुपयोग करता था। किंतु बढे हुअे तथा बढनेवाले ज्ञानके कारण वह घर बनाकर अुपरोक्त कठिनाओंसे बाहर निकल गया है और अधिक सुख-सुविधासे रहने लगा है। चाहे जैसी भीषण बरसातमे भी वह मोटर, रेल, जहाज और वायुयानोकी सहायतासे सैकडो मीलकी यात्रा कर सकता है। अिस प्रकार अपने ज्ञानसे पच महाभूतोकी अनुकूलता प्राप्त करके वह प्रतिकूलतासे, सृष्टिके प्रकोपसे अपने आपको बचाता है। ज्वालामुखी तथा भूकप जैसी प्रलय-शक्तिसे बचनेका अुपाय भी वह कुछ अशोमें ढूढ सका है। अिस प्रकार दु ख-निवृत्तिके साथ ही साथ सुखके विभिन्न प्रकार और अुसके साधन अुसने निर्माण किये हैं। और अुनमें से प्राप्त होनेवाले सुखोको शाश्वत बनाने या अधिक समय तक टिकानेके मनुष्यके प्रयत्न चल रहे हैं। अन्न और फलोसे बने खाद्य तथा पेय पदार्थ अधिक समय तक अुपभोग्य बने रहे अिसके प्रयोग भी हो रहे हैं। मनुष्यके रूप, रग और शब्द नश्वर है। शब्द तो हवामे तुरत विलीन हो जाते है। लेकिन अिन सबको शाश्वत, चिरतन बनानेके लिअे मानवका प्रयत्न चल रहा है। अिसीलिअे कैमरा, ग्रामोफोन, रेडियो, सिनेमा जैसी कलाओका अुसने निर्माण किया है। अिन कलाओकी शोध यदि दो-तीन हजार वर्ष पूर्व हुअी होती, तो गौतम बुद्ध और महावीर जैसे महान पुण्य-पुरुषोके जीवन-चरित्र आज हम प्रत्यक्ष देख पाते। गौतम बुद्ध, महावीर, शकरा-

चार्य, ईसा, मुहम्मद, ज्ञानेश्वर, कबीर, नानक, तुकाराम और रामदास आदिके प्रवचन और सवाद हम आज भी सुन सके होते। अशोक, हर्ष-वर्धन, प्रताप और शिवाजी आदि प्रतापी विभूतियोंके कार्य आज प्रत्यक्ष हो रहे हो, अिस तरह हम अुन्हे देख सके होते। मानव मर्त्य है। अुसकी प्रवृत्तिया, हावभाव और शब्द क्षणभगुर है। फिर भी अुन्हे भिन्न-भिन्न प्रकारोसे अमर तथा चिरतन बनानेका प्रयत्न मनुष्य कर रहा है। अपने अनुकूल सृष्टिके धर्मोको अपनी आवश्यकताके अनुसार जाग्रत करके और बढाकर अुनका अपने सुखके लिअे अुपयोग करनेका मनुष्य निरतर प्रयत्न करता है और साथ ही प्रतिकूल गुणधर्मोको दूर करनेकी कोशिश भी वह करता है। और अुन प्रयत्नोसे बढती हुअी विध्वसक शक्तिका भी वह सुखकी चिरतनताके लिअे ही अुपयोग करता है।

दूसरे प्रकारके प्रयत्नोका हेतु है मनुष्यो तथा दूसरे प्राणियोकी अनुकूलता प्राप्त करके प्रतिकूलताको दूर करना। अिसी प्रयत्नमे से अपनेको सुखी बनानेवाले मनुष्यो तथा प्राणियोके पालन, पोषण, सवर्धन और रक्षणके और हिंस्र प्राणियोके तथा अुसके सुखका नाश करनेवाले और अुसे दु ख पहुचानेवाले मनुष्योके सहारके तरीके निकले है। अिन्ही प्रयत्नोसे अुसे मालूम हुआ कि अेकाकी रहनेकी अपेक्षा सघ या समूह बनाकर रहनेमे अधिक सुरक्षितता, अधिक निर्भयता और अधिक सुखानु-भव है। अिसी अवस्थामे मनुष्यके मनमे वात्सल्य, प्रेम, कृतज्ञता और अुदारताके भाव जाग्रत हुअे। अिसी प्रयत्नमे से अुसे सघशक्ति बढानेकी कल्पना सूझी। और अिसीमे से आगे चलकर कुटुब, जाति, ग्राम, प्रांत, देश, राष्ट्र आदि अेकसे अेक अधिक तथा व्यापक और बलवान संस्थाअे मानव-सृष्टिमे निर्माण हुअी। व्यापकताके प्रमाणमे मनुष्यमे अधिक प्रेम, धैर्य, शौर्य, साहस आदि भव्य भावनाअे पैदा होती गयी। अिन भावना-ओकी पराकाष्ठा अिस विचारमे प्रकट हुअी कि जिन्हे आत्मीय माना हो अुनके लिअे प्राणार्पण करके भी अुनका भरण, पोषण, वर्धन तथा रक्षण करना चाहिये। अपनेपनकी मूल सकुचित वृत्तिमे सघशक्तिके सामर्थ्यका जो अनुभव हुआ अुसके कारण ये भावनाअे जाग्रत हुअी। भाव-जागृति और अुसकी वृद्धिसे व्यापकता बढती गअी और व्यापकताकी वृद्धिके

साथ भावनाओकी भी वृद्धि हुअी। अिस प्रकारके अन्योन्य-सबधके कारण मानव-जाति आज अितनी विशाल बनी है। छोटी छोटी कुटुब-सस्थाओसे आगे चलकर विशाल कुटुब निर्माण हुअे। अनेक कुटुब मिलकर जाति बनी, जातिया मिलकर ग्राम बना — अिस क्रमसे अेकसे अेक अधिक व्यापक और समर्थ समाजरूपी सस्थाअे बनती गअी। अिन सबका मिलकर कभी प्रातके रक्षण या अभिमानके निमित्तसे तो कभी देशके, कभी भाषाके और कभी धर्मके रक्षण या अभिमानके निमित्तसे महान मानव-समाज बनता आया है। अैसी प्रत्येक घटनाके समय अपने माने हुअे मर्यादित समाजके पालन, पोषण और रक्षणके लिअे मनुष्य प्रेम, स्वार्थत्याग और अुदारता दिखाता आया है, और जिसे पराया माना अुस मानव-समूह तथा समाजके साथ अपनी सारी अुग्र और विनाशक वृत्तियो तथा शक्तियोका प्रयोग करके वह झगडता आया है। अिस तरहके 'अपने-पराये' के भेदके कारण कुटुबसे लगाकर राष्ट्र या महाद्वीप तक फैलनेवाले मित्र या शत्रुभाव पैदा हुअे है। अिसमे से कुटुबसे आरभ करके राष्ट्र तथा महाद्वीप तक अलग अलग व्यापक स्वरूपके सम्प्रदाय तथा धर्म निर्माण हुअे है। सप्रदाय या धर्मकी अुत्पत्ति पहले-पहल भले ही परलोकके सुख या कल्याणके हेतुसे हुअी हो, फिर भी अुस सप्रदाय या धर्मके माननेवालोकी दृष्टि प्रथम अिहलोकके दु खोसे मुक्ति, सुखकी प्राप्ति तथा सुखकी वृद्धि पर ही रहती है। यह हेतु सिद्ध हो अिसके लिअे प्रत्येक धर्म-सस्थापक या सप्रदाय-प्रवर्तकने सगठन पर बहुत जोर दिया है। केवल परलोकके कल्याणके लिअे सगठन या अधिक जनसख्याकी कभी भी जरूरत नही होती। अिन बातो पर विचार करनेसे मालूम होता है कि किसी भी सस्थाके लिअे, फिर वह सामाजिक हो, राजनीतिक हो या धार्मिक हो, लोकशक्तिकी और अुसके लिअे सगठनकी आवश्यकता होती है। अिह-लोकमे, अिसी जीवनमे दु ख-निवृत्ति और सुखप्राप्ति हो तथा स्थिरता और शाश्वतता सिद्ध हो — मानवकी अिन मुख्य स्वभावसिद्ध अिच्छाओसे ही कुटुबसे लेकर सपूर्ण मानव-जातिके अैक्य तककी कल्पनाये तथा भावनाअे निर्माण हुअी है। मनुष्योमे ज्यो ज्यो परस्पर प्रतिकूल भावोका नाश होगा और अनुकूल भाव बढते जावेगे, त्यो त्यो आपसमें अेकता [illegible]।

हमारे सुख-दु.खके कारणोमे अेक-दूसरेकी अनुकूलता और प्रतिकूलता अेक महत्त्वपूर्ण कारण हैं। अनुकूलताको बढाना और प्रतिकूलताको मिटाना हमारा कर्तव्य है। अिसलिअे अिस विषयमे हमे विवेकपूर्वक और साव-धानीके साथ प्रयत्नशील रहना चाहिये।

सुख-दु खके कारणोमे से तीसरा कारण अपने मनकी स्वाधीनता और पराधीनता है। मनुष्यके सुख-दु.खके लिअे जिस तरह निसर्गकी, मानव-समाजकी तथा दूसरे प्राणियोकी अनुकूलता और प्रतिकूलता कारणभूत है, अुसी तरह अपने मनकी स्वाधीनता तथा पराधीनता भी कअी बार कारणभूत होती है। पहले दो प्रकारके कारण बाह्य कारण है। लेकिन मनुष्यका मन और अुसका शरीर ये अुसके निकटवर्ती और अतर्गत कारण हैं। मनकी स्वाधीनताके साथ ही शरीरकी स्वाधीनता भी मनुष्यको प्राप्त करनी चाहिये। बाह्य वस्तुअे अुसके अनुकूल हों या न हो, लेकिन अुसका शरीर और मन तो अुसके अनुकूल होने ही चाहिये। अुसके बिना दु खकी निवृत्ति और सुखकी प्राप्ति सभव नही है। मनुष्य बाह्य प्रतिकूलताअे टाले और अनुकूलताअे प्राप्त करे, तो भी अुसके प्रयत्नमें यदि अुसका शरीर और मन साथ न दे, तो अुन प्रयत्नोसे कोअी लाभ नही होगा।

मनुष्यके कान, नाक, जिह्वा, आखे और त्वचा ये ज्ञानेंद्रिया तथा दूसरी कर्मेन्द्रिया शुद्ध और कार्यक्षम न हो, तो शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गधके सुखदायक प्रकारोका अुसे ज्ञान न हो सकेगा। अुसी तरह किसी भी सुख-दु खकी प्रतीति जिस मनके द्वारा होती है वह मन ही यदि शुद्ध न हो, तो केवल बाह्य साधनो और वस्तुओसे मनुष्य सुखी नही बन सकेगा। यह सब जानकर मनुष्यको अपने सुख-दु खके सच्चे कारणोका पता लगाना चाहिये। मनुष्यके अहकार या अविवेकके कारण अुसे लगता है कि अुसके किसी भी दु खके लिअे अुसका अयोग्य शरीर या अशुद्ध मन अथवा दोष कारण नही है, बल्कि दूसरे ही कोअी कारण हैं। अहकारके कारण शरीरकी अपात्रता, बुद्धिकी मंदता, मनकी मलिनता और अपने दोष मनुष्यके ध्यानमे नही आते। कदाचित् कोअी ये बाते अुसके ध्यानमे लानेका प्रयत्न करे तो भी मनुष्य अुन्हे स्वय अपने दोष

न नमझकर अपने भाग्यको — अपने पूर्वजन्मके कर्मोको — दोप देता है और अिमने छूटनेका प्रयत्न करता है। चाहे जो हो, आजका 'मै' अिन दु खका कारण नही हू, कदाचित् पूर्वजन्मका 'मै' अिसका कारण होगा — अितनी बात वह लाचारीसे स्वीकार करता है। लेकिन सुखोके लिअे केवल अुसका अपना पुरुपार्थ और अुसके अनेक सद्गुण ही सब तरहसे कारणभूत है, अैसा वह अहकारके कारण दृढतासे मानता है। अहकारके कारण मनुष्यकी सदसद्का विवेक करनेवाली बुद्धि निष्पक्ष नही रह सकती। अुसमें सतुलन नही रहता। सत्य पर वह टिक नही सकता।

लेकिन मनको स्वाधीन रखनेमे अुसके मार्गमें ये महान दोप बाधक है, यह बात मनुष्यके ध्यानमे आनी चाहिये। अिसलिअे पहले अुसे अपने दोपोका शोधन करना सीखना चाहिये। कोअी भी अप्रिय घटना घटे तो अुसके सही कारणोको ढूढनेकी आदत मनुष्यको डालनी चाहिये और अिस प्रयत्नमे अुसे प्रथम अपनेसे — अपनी ओरसे कारणोको ढूढनेकी शुरुआत करनी चाहिये। अिस प्रयत्नमें अपने खुदके प्रति न्याय-निष्ठुर हुअे बिना यह बात नही सध सकेगी। हम सबकी दृष्टि अधिकतर बहिर्मुख होनेके कारण अिस मामलेमे हमारी ओरसे हमेशा भूले होती है। अिस बातको ध्यानमें रखकर मनुष्यको सदा अतर्मुख बनना चाहिये और अपनी ओरसे होनेवाली क्रियाओ तथा विचारोको जाचनेकी आदत डालनी चाहिये। अतर्मुखता दर्पणके समान है। मनुष्य कितना ही ज्ञानी और होशियार हो, फिर भी अपने मुख पर क्या लगा है अिसे वह देख नही पाता। लेकिन दर्पणमें देखकर अेक मूर्ख मनुष्य भी अपने विपयमे जान सकता है। सुख-दु खके सच्चे कारणोको ही मनुष्य न समझे, तो अुस विपयमें वह सदा विपरीत दिशामे ही प्रयत्न करता रहेगा। दर-असल मनुष्यकी ओरसे कुछ बातोमे अब तक विरुद्ध दिशामे ही प्रयत्न होता रहा है। अिसीलिअे अिन प्रयत्नोमे अपने मनकी स्वाधीनताका महत्त्व मनुष्यके ध्यानमे आना चाहिये। अुसे अपनी निश्चित की हुअी सुख-दु खकी व्याख्याको भी अच्छी तरह जाचना चाहिये। हमारी वास्त-विक जरूरते और अभिलाषाअे क्या है, अिसकी जाच मनुष्यको करनी

चाहिये। अपनी आवश्यकताओ और अपनी अिच्छा, वासना, आशा और तृष्णाके बीचका भेद अुसके ध्यानमे आना चाहिये। हम जिन्हे दु:ख समझते है अुनके साथ दरअसल दु:खका कोअी संबंध न होने पर भी अपनी सुखभोगकी जीवन-पद्धतिके कारण तथा आरामका जीवन बितानेकी आदतके कारण कुछ सुविधाओके अभावको ही तो हम दु:ख नही समझते, यह शोधन हमे करना चाहिये। सुखकी जाच करते समय वह सुख है या स्वच्छदता है, सुखभोगकी जीवन-पद्धतिमे सदाचार कितना है और दुराचार कितना है, अिन सब बातोकी जाच करनेकी कला अुसे सीखनी चाहिये। मनकी स्वाधीनता विवेक और सयमका आश्रय लिये बगैर नही सधेगी। सयमके अभावमे जो दु:ख हमे सहने पडते है अुन दु:खोको असे सयमसे टालना आना चाहिये। शरीर, बुद्धि और मनकी शक्तिया तथा पावित्र्यका नाश करनेवाले सुखोको स्वच्छन्दता समझकर अुनके त्यागसे ही सच्चे सुखकी प्राप्ति होगी, यह मनुष्यको ध्यानमें रखना चाहिये। तभी मनकी स्वाधीनताका महत्त्व वह समझेगा और अुस मार्गसे सुख-दु:खके लिअे प्रयत्न करता रहेगा।

दु:ख-निवृत्ति और सुखप्राप्तिके प्रयत्नमे आज हम निसर्गकी सारी प्रतिकूलताओको दूर करके अनुकूलताअे साधनेके पीछे लगे हुअे है। मनुष्य तथा अन्य प्राणियोकी ओरसे पैदा होनेवाली प्रतिकूलताअे दूर करके अनुकूलताअे प्राप्त करनेके प्रयत्नमे हमने कुटुबसे लगाकर सपूर्ण मानव-जातिका समावेश हो सके अैसी सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक सस्थाअे निर्माण की है। अिस प्रयत्नमे मनुष्यको कुछ अशमें सयम, त्याग, सदाचार, प्रेम आदिकी अुपासना करनी पड़ी है और करनी पडती है। और अिसीलिअे वह मनकी स्वाधीनता कुछ अश तक साध सका है। क्योकि अुतनी स्वाधीनता साधे बिना समाज अेकत्र नही होगा और अुसका व्यवहार कभी चल नही सकेगा। लेकिन अुतनी स्वाधीनता सिद्ध करनेसे मेरा जीवन-विषयक कर्तव्य पूर्ण हो गया, अैसा मनुष्य न समझे। केवल तात्कालिक दु:ख-निवृत्ति और सुखप्राप्ति मानव-जीवनका हेतु नही है। किंतु अुससे भी अधिक श्रेष्ठ और अुदात्त हेतुके लिअे हमारा जन्म हुआ है। जितने अशमे हम मनकी स्वाधीनता साध सकेंगे,

अुतने ही अशमें हम सहज प्रसन्नता प्राप्त कर सकेंगे, मानवताके मार्गमे हम अुतने ही आगे वढेंगे और अुन्नत हो मकेंगे। मनकी स्वाधीनता साधनेमें यह अुद्देश्य होना चाहिये। वाह्य मुखके लोभ या दु:खके भयसे प्राप्त होनेवाली मनकी स्वाधीनता हमारा स्वभाव नही वन सकती। क्योंकि वाह्य वस्तुके प्रलोभन या दवावसे लाचार होकर अुसे प्राप्त करनेका हम प्रयत्न करते है। अिस कारणसे, सयम, प्रेम और त्याग हमारा स्वभाव नही वन सकता। और वैसा हमारा स्वभाव वने विना हम मानवता सिद्ध नही कर सकेंगे। मानवता सिद्ध करना हमारे जीवनका मुख्य अुद्देश्य होना चाहिये। दु:ख-निवृत्ति और सुखप्राप्तिकी अिच्छा तो सभी प्राणियोमें होती है। मनुष्यमे भी केवल अुतनी ही अिच्छा हो और जीवनभर अुमीके लिअे वह परिश्रम करता रहे, तो अुससे मनुष्यका मूल्य नही वढता। दु:ख-निवृत्ति और सुखप्राप्तिके प्रयत्नके साथ साथ मानव-सस्कृतिका विकास साधते रहना मनुष्य-जीवनकी दृष्टिसे मुख्य और महत्त्वकी वात है। यह विकास किस हद तक सिद्ध हुआ है अिस पर मानवके मूल्यका आधार है। यह विकास साधनेके लिअे मनुष्यको कभी स्वेच्छासे दु:खका स्वीकार करना पडेगा, तो कभी न्याय्य तथा अुचित सुखका भी त्याग करना पडेगा। अैसे समय सहन करने पडते दु:खोंको और सुखके त्यागको दु:ख न मानकर मानवताकी साधना ही मानना योग्य होगा। अुस दु:ख और त्यागमें कष्ट सहन करने पडे-तो भी अुसमे लाचारी या दीनताका भाव नही होगा, परतु गौरव और धन्यताका ही भाव होगा।

मनुष्यके सुख-दु:खके कारणोंके तीनो प्रकारोमे मनकी स्वाधीनताका वडा महत्त्व है। यह ध्यानमे रखकर दु:ख-निवृत्ति और सुखप्राप्तिके प्रयत्नोमें हमें अिस स्वाधीनता पर अधिक जोर देना चाहिये। अन्य दो प्रकारोमें मनुष्यने जो सफलता प्राप्त की है, अुसके लिअे वह धन्यताका पात्र होने पर भी अुस धन्यताके अुत्साहमे वह मानवताकी प्राप्तिके लिअे विशेष आवश्यक मनकी स्वाधीनताको न भूले — यही मेरी नम्र सूचना है।

१०

मानसिक नीरोगता

जैसे शारीरिक सौंदर्यकी दृष्टिसे आरोग्य महत्त्वपूर्ण विषय है, वैसे ही मानवताकी दृष्टिसे मानसिक नीरोगता महत्त्वपूर्ण विषय होनेके कारण अुसे ही प्रधानता देना अुचित है। जैसे शरीरका वजन या मोटापा शारीरिक आरोग्यका आधार नही है, वैसे ही धन, सत्ता, विद्या, कला या प्रतिष्ठा मानसिक आरोग्यके आधार नही है। बालक बडोकी अपेक्षा अुमरमें छोटा होता है और अुसकी शक्ति बडोसे कम होती है तो भी वह नीरोग होता है, और सम्भव है बड़े अधिक शक्तिवाले होने पर भी नीरोग न हो। अिसी तरह जिनका मानसिक स्वास्थ्य अुत्तम हो, अुनका मन धन, विद्वत्ता, बल, प्रतिष्ठा जैसी कोअी विशेषता न होने पर भी निर्मल होगा। निर्मल मनमे बसनेवाली दया, क्षमा और शाति अुनके पास होगी। अिसलिअे धनादि न होने पर भी अुनके पास मानवता होगी, मानसिक स्वास्थ्य होगा, और जिनके पास धनादि है, सभव है अुनके पास मानसिक स्वास्थ्य न भी हो।

परमात्माने हमे सकल्प-शक्ति दी है। यह अुसकी हम पर महान कृपा है। अुस शक्तिसे हम कअी महान संकल्प करते है और पूरे भी कर सकते है। चाहे तो हम धनी, सामर्थ्यवान, विद्वान, कलाकार तथा विज्ञान-शास्त्री बन सकते है और चाहे तो सज्जन बनकर मानवता भी सिद्ध कर सकते है। अिस प्रकारकी शक्ति भगवानने हमें दी है। यह शक्ति हम सबमे सुप्तावस्थामे वास करती है। दृढ सकल्पसे यह शक्ति जाग्रत की जा सकती है। दृढ सकल्प और दृढ़ प्रयत्नोसे मनुष्य मनचाही सिद्धि प्राप्त कर सकता है। धनके पीछे लगनेवाले लोग अपार धन प्राप्त कर सकते है। विद्याके पीछे लगनेवाले विद्वान हो सकते है। बलके अुपासक बलवान हो सकते है। अिसी तरह मानवता-प्राप्तिकी अिच्छा रखनेवाले भी अपने प्रयत्नमे सफल होते है। सकल्पके अनुसार सिद्धि प्राप्त

करनेके लिअे पुरुषार्थ जरूरी होता है। कोअी भी सिद्धि पुरुषार्थके विना प्राप्त नही होती। गीताके १६ वे अध्यायमें दैवी और आसुरी सपत्तिके लक्षण वताये गये है। आसुरी सपत्ति प्राप्त करनेके लिअे भी पुरुषार्थकी आवश्यकता है। मानवता केवल पुरुषार्थ पर अवलवित नही है। अुसकी प्राप्तिके लिअे मानसिक नीरोगता यानी पवित्रताकी आवश्यकता है। अिसलिअे मानवताकी दृष्टिमे मानसिक नीरोगताका वहुत वडा महत्त्व है। अुसकी प्राप्तिके लिअे जीवन-सवधी हमारे सकल्पमे पवित्रता होना अत्यत आवश्यक है।

मनुष्य-स्वभाव कुदरती तौर पर कहिये या परपराके कारण कहिये भोगासक्त होनेके कारण अुसकी चित्तवृत्तिका प्रवाह भोगोकी ओर होता है। अिसलिअे धन, विद्या और कलाकी ओर मनुष्यका मन सहज रूपसे आकर्षित होता रहता है। मनुष्य समझता है कि अुनकी प्राप्तिसे सुख मिलता है और अुसीकी प्राप्तिका वह सदा प्रयत्न करता रहता है। अैसे प्रयत्नोमें सिद्धि प्राप्त करना अुसे कभी असभव नही लगता। आज विज्ञानकी प्रगति अिसी कारणसे हुअी है। मनुष्यकी अुस ओर सहज प्रवृत्ति ही अुसका मूल कारण है। अिस प्रयत्नमें वह असाधारण पुरुषार्थ करता है, लेकिन मानसिक अुन्नतिके लिअे मनुष्य अभी तक अितना प्रयत्नशील नही हो सका है। अुस ओर अुसके पुरुषार्थमें अितनी वृद्धि नही हो पाअी है। अिसलिअे मानसिक अुन्नतिकी वात अुसे असभव लगती है। लेकिन मनुष्य अपनी सकल्प-शक्तिका अुपयोग अुस दिशामे करके योग्य प्रयत्न करता रहे, तो मानसिक आरोग्य साधकर मानवताकी वृद्धि कर सकता है। अपनी सुप्त शक्तिको अिस हेतुसे मनुष्यको जाग्रत करना चाहिये। अपनी भोगासक्त वृत्तियोको पहचान कर अुसे पहलेसे ही सावधानीपूर्वक पवित्र और अुच्च सकल्प धारण करना चाहिये। दृढ निश्चय, सयम और पवित्रता पर श्रद्धा, सत्य और सद्गुणो पर निष्ठा तथा परमात्मा और मानवता पर विश्वास — अिन सवकी सहायतासे अपने सकल्पमें वल पैदा करना चाहिये। अिस प्रकारके सतत प्रयत्नसे अुसकी सकल्प-शक्तिमे वृद्धि होगी और वह सत्कर्मके रूपमें प्रकट होती रहेगी। यह प्रकटीकरण अुसके अपने तथा दूसरोके जीवनमे

सुख और शांति पैदा करेगा। मानव-जीवन अिस सिद्धिके लिअे है। कोअी भी दूसरी सिद्धि अिससे अधिक मूल्य नही रखती। अिसीके लिअे मानसिक स्वास्थ्यकी जरूरत है।

शरीरके लिअे जैसे शारीरिक स्वास्थ्यकी आवश्यकता है, वैसे मानवताकी दृष्टिसे मानसिक स्वास्थ्यकी जरूरत है। अिस स्वास्थ्यके विना धन, विद्या, सामर्थ्य जैसी कोअी भी विशेषता मनुष्य या मानव-जातिका कल्याण नही कर सकती। मानसिक स्वास्थ्यके विना दूसरी किसी भी विशेषताका सदुपयोग नही हो सकता। जो विशेषता मानवताका ह्रास करती है, अुससे मानव-जातिका कल्याण होना असभव है। अिसलिअे मानवताका विकास करनेवाली विशेषताको हमे महत्त्व देना चाहिये। अुसके लिअे सतत प्रयत्नशील रहकर हमे पुरुषार्थी बनना चाहिये। अिसे सिद्ध करनेके लिअे हमे पहलेसे ही जीवन-सबधी अुच्च आदर्श धारण करना चाहिये। आसुरी संपत्तिके पीछे न लगकर सज्जनताके — मानवताके मार्गसे चलनेका हमारा निश्चय होना चाहिये और आदर्श कल्पनाओका व्यवस्थित नकशा या योजना हमारे चित्तमे सदा रहनी चाहिये। घर बनानेका निश्चय करने पर पहले अुसका कल्पना-चित्र हमारे चित्तमे तैयार होता है और बादमे वह चित्र कागजो पर अुतरता है। घर पूरा होने तक अुसके बारेमे बढनेवाले ज्ञानसे मूल कल्पनामे अिष्ट परिवर्तन होता है; पहलेके नकशेमे भी फर्क होता है और अन्तमे अुत्तम सुविधाओंवाला घर तैयार हो जाता है। चित्र तैयार करनेवाले चित्रकारको या मूर्ति बनानेवाले शिल्पकारको भी अपने चित्तमे अपने अपने साध्यका कल्पना-चित्र खीचना पडता है, अितना ही नही, धनके पीछे पड़कर धनवान बननेके अिच्छुक, बलकी अुपासना करके बलवान बननेका प्रयत्न करनेवाले या कोअी भी विशेषता प्राप्त करनेकी अिच्छा रखनेवाले प्रत्येक मनुष्यको अपने अिष्ट विषयका और अपनी विशेषताका चिन्तन करना होता है। अिस चिन्तनसे ही अुस विशेषता या अिष्ट वस्तुका नकशा चित्तमे तैयार होता है। अपने-अपने आदर्शके अनुसार हर व्यक्ति प्रयत्नशील रहता है और सफलता प्राप्त करता है। मानवताका आदर्श जिसने दृढ़तासे स्वीकार किया हो, अुसे भी अिसी प्रकार सदा चितनशील

तथा प्रयत्नशील रहना होता है। तभी अन्तमे अुस प्रकारके आचरणसे मनुष्यको सफलता मिलती है।

अिस प्रकार अिस मार्गमें सफल होनेके लिअे मानसिक नीरोगताकी अत्यंत आवश्यकता है। मनकी निर्मलता और सद्गुणयुक्त पुरुषार्थ ये मानसिक स्वास्थ्यके लक्षण हैं। मनकी नीरोग अवस्थामें ही मानसिक पावित्र्य बढता है, जीवनके सारे व्यवहारोमे शुद्धि आती है। अिसी अवस्थामे मनुष्यमे प्राणीमात्रके प्रति प्रेम, नि:स्वार्थता, क्षमा और शांति रह सकती है। अिसी अवस्थामें मनुष्य निरहंकारी रह सकता है। करुणा अुसका सहज स्वभाव बनती है। निर्वैरता अिसी अवस्थामे सधती है। अपना और मानव-जातिका कल्याण करनेका सामर्थ्य मनुष्यको अिसी अवस्थामे प्राप्त होता है। कुल मिलाकर मनुष्य अिसी अवस्थामे मानव-धर्मके अनुसार आचरण कर सकता है। प्रयत्न करने पर अपनी अिच्छा और संकल्पके अनुसार सिद्धि प्राप्त करनेकी शक्ति परमात्माने हमें दी है। अुसका अुपयोग मनुष्यको अिस अवस्थाके लिअे करना चाहिये। परमात्मासे प्राप्त अिस भेंटका अुपयोग मानसिक स्वास्थ्य साधकर मानवताकी सिद्धिके लिअे ही करना कल्याणप्रद होगा।

११

भक्तिका शुद्ध स्वरूप

आज केवल अपनी ही अुन्नतिका विचार करनेंसे काम नही चलेगा। अपने विषयमे विचार करते समय हमे समाजका भी विचार करना चाहिये और वही हमारा धर्म है। हममे लवे अरसेसे सामूहिक हितकी दृष्टिसे विचार करनेकी पद्धति नही रही। अिस कारणसे ज़िन राष्ट्रीय और मानव-जातिके कल्याण-सवंधी भावनाओकी अत्यत आवश्य-

अध्यात्मसे सामूहिक भावनाओंका अभाव

कता है, अुनकी जड़ अब तक हमारे चित्तमे जम नहीं सकी है। अुसका कारण यह है कि जीवनके किसी भी क्षेत्रमे अपने और केवल अपने ही कल्याणका विचार करनेकी शिक्षा हमे मिली है। वही हमारा स्वभाव बन गया है। चाहे व्यवहार हो या हमारा माना हुआ परमार्थ हो, 'ससारमे कोअी किसीका नही', 'ससारमे हम अकेले आये है और अकेले ही जावेगे' अिसीको सर्वोत्तम सूत्र मानकर अुसे हम अपने जीवनका हेतु समझते हैं और अुसके अनुसार व्यवहार करते हैं। दुनियादारीमे हो तो धन, वैभव, सत्ता या सामर्थ्य प्राप्त कर स्वार्थ-साधन करते हैं और अगर परमार्थकी ओर मुडते है तो अीश्वर-प्राप्ति, आत्म-प्राप्ति या मोक्षके पीछे केवल अपने ही श्रेयकी अिच्छासे लगते हैं। सासारिक व्यवहार हो या परमार्थ, दूसरोका विचार करनेके सस्कार न पड़े होनेके कारण सामाजिक या राष्ट्रीय कार्य करनेके विपयमे हमारे श्रेष्ठ पुरुष हमे बार बार आग्रहपूर्वक कहते रहते है। फिर भी अुस ओर हमारा मन नही झुकता। हमारे तत्त्वज्ञान, भक्ति, योग आदि मान-वीय अुन्नतिके मार्गोमे भी व्यक्तिगत कल्याणकी कल्पना ही दिखाअी देती है। ससारके प्रति आसक्ति होनेके कालमे अुसके परिणाम हमारे परिवारवालोको कितने भुगतने पड़ते है, अिसका हम विचार ही नही करते। यदि किसी कारणसे हममे भय, अीश्वर-प्राप्तिके आनदकी अभि-लाषा, वैराग्य या भक्ति पैदा हो, तो अुन भावनाओका शमन करनेके लिअे जब हम ससारका त्याग करते है, तब बाल-बच्चोकी क्या दशा

होगी अिसका विचार भी हमारे मनमे कभी नही आता, वल्कि अिस प्रकारके वैराग्यमे धन्यता मानी जाती है। अिन सब वातोसे यह दिखाओी देता है कि हम अपनी वृत्तियोके गुलाम है, और हमारी अच्छी-बुरी वृत्तियो तथा हमारे भले-बुरे कृत्योका दूसरो पर — समाज पर — क्या असर होता है, अुसका हम विचार ही नही करते। विवेकपूर्वक काम करनेकी हमारी आदत ही नही है। सामूहिक हिताहितका विचार हमारे जीवनमें दिखाओी नही देता। कर्तव्य, जिम्मेदारी, दूसरोके सुखके लिअे आवश्यक अुदात्तता और अुदारता — अिन भावनाओंका मानो हमें पता ही नही है। अैसा लगता है कि अिन भावनाओंका हमारे अध्यात्ममें कोओी महत्त्व ही नही हैं।

नवधा भक्ति — भावतृप्तिके प्रकार

हमारी अैसी स्थिति अनेक वर्षोसे चली आ रही है। ओीश्वर-भक्तिकी कल्पनामे भी हम अपनी वृत्तियोको सतोष देकर केवल भाव-तृप्तिके आनदके पीछे लगे रहते है। अिन भाव-तृप्तिके प्रकारोको हम नवधा भक्ति कहते है। किंतु हमने कभी अिस वातकी जाच नही की, शोध नही की कि केवल भावतृप्तिके पीछे लगनेसे मानवताकी पूर्णता किस प्रकार हो सकती है? हमने मान लिया है कि मनुष्यकी अमुक शक्तियोको सकुचित वनाकर अथवा अुन्हे लगभग नष्ट करके केवल ओीश्वर-सवधी कल्पनामें ही मनको किसी तरह चिपकाये रखनेका प्रयत्न करते करते अन्तमें अुसीमें मनको लीन रखना अथवा कुछ समय तक तन्मयता साधना पुरुषार्थकी पराकाष्ठा है, चित्तकी अुच्च अवस्था है और वही मानव-जन्मका साध्य है। अैसी ही स्थिति पर अनेक काव्य रचकर और अनेक ग्रथ लिखकर अुसका महत्त्व वढाया गया है। अिस कल्पनाके साथ तन्मयता सधे, कुछ समयके लिअे चित्तका व्यापार वद हो जाय और अिस प्रकार अपनी कल्पनाके साथ अेकरूप हो जाय तो हम जन्म-मरणके चक्रसे छुटकारा पा सकते है — अैसी श्रद्धा हम रखते आये है और अुसे दृढ करते रहते है। अिस मान्यताके कारण भक्तिके द्वारा हमारा योग्य विकास नही हो पाया है। परमेश्वरके चरणोमें परिपूर्ण समर्पण ही भक्तिकी परिसीमा हो, तो ओीश्वर-सवधी कल्पनाके साथ तद्रूप वननेसे

या कल्पित आकारका भास होनेसे वह परिसीमा हम किस प्रकार प्राप्त कर सकते है? अिस कल्पना, भावना, चित्तकी अवस्था, भूमिका, अनुभव —अिन सबकी हम जाच नही करते। मानव-जीवन, अुसका व्यवहार, कर्तव्य, अुसके लिअे आवश्यक पात्रता, सद्‌भावना, सद्‌गुण, पुरुषार्थ, मनका विकास, समाज, हमारी भावी सन्तान, अुनका कल्याण आदि वातोंके साथ सर्वोत्तम मानी हुअी अिस स्थितिका मेल वैठानेका हम कभी प्रयत्न ही नही करते। अपनी कल्पनामे, भावनामे, लीन होना और अपनी तथा अपने निकटके जगतकी वास्तविक स्थितिका किसी भी अुपायसे विस्मरण करना — अिसे ही हमने जीवनका ध्येय मान लिया है।

आराधना, भक्ति द्वारा परमेश्वरमे तल्लीनता और अुसके दर्शनकी अभिलाषा

नवधा भक्ति अति प्राचीन कालसे हमारे यहा चली आ रही है, अैसी हमारी मान्यता है। अिसका प्रारभ कहा और कब हुआ यह वताना कठिन है। फिर भी अितना तो हम समझ सकते है कि मूर्तिपूजा शुरू होनेसे पहले भक्तिके वर्तमान स्वरूप नही रहे होंगे। निर्गुणको सगुण, सगुणको निर्गुण, निराकारको साकार और साकारको निराकार — अिस प्रकार चाहे जब और चाहे जिस तरह सुविधाके अनुसार अीश्वरको बना देना हमारे तत्त्वज्ञान और भक्तिमार्गके स्वाभाविक प्रकार है। अीश्वरको साकार मानकर भी अर्थात् अीश्वरसे जन्म लिवाकर, अुसे आकारयुक्त बनाकर भी हमे सतोष नही हो सका, तो हमने अुसकी मूर्ति बनाअी। अुसमे अीश्वरका अधिष्ठान माना। मत्रसे विधिपूर्वक अुस मूर्तिकी प्रतिष्ठापना करके अुसमे अीश्वरकी शक्ति, मंत्रका बल आदिकी कल्पना करके हमने अुसकी आराधना की। प्रत्येक मूर्तिको कोअी पूज्य नही मानता, लेकिन अुस मूर्तिकी स्थापना होने पर अुसमे देवत्व आ जाता है, अैसा हम मानते है। वैदिक मत्र और विधि-सबधी हमारी श्रद्धाका ही यह परिणाम है। कामनिकोंके मनमे अीश्वरके प्रति प्रेम नही होता, लेकिन अपनी कामनाके प्रति प्रेम होता है। निश्चित दिन, निश्चित तिथि और निश्चित विधिसे मूर्तिका पूजन करनेसे या तत्सबधी कुछ क्रिया करनेसे और दान आदि करनेसे अीश्वर हम पर प्रसन्न होता है और हमारी अिच्छाअे पूरी करता

है, अैसी कामनिकोकी श्रद्धा और मान्यता होती है। अिस प्रकारकी श्रद्धासे कुछ सिद्ध न होता हो, तो भी कुछ पुरोहितोको अर्थप्राप्ति तो होती ही है। अिस प्रकारकी आराधनामे से भक्तिके ये नौ प्रकार शुरू हुअे होगे।

श्रवण कीर्तन विष्णो स्मरण पाद-सेवनम्।
अर्चन वदन दास्य सख्यमात्म-निवेदनम्॥

कअी श्रद्धालु लोगोकी अितनेसे तृप्ति न होनेके कारण भक्तिके मधुर भक्ति जैसे दूसरे प्रकार भी निर्माण हुअे है। लेकिन अीश्वरके अवतार ओर अुसकी मूर्तिकी मान्यता न रहे, तो नौमे से भक्तिके कुछ प्रकार लुप्त हो जायेगे और अुनका आधार ही नही रहेगा। सासारिक लोगोको अुनके नित्य कर्मोसे हटाकर अीश्वरकी ओर अुनका चित्त लगानेके साधनके रूपमे अिन प्रकारोका न्यूनाधिक अुपयोग तो होता ही होगा। अवतारोकी कथाअे, अुनकी अुदात्तता, भव्यता, अद्‌भुतता, अुनके नैतिक अुपदेश — अिन सबका समाज पर अच्छा असर होता है, अिसमे सदेह नही। रामायण, महाभारत जैसे महान ग्रथोके नैतिक तत्त्व आजकी नअी दृष्टिसे हम समाजको सिखावे, तो अुसका बहुत अच्छा असर समाज पर हो सकता हे। अिन ग्रथोके मुख्य पात्रोके जैसी श्रेष्ठ विभूतिया ससारमें दूसरी किसी जगह पैदा नही हुअी। श्री रामचद्र और श्रीकृष्ण मानव-जातिके अितिहासकी अपूर्व विभूतिया हैं। अिसी तरह गौतम बुद्ध और वर्धमान महावीर स्वामी भी हमारे अितिहास-कालकी महान विभूतिया है। अितनी विभूतिया हमारे देशमे हो गअी, फिर भी अुनके चरित्र तथा अुपदेशोसे जो बोध हमें लेना चाहिये था वह हमने नही लिया। अुनकी मूर्तिमे कोअी विशेप सत्त्व है, पूजन-अर्चनसे वह जाग्रत होगा और परमेश्वर हम पर सतुष्ट होगा, अिस आशासे हम आज तक अुनकी भक्तिमे और तत्सबधी कल्पनामे ही अपनेको धन्य मानते रहे है।

निवृत्ति-परायण तथा निष्काम भक्तोकी क्रियाकाड पर अैसी श्रद्धा नही थी, लेकिन अुन्होने भक्तिके द्वारा परमेश्वरके चितनमे सदा तन्मय होनेका प्रयत्न किया है। अपनी वृत्तिको अेकविध करनेका वह प्रयत्न था। अुस प्रयत्नमे ही परमेश्वरके विषयमें भिन्न भिन्न भावोकी कल्पना करके अुनका

निष्काम भक्ति

आनन्द भी अुन्होंने प्राप्त किया। लेकिन अिन सबके मूलमे परमेश्वर अुन्हे दर्शन दे, यही अुनका मुख्य हेतु था। किसी भी अुपायसे प्रेमपूर्ण मनसे परमेश्वरका अखड चिंतन करते रहें, तो वह दर्शन देता है और अुसके दर्शनसे मोक्ष प्राप्त होता है, अैसी अुनकी श्रद्धा थी। किन्तु विवेक-पूर्वक अिन सब बातोंकी जाच की जाय तो अिसमे अनेक प्रकारके भ्रम दिखाअी देंगे। सबसे पहले जन्मकी प्राप्तिका कारण क्या है, अिसका निश्चया-त्मक ज्ञान न होने पर भी मोक्षका ध्येय परपरासे मानकर हम अुसके पीछे पडे है। किसीको भी मोक्ष प्राप्त हुआ हो, अिसकी निश्चित जानकारी न होने पर भी हम अुस ध्येय पर विश्वास करते आये हैं। हमारे अपने तथा दूसरोके दोषोके कारण तथा चित्तशुद्धि और सद्‌गुणोकी हम सबमे कमी होनेके कारण ससारके दु:ख निर्माण होते हैं। अिन दु:खोसे अूबकर और त्रस्त मानसिक स्थितिमे अीश्वर-प्राप्तिके आनदकी अभिलाषासे हम निवृत्ति स्वीकार करते है। अिस निवृत्तिमे चित्तको व्यवसाय चाहिये अिसके लिअे अथवा अीश्वर-सबधी प्रेम बढे और अुसका अखड चिंतन होता रहे अिसके लिअे भक्तिके अिन प्रकारोका हम आधार लेते हैं।

भक्तिके गलत प्रकार

भक्तिपथमे लगे हुअे कुछ लोग प्रवृत्ति-रहित स्थितिमे समय बितानेके लिअे गाजा, भाग और अफीमका अुपयोग करने लगते हैं; कुछ भजन-पूजनमे या गायन-वादनमे समय बिताते हैं। लेकिन सबका अुद्देश्य समय काटनेका ही होता है। अुनमे से जिनमे अीश्वर-दर्शनकी अिच्छा होती है, वे भिन्न भिन्न अुपायोसे अपने हृदयमे अीश्वरीय प्रेम जाग्रत करनेका प्रयत्न करते हैं। बच्चोके हृदयमे प्रेम और आनद निर्माण होते ही वे नाचने-कूदने लगते हैं। अुनके ये भाव हृदयमें समा न सकनेके कारण वे भिन्न भिन्न अगो द्वारा प्रकट होने लगते है। अिसके आधार पर नाचने-कूदनेसे प्रेम अुत्पन्न होगा, अैसी अुलटी मान्यता बनाकर कोअी भक्त भजन-कीर्तनमे अीश्वरके नाम पर नाचने-कूदने लगते हैं। समय बीतने पर वह अुनका स्वभाव बन जाता हैं। सब लोग अिस तरह नाचते-कूदते नही, अिसलिअे नाचना या कूदना भक्तिका लक्षण माना जाने लगता है। लेकिन अिसमें भक्तिसे अधिक संस्कार और आदतका ही सबध होता है। अुसे भक्तिका

लक्षण मानना जरूरी नही है। अिन सब बातोंका अुद्देश्य अपनी और अपने आसपासके जगतकी वास्तविक स्थितिका प्रयत्नपूर्वक विस्मरण करना और अीश्वर-सबधी किसी भी कल्पना और भावनामें लीन होना ही रहता है। अितने प्रयत्नके बावजूद भी अीश्वर-प्राप्ति नही होती अैसा जिनको लगता है, वे प्रयत्नपूर्वक कृत्रिम प्रकारोंसे मनमें व्याकुलता निर्माण करनेका प्रयत्न करते है। अन्न और निद्राका त्याग करके तथा सरदीके मौसममें जरूरी वस्त्रोंका त्याग करके वे जान-बूझकर अपना दु ख बढाते है और व्याकुलता पैदा करने लगते है। व्याकुलतासे अन्न-जल तथा निद्राका अपने-आप छूट जाना स्वाभाविक है, लेकिन नाचने-कूदनेकी तरह अिसमे भी अुलटा सिद्धात मानकर अन्न-जलके त्यागसे वे हृदयमे अीश्वरीय प्रेम बढानेका प्रयत्न करते है। अत्यत प्रेम-विह्वल होने पर अीश्वर दर्शन देता है, अैसा राधाके अुदाहरणसे वे मान लेते है। और अीश्वर-मिलनके लिअे अपनेको ही राधा मानकर स्वय श्रीकृष्णके विरहसे अत्यत व्याकुल होनेकी भावना रखते है। सपूर्ण रूपसे राधा बननेके लिअे वेश, भाषा, हावभाव, गीत, नृत्य — सबमें राधापन लानेसे हमारा मन राधारूप बनता है और बादमें श्रीकृष्णका दर्शन निश्चित होता ही है अैसी श्रद्धा वे रखते है। अिस प्रकारकी स्थिति हुअी कि दर्शन हुआ अैसा मान लेते है। भक्तिके नाम पर विचित्रताके ये सब प्रकार हमारे समाजमें चलते आये हैं। यदि समाजमें कोअी पुरुष अिस तरह स्त्रीका वेश धारण करके घूमने लगे, तो अुसके दिमागमें कुछ विकृति पैदा हो गअी है अैसा मानकर अुसका अिलाज किया जाता है, लेकिन भक्तिके नाम पर कोअी अैसी विचित्रता करे तो अुसे हम परम भक्त मानते है। परन्तु विवेकपूर्वक देखा जाय तो यह सब भ्रमके ही प्रकार है, क्योंकि मानव-जीवनके विकास तथा अुसकी पूर्णताकी दृष्टिसे अुनकी जरूरत नही है।

भक्तिकी विडम्बना

अूपर बताया गया है कि नवधा भक्तिके साधनसे मनुष्य अपने मनमे अीश्वर-विषयक प्रेम निर्माण करके सासारिक दु खोंसे कुछ विश्राम पाता है, साथ ही नीति तथा सदाचारके लिअे कुछ आधार प्राप्त करता है। अीश्वरके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करनेके लिअे और अुस ओरसे सन्तोष माननेके लिअे

भक्ति साधन बनती है। पूजन, अर्चन, भजन, नाम-स्मरण और गायन द्वारा वह कुछ सतोष प्राप्त कर सकता है। लेकिन दूसरी तरफ अिन साधनोके होनेवाले दुरुपयोग, अुसमे प्रचलित ढोगके प्रकारोसे जनताकी होने-वाली ठगाअी और दभके कारण होनेवाली नैतिक हानि आदिका विचार करने पर अिस प्रकारकी भक्तिका दूसरे पहलूसे विचार होना भी जरूरी है। खास करके अीश्वर-दर्शन और अीश्वरकी प्रसन्नताके लिअे निवृत्ति-परायण और भक्त कहलानेवालोंने भक्तिके जो भिन्न भिन्न प्रकार बढ़ाये है, अुनमे कही भी विवेकको स्थान नही है। अपने चित्तकी किसी भी कल्पनाको पवित्र और श्रेष्ठ मानकर और अुस पर अनेक प्रकारसे रग चढाकर अुसके लिअे जान-बूझकर कृत्रिम रूपसे विह्वल बनते है और अुसमे कृतार्थता भी महसूस करते है। लेकिन अिसमे मानवताका कोअी भी अुदात्त गुण दिखाअी नही पडता। भक्तिके अिन प्रकारोसे सच्ची भक्तिकी विडम्बना ही हुअी है।

भक्ति और अुपासनाका सच्चा स्वरूप

जिनके हृदयमे अीश्वर-सबधी प्रेम और निष्ठा है, वे अीश्वरका नाम निकलते ही हिलने-डुलने और नाचने लगे यह जरूरी नही है। आसू बहाने या मूर्च्छित होनेकी भी जरूरत नही है। यह सब गलत सस्कारो और आदतोका परिणाम है। अन्त करणमे अीश्वर-भक्ति हो, तो वह हमारे प्रतिदिनके स्वाभाविक कार्यो और कर्तव्योमे दिखाअी देनी चाहिये। अीश्वरके प्रेमसे यदि हमे मूर्च्छा आ जाय तो वह हमारी दुर्बलता है। हमारे हृदयमे अीश्वरका जितना प्रेम हो अुतने ही महान और असाधारण शक्तिके सात्त्विक कार्य हमारे हाथो होते रहने चाहिये। चैतन्यके सागर परमात्माकी शक्तिसे यदि हमे मूर्च्छा आये, यदि अितना ही कार्य हमसे सिद्ध हो, तो यह क्या भक्तिकी विडम्बना नही है?

भक्तिका सच्चा रहस्य समर्पणमे है, तथा गुण-ग्रहण या गुणोके अनुकरणमे है, अैसा माने और अिस तत्त्व पर ही भक्तिमार्गकी रचना की जाय, तो अीश्वरके प्रति मनुष्यमात्रमे रहनेवाला प्रेम, भाव, श्रद्धा, निष्ठा आदिका अुपयोग मानवीय गुणोकी वृद्धि करके मानवताकी पूर्णता साधनेमे किया जा सकता है। परमात्मामे हम जिन गुणोका आरोपण करते है, अुसके जिन गुणोका हमारी अुन्नतिके लिअे अुपयोग हो अैसी हम अिच्छा

रखते है, अुन गुणोको अपनेमें पैदा करनेका प्रयत्न करना ही भक्ति और अुपासनाका मुख्य लक्षण हमे समझना चाहिये। गुणोको अपनेमे अुतारना ही अुन गुणोके प्रति सच्चा प्रेम, सच्चा आदर और अुनकी सच्ची कदर है। अीश्वरके दयासिन्धुत्वका अुपयोग अपने लिअे करनेकी हम अभिलापा रखें, लेकिन हम अपनेमें दयाका विकास करनेकी कोशिश न करे, तो यह बात भक्त या अुपासक कहलानेवालेके लिअे शोभास्पद नही है। अत परमेश्वरके गुणोका विचार करके हम अुसमे जिन गुणोकी कल्पना करते है और अुसकी प्रशसा करते है, अुन सब गुणोसे युक्त होनेका प्रयत्न करनेमे ही सच्ची अुपासना और भक्ति है। अीश्वरको सद्‌गुण-सपन्न मानकर अुससे सदा याचना करते रहना भक्तिका लक्षण नही है। वह याचकता है। परमात्माकी दी हुअी शक्ति और बुद्धिका अुपयोग सदैव सत्कर्ममे और सद्‌गुण बढानेमे करना ही सच्ची कृतज्ञता है। परमात्माकी तुलनामे हमारी शक्ति अत्यत अल्प है, फिर भी ससारमें जहा जहा परमेश्वरकी कृपा हो रही है अैसा लगे, जहा जहा दया और क्षमाकी जरूरत हे अैसा लगता हो, वहा वहा वह अीश्वरीय कार्य हे अैसा समझकर अुसे शक्तिभर पूरा करनेके लिअे अपना सुख त्यागनेमें ही सच्चा समर्पण है। अहकारसे नही किंतु निरहकारितासे, नम्रतापूर्वक और सेवावृत्तिसे हम अैसा समर्पण कर सके, तो वही भक्तिकी परिसीमा होगी। अिससे अुन्नति, भक्ति, कल्याण और सार्थकताकी सभी अेकागी कल्पनाअे हमारे समाजसे दूर हो सकेगी। केवल अपने ही सुखका सस्कार तथा सत्कर्म और सद्‌गुणोका सवर्धन न करके गलत मार्गसे अपने ही भावोका शमन करनेका सस्कार दूर होगा। हम परमात्माके सच्चे अुपासक बननेके साथ साथ सद्‌गुणो और पुरुषार्थके भी सच्चे अुपासक बनेंगे। अिस विषयमे महापुरुषोके चरित्र दृष्टिके सम्मुख रखे तो हमे अुनसे कितना बोध, प्रेरणा और शक्ति मिल सकती है। श्री रामचद्रको तो वनवासमे जानेकी आज्ञा थी, पर लक्ष्मण और सीताको वैसी आज्ञा न होते हुअे भी अुन्होने रामके साथ वन जाना क्यो स्वीकार किया? भरतको राज्य मिला था, फिर भी अुसने रामरहित अयोध्यामे प्रवेश क्यो नही किया? अिन प्रश्नोके अुत्तरसे हमे काफी बोध मिल सकता है। लक्ष्मण तथा हनुमानने रामचद्रके लिअे तथा अुनके

कार्योंके लिअे कष्ट सहन करनेमें जीवन बिताया, वह सच्ची भक्ति है या आज हम जो नवधा भक्तिके काल्पनिक प्रकार निर्माण करके सतोष मानते है वह सच्ची भक्ति है? सामाजिक कर्तव्य-कर्मोंको औश्वरीय कार्य मानकर सद्भावनापूर्वक अुनके लिअे कष्ट सहन करना सच्ची भक्ति हे या औश्वरका केवल नाम लेते रहना और अुसमें सतोष मानना सच्ची भक्ति है? श्रीकृष्णने अर्जुनको जो अुपदेश दिया अुसका सार हमारी समझमे आवे, तो हमारे लिअे भक्तिके गलत मार्ग पर जाने या निवृत्ति लेनेका क्या कारण हो सकता है? आज हममे भक्तिकी जो कल्पना प्रच-लित है, वह श्री रामचद्र तथा श्रीकृष्णने अपने अनुयायियोंको कभी बताअी नही थी। किन्तु सासारिक दु खोको दूर करनेके अुचित अुपाय जिस समय हमे नही सूझे अथवा अैसा कोअी अुपाय हम कार्यान्वित कर नही सके, अुस समय स्वीकार की गअी निवृत्तिमें से आजकी प्रचलित भक्तिकी कल्पना निकली है। कर्ममार्गमे सुधार हो और गृहस्थाश्रमकी शुद्धि हो, अिसके लिअे समाजके रीति-रिवाजोमे और अुसकी मानसिक स्थितिमे परिवर्तन करनेका सामर्थ्य हममे होना चाहिये। वह सामर्थ्य न होनेके कारण सासारिक दु खोको टालनेके लिअे निवृत्ति-परायण बनकर काल्पनिक ध्येय स्वीकारनेका और केवल अपनी भावतृप्तिका यह पुरुषार्थहीन मार्ग निर्माण हुआ है। अिस प्रकार हममे व्यावहारिक हो या पारमार्थिक, लेकिन वैयक्तिक लाभकी कल्पना पैदा हुअी। तबसे लेकर आज तक वह अितनी दृढ होकर बैठी है कि बडी बड़ी विभूतिया पिछले पचास साठ वर्षसे सामूहिक हितका अुपदेश देती रही है, फिर भी हमारे मूल स्वभावमे विशेष परिवर्तन हुआ नही दिखाअी देता।

चित्तशुद्धि और सद्गुणों द्वारा व्यक्तिगत सुखोंका समर्पण ही भक्ति है

हम मानव है और मानवके रूपमे हमे जीना है, तो हमे व्यक्तिगत तथा काल्पनिक ध्येयका त्याग करना चाहिये। हमे हर प्रकारके भ्रमसे मुक्त होना चाहिये। शुद्ध विवेकको जाग्रत करना चाहिये। औश्वर-दर्शनकी और औश्वरके साथ तद्रूपता साधनेकी कल्पनामे से हमें बाहर निकलना चाहिये। हमारे पुरुषार्थ और सद्गुणोकी वृद्धि हो, अैसा व्यापक ध्येय हमें अपनाना चाहिये।

हमारे साथ साथ दूसरोका हित और कल्याण हो, अैसा मार्ग हमे स्वीकार करना चाहिये। अिस मार्गसे चलनेके खातिर आवश्यक अखड बल प्राप्त करनेके लिअे हमे सिर्फ ओीश्वर-निष्ठाकी जरूरत है। अुस ओीश्वर-निष्ठाके बल पर हम अपना जीवन सार्थक कर सकेगे। अिस ओीश्वर-निष्ठामे ही भक्तिका अतर्भाव है। चित्तकी शुद्धि और सद्-गुणोकी अुपासना द्वारा अपने व्यक्तिगत सुखोका समर्पण ही परमात्माकी श्रेष्ठ भक्ति है। अिस प्रकारकी भक्ति, निष्ठा, अुपासना हम साध सके, तो हमारा, समाजका तथा ससारका सच्चा अुद्धार होगा। ये बाते अेक-दूसरेसे भिन्न नही है, अैसा अनुभव होगा।

१२

आत्म-विश्वास और साध्य-साधनका विवेक

बम्बओी, ९–३–'३३

श्री

सप्रेम आशीर्वाद।

तुम्हारा अत्यत भावपूर्ण पत्र मिला, जिसका यथार्थ अुत्तर देना मेरी शक्तिके बाहर है। मै यह तो जानता था कि तुम्हारे हृदयमे सद्भावनायें है और परमात्माकी प्राप्ति या अुसका ज्ञान पानेके लिअे तुम व्याकुल हो, पर आजके पत्रसे तुम्हारे विषयमे मै अधिक जान सका हू। पहले मै यह नही जानता था कि मेरे लिअे तुम्हारे हृदयमे अितना अधिक आदर है।

तुम्हारी सद्भावनाअे देखकर मुझे सतोष होता है। लेकिन जब तुममे पूर्ण आत्म-विश्वास आवेगा तब मुझे अधिक सतोष होगा। मनुष्यकी अुन्नतिके लिअे जितनी सद्भावनाओकी जरूरत हे अुतनी ही आत्म-विश्वासकी भी जरूरत होती हे। मनुष्यमे ज्यो ज्यो सद्भावनाअे बढेगी, त्यो त्यो आत्म-विश्वास भी जरूर बढेगा, अैसा मुझे लगता है। अिसका यह अर्थ नही कि तुममे आत्म-विश्वासका सर्वथा अभाव है। लेकिन वह

भावनाओके आवेगमे दबा हुआ है। जब वह मुझे प्रकट रूपमें दिखाअी देगा तब अधिक सतोष होगा।

तुम्हारा मेरे प्रति अत्यत पूज्यभाव है। यह भाव मुझे भाररूप लगता है। मेरे प्रति तुम्हारा पूज्यभाव कम करनेके लिअे तुममे अधिक आत्म-विश्वास बढे, अैसी अिच्छा मैं रखता हू। मै मित्रताको पसंद करता हू। मित्र मित्रके प्रति जितना सद्भाव रखता है, अुतना यदि तुम मेरे प्रति रखो तो शायद अुसे मै सहन भी कर सकूगा। आशा है, मेरे लिखनेसे तुम्हे विषाद नही होगा।

पत्रमे तुमने दो प्रश्न पूछे है। अुनका अुत्तर सविस्तर न दू तो तुम्हे सतोष नही होगा। अैसे प्रश्नोके अुत्तर प्रत्यक्ष बातचीतमे देना ही मै ठीक समझता हू। लेकिन वह मार्ग तो आज खुला नही है।*

मै मानता हू कि योग्य साध्य और साधन मिलने पर मनुष्य धीरे-धीरे अुन्नति करता है। लेकिन तुम्हारे लिअे योग्य साध्य-साधन निश्चित करनेका काम कठिन है। अुसमे भूल होनेसे सभव है तुमको बार-बार दु:ख और निराशा सहन करनी पडे। साध्य-साधनका सुमेल हो तो मनुष्यकी अुन्नति अवश्य होनी चाहिये अैसा मुझे लगता है।

हमारा साध्य अुदात्त होने पर भी यदि हमें बार-बार दु:खी और निराश होना पड़े, तो हमारे साध्य और साधनमे क्या त्रुटि है अिस पर हमे विचार करना चाहिये। अेक व्यक्तिके लिअे जो साध्य-साधन योग्य होगे, वे दूसरोके लिअे भी होगे ही, अैसा नही कहा जा सकता। शायद अुन्हे नुकसान पहुचे। अिसलिअे तुम्हे अपनी शक्ति—योग्यताको समझकर अपने साध्य-साधन निश्चित करने चाहिये। अुसमे भी अनुभवके बाद आवश्यकता हो तो परिवर्तन करना चाहिये। अिस मार्गमे अुन्नति-सबधी व्याकुलता मुख्य बात है। योग्य साध्य-साधन मिलने पर मनुष्यकी पात्रता बढ़नी ही चाहिये। तुम्हारे प्रश्नका पूरा अुत्तर अिसमे नही आता। लेकिन योग्य साध्य-साधनके बारेमे विचार करने पर कुछ बाते अवश्य तुम्हारे ध्यानमे आवेगी।

---

* ये भाअी अुस समय जेलमे थे।

तुम्हारा दूसरा प्रश्न 'जिसके मनमें ओीश्वर-प्राप्तिकी प्रचंड ज्वाला भडक रही हो' आदिसे सम्बन्ध रखता है। अिस प्रश्नका अुत्तर देनेसे पहले मुझे समझ लेना चाहिये कि तुम किस अवस्थाको ओीश्वर-प्राप्ति समझते हो। अिसकी स्पष्टता करनेसे प्रश्नका अुत्तर देनेमे मुझे सहूलियत होगी। सभव है अिस प्रश्नका कुछ अुत्तर तो पहले प्रश्नके अुत्तरमें तुम्हे मिल जायगा। अिन सब बातो पर विचार करो और मनमें कभी निराशाको मत आने दो।

शुभचिंतक
नाथ

१३
व्याकुलता और योग्य साधना

बम्बओी, १०-८-'३४

श्री

सप्रेम आशीर्वाद।

आप क्या चाहते है, आपको किस बातका दु ख है, अिसका अुत्तर आपने दिया है। अुसमें आपने मेरे पास रहनेकी अिच्छा प्रकट की है और मनकी स्थिति निर्विकार हो जाय यही आप चाहते हैं — आदि बातें लिखी हैं।

अिसमें सदेह नही कि मनको निर्विकार बनाना जीवनभरका काम है। लेकिन निर्विकारता सधने तक आजकी तरह व्याकुल बने रहनेसे काम नही चलेगा। निर्विकारता साधना सबसे बडा और कठिन कार्य है। जिसे यह सिद्धि प्राप्त करनी है अुसके अन्तरमें कितना धीरज होना चाहिये, हरअेक सकटसे झगडनेके लिअे कितनी शक्ति और दृढताकी जरूरत हे, अिसका आप विचार कर सकते हैं। सफलताके लिअे मनुष्यमें व्याकुलताके अनुपातमे सहिष्णुता, प्रयत्नशीलता और धीरज होना चाहिये।

तो ही कार्य सफल होता है। केवल व्याकुलतासे मन और बुद्धिका विकास होना असंभव है। जब तक मुझसे आपकी भेंट न हो जाय तब तक निम्नलिखित बातों पर आप विचार करें और वैसा आचरण करनेका प्रयत्न करें।

प्रथम तो शरीरको स्वस्थ और यथासंभव निर्दोष रखनेका प्रयत्न कीजिये। जीवन-निर्वाहके लिअे कोअी भी शारीरिक या बौद्धिक किन्तु सात्त्विक कार्य प्रामाणिकतासे कीजिये। शरीरकी निर्दोषता तथा नीरोगतासे अुत्पन्न जितनी प्रसन्नता प्राप्त करना संभव हो अुतनी प्राप्त करनेका ओर सदा प्रयत्न कीजिये। अीश्वर-प्राप्तिकी या किसी भी प्रकारकी प्राप्तिकी केवल व्याकुलता बढानेवाला वाचन आप न करें। केवल भावनाओंकी तीव्रता बढानेवाले वाचनसे आपकी प्रसन्नता नहीं बढेगी। जिस साहित्यसे आपकी बुद्धि सूक्ष्म भेदोको समझनेवाली बने तथा विकसित हो, वैसा ही साहित्य पढ़ना अुचित होगा। भावनाओंके प्रमाणमें आपकी बुद्धिका विकास होना चाहिये। यदि वैसा न हो और केवल भावनाओंका ही जोर बढे, तो मन सदा व्याकुल रहेगा। यह स्थिति ठीक नहीं है। अिससे आपका कार्य सिद्ध नहीं होगा। बुद्धियुक्त यथार्थ प्रयत्न करनेसे ही मनको शांति मिलेगी। वैसा प्रयत्न न करके केवल व्याकुलता बढानेसे मनकी अशांति बढती रहेगी। मनुष्यके विकासके लिअे सद्भावनाओंको बढाना आवश्यक होता है, लेकिन वे केवल कल्पनामें ही न रहें। प्रत्यक्ष कार्यमें अुनकी परिणति होनी चाहिये। तभी वे सद्गुणका रूप धारण करती हैं।

मनुष्यको प्रयत्नशील बनकर सद्गुणोंकी वृद्धि करनी चाहिये। सद्गुण वही है जो सबके लिअे कल्याणप्रद हो। केवल अीश्वर-विषयक भावनाके बढनेसे मनुष्यकी अुन्नति नहीं हो सकती। दया, मैत्री, सरलता, परोपकार, सत्य, पावित्र्य आदि अनेक सद्भावनाओं तथा सद्गुणोंका विकास होते होते मनुष्यके हृदयसे क्षुद्र विकारोंका नाश होता है। जब तक गुणोंका पूर्ण विकास न हो, तब तक क्षुद्र विकार हृदयमें अंशतः रहेंगे ही। यदि विकारोंका नाश करना हो तो सद्गुणों — दैवी गुणोंकी वृद्धि करनी चाहिये। सद्गुणोंकी वृद्धि सतत प्रयत्नसे ही हो सकती है। मनको सदा जाग्रत रखकर यथार्थ प्रयत्न करनेसे ही सद्गुणोंकी वृद्धि हो

सकती है। केवल व्याकुलतासे वह सध नही सकता। केवल मेरे पास रहनेसे भी अिसमें सफलता नही मिलेगी। यथार्थ प्रयत्नसे ही वह सधेगा। आपकी मेरे प्रति जो श्रद्धा है अुसे मै आपको मेरे पास रखकर अधिक नही बढाना चाहता। आप मुझ पर अवलबित होकर मेरी आज्ञामे रहे, यह भी मुझे पसद नही। मै आपका श्रेय, आपका कल्याण चाहता हू। वह आप अपने प्रयत्नसे ही सिद्ध कर सकेगे, अैसा मेरा विश्वास है।

मनुष्यको अपनी अुन्नतिके लिअे विवेककी और निरीक्षण-शक्तिकी विशेप आवश्यकता रहती है। विवेक और निरीक्षण-शक्तिसे जो कुछ कल्याणप्रद दिखाअी दे, अुस पर चलनेकी दृढता मनुष्यमें होनी चाहिये। मनुष्यका कल्याण विवेक, निरीक्षण-वृत्ति तथा दृढता जैसे गुणो पर ही अवलबित रहता हे।

अूपर मैंने जो कुछ कहा है अुस पर आप विचार कीजिये। आपके हृदयमें जो व्याकुलता है अुसका निरीक्षण करके अुसके कारणोका स्पष्ट दर्शन करना आवश्यक होता हे। व्याकुलता अनेक मिश्र कारणोसे बढती है। अुसके कारण चाहे जितने हो, परन्तु वे सब आपके ध्यानमे आने चाहियें।

आप धैर्यवान और बहुत बहादुर हैं। आपको किसी भी बातसे भय नही होना चाहिये। डर काल्पनिक हे या सच्चा, यह निरीक्षण करके देख लेना चाहिये। आप विवेक-सपन्न बनें। आश्रम छोडकर आप दूसरी जगह जाना चाहते है, लेकिन मेरी सलाह हे कि आप कही दूसरी जगह न जाय। बेकार भटकनेसे कोअी लाभ नही। आप कही भी जाय, मन तो साथ रहेगा ही। सारे दोप मनमे ही भरे हैं। अपनी जगह पर ही रहकर अुसे सुधारना चाहिये।

शुभचिंतक
नाथ

१४

मित्रधर्म और अुसका दृढ़तापूर्वक पालन

ता० ११–२–'४१

श्री . . .

सप्रेम नमस्कार।

आपका ४ तारीखका पत्र तथा अुसके साथ भेजी हुअी पत्रिका भी मुझे ७ तारीखको मिली। अुसमे बताये हुअे काम अच्छे हैं। अिन कामोंसे गरीब कुटुबोको सहायता मिलेगी, अिसमे सदेह नही है। करने योग्य काम तो बहुत हैं। कअी कुटुब आज असहाय स्थितिमें जीवन बिता रहे है। आपमे वर्तमान परिस्थितिको पहचाननेकी सूक्ष्मता आये, आपका मन अधिक विशाल बने और अुसके प्रमाणमे आपकी योजकता बढे, तो आपका कार्य और भी अुपयोगी सिद्ध होगा। ज्यो ज्यो आपका अवलोकन और अनुभव बढ़ेगा, त्यो त्यो आपको कामकी नअी नअी योजनाअे भी सूझती रहेगी। जिस प्रभुने आपको सद्बुद्धि दी है, वही प्रभु आपको आगेका मार्ग भी बतावेगा और आपके कल्याणके साथ-साथ अनेकोंका कल्याण करेगा। कार्यमे बाधाये और आपत्तियां तो आती ही रहती है। फिर भी आपको कार्य पर निष्ठा रखकर धीरज रखना चाहिये। यह निष्ठा और धीरज ही अन्तमे आपको सफलताकी ओर ले जायेगे। आपके कार्यमें वहाके दो-तीन डॉक्टरोकी केवल हार्दिक ही नहीं परंतु सक्रिय सहानुभूति है, अुसी प्रकार अनेक सज्जनोकी सहानुभूति भी आपको मिलती रहेगी। आप जितना काम ठीकसे कर सके और कामका जितना बोझ अुठा सकें, अुतना ही कामका विस्तार तथा प्रकार आप बढाये।

आपके पत्रकी अेक बातसे मुझे बहुत दुख हुआ। आपका पत्र पढ़नेके बाद वही बात बार बार मेरे मनमे घूम रही है। क्या श्री . . के हाथसे अिस प्रकारका काम हुआ होगा? यह शका मनमे अुठती है, लेकिन विश्वास नही होता। आपके विचार या समझमे कोअी दोष, कोअी अुतावली तो नहीं हो रही है न? जिन्होने अनेक प्रसंगोमे आपके लिअे कष्ट सहन

किया, अुन्हींमें आपके अकल्याणकी वृद्धि क्यो पैदा हुअी ? मैं मानव-जीवनकी दृष्टिसे प्रेम, मैत्री, वात्सल्य, प्रामाणिकता आदि सद्भावनाओ तथा सद्गुणोको अत्यत महत्त्व देता हू। अुनमें कुछ दोष पैदा हो तो मुझे बहुत दु ख होता है। वैसा दोष मनुष्यकी तेजस्विता तथा सात्त्विकताको नष्ट करता है। अुससे मानवतामें कमी आती है। आपने लिखी है वैसी बात आपके विषयमें श्री   द्वारा सचमुच हुअी हो, तो मित्रके नाते अुन्हे जाग्रत करना मेरा कर्तव्य हो जाता है। मित्रका सद्भावना और सद्-गुणोकी दृष्टिसे होनेवाला पतन चुपचाप देखते रहना भी मित्रद्रोह जैसा ही है। यदि मैं वहा होता तो मैंने प्रत्यक्ष ही अिस विषयमे अुनसे बात की होती। यहासे पत्र लिखकर भी मैं अिस विषयमें अुनसे पूछ सकता हू। लेकिन मेरे लिखनेके पहले आपकी कुछ गलतफहमी तो नही हुअी, अिसका आप स्वय निरीक्षण कर ले।

आपको अिस समय कितना दु ख होता होगा, अिसकी कल्पना मैं कर सकता हू। अिसलिअे आपका मन शात हो, अिस अुद्देश्यसे मैंने यह थोडा लिखा है। यह सब होने पर भी आप श्री   के प्रति अपने मनमें शाति रखें। अुनका कल्याण हो अिसके लिअे भी आप अब तक चले आये सबधोमे किसी भी प्रकारका अन्तर न आने दें। अुनसे सचमुच कोअी मित्रद्रोह हुआ हो तो भी आपके सद्वर्तनसे किसी समय अुन्हे पश्चात्ताप होगा। और अुनमें सुधार होनेकी सभावना है। हमारा मित्र अधिक बुरा न बने, अिसके लिअे भी मित्रधर्म पर अधिक दृढ रहना जरूरी है। आप अिस मौके पर धीरज रखे और मनमें यह श्रद्धा रखे कि अुचित समय और योग्य सयोग सब बातोको कल्याणप्रद बना देंगे। दु खके कारण अस्वस्थता निर्माण होती है और अुससे मनमे रुक्षता और द्वेष पैदा होते है। ये दोष आपमे न आवे, अिसका ध्यान रखिये। अिसमें सदेह नही कि यह बात अत्यत कठिन है। अिस कठिनाअीका भान तो मुझे है, लेकिन साथ ही मुझे अिसका भी स्पष्ट भान है कि यह बात मैं किसे सुझा रहा हू। यह बात मैं आपको लिख रहा हू, जिन्होने अपने जीवनमे अैसी कठिनसे कठिन आपत्तिया सही है, जिनके कारण सामान्य व्यक्ति तो पागल ही बन जाय। आपने मनके अैसे

असाधारण ताप तथा क्षोभको मनकी सात्त्विकताने शांत किया है। आपसे मैं सदैव अुच्चतर सद्‌गुणोंकी ही अपेक्षा रखूंगा। जिस बरतावमें हमारी मानवता प्रकट हो और बढे, क्या वैसा बरताव करना ही हमारा धर्म नही है? अुसी धर्मके अनुसार मैं आपको यह लिख रहा हूं। यह प्रसंग आपके लिअे अपने मित्रधर्म और क्षमावृत्तिको टिकाये रखनेका है। मुझे विश्वास है कि आप अिसमें कोअी कठिनता नही मानेंगे।

पत्र लिखिये। मन स्थिति और कार्यके विषयमे बताअिये।

शुभेच्छुक
नाथ

१५

भावस्मृति और भ्रम-निरसनकी आवश्यकता

ता० १-८-'४४

श्री . . .

सप्रेम नमस्कार।

आपके अिस बारके पत्रने मेरे हृदयको अेकदम जाग्रत कर दिया। जीवनकी अनेक सुख-दु ख मिश्रित घटनाओंका स्मरण हो आया। अनेक महत्त्वपूर्ण प्रसग याद आये। अुनमे से कोअी प्रसग प्रेमपूर्ण था तो कोअी करुणापूर्ण, कोअी अुदारताका था तो कोअी गभीरताका; कोअी साहस-भरा था तो कोअी पावित्र्ययुक्त। आपके पत्रमें क्या नही है? कौनसी अुदात्त स्मृति नही है? सब कुछ है। अनेक सद्‌भावनाओ और सद्‌गुणोका दर्शन अुसमे है। अुसमे भक्ति है, ज्ञान है तथा कर्मका महत्त्व है और विवेक भी है, वह कृतज्ञता और श्रद्धाकी भावनासे तो प्रारभसे अन्त तक भरा हुआ है। आपका यह पत्र हमारे अनेक वर्षोंके सवधोका सक्षिप्त अितिहास ही है। आपके पत्रसे अनेक वर्षोंकी अनेक बाते, अनेक घटनाअे और अुनसे हमारे जीवनको, मिला हुआ मोड़ तथा आजकी प्राप्त परिस्थिति आदि सारे चित्र बार बार दृष्टिगोचर होते है।

आपने जीवनकी प्रत्येक महत्त्वपूर्ण घटनासे बोध ग्रहण करते-करते जीवनकी सफलता प्राप्त करनेके प्रयत्नमें आजकी स्थिति प्राप्त की, यह आप पर ीश्वरकी बहुत बड़ी कृपा है। आपने अपने पत्रमें जीवनके ध्येय और ज्ञानके निष्कर्षके बारेमें जो लिखा है वह मुझे ठीक मालूम होता है। अुसे आपने यथासंभव सरलतासे और सुसंगत रूपमें लिखा है। अुसे पढ़कर मुझे आपके प्रति धन्यता महसूस होती है। अिन सब बातोंसे मुझे आनंद होता है। खेद अेक ही बातसे होता है कि यह बोध और ज्ञान प्राप्त करके आजकी स्थिति तक पहुंचनेके लिअे आपको अनेक बार कठिन तापत्रय सहने पड़े हैं। अनेक अग्नि-परीक्षाओंसे गुजरना पड़ा है। परिस्थितिकी प्रतिकूलताके कारण कअी बार आपकी शक्तिका विपत्तियों और आपत्तियोंका सामना करनेमें व्यर्थ व्यय हुआ है। अिसका दुःख होता है। परन्तु प्रभुकी यही अिच्छा थी, अैसा समझकर अंतमें अिस विषयमें सन्तोष मानना पड़ता है।

आपमें कृतज्ञताका जो भाव है, अुसे देखकर संतोष होता है। लेकिन साथ ही खेद भी होता है कि आपके लिअे मुझे जितना करना चाहिये था अुतना मैं कर नहीं पाया। अिस बातका मुझे पूरा भान है। यही कारण है कि आपकी कृतज्ञता देखकर मुझे अपने प्रति लज्जा मालूम होती है। आपके साथ यथासंभव मैत्री रखनेका तथा आपके हितकी ओर ध्यान देनेका मेरा प्रयत्न रहने पर भी आपके जैसा अुत्कट प्रेमभाव मुझमें नहीं है, अैसा मुझे लगता है। मुझसे आपको यदि कुछ प्राप्त हुआ हो तो अुसका अधिकांश श्रेय आपकी गुणग्राहकताको और सद्-गुणोंके प्रति आपकी निष्ठाको ही है। प्रभु मुझे अपना कर्तव्य पूरा करनेके लिअे आवश्यक शक्ति दे यही प्रार्थना है।

आपके पत्रसे अेक बात स्पष्ट रूपसे ध्यानमें आअी। मनुष्यको जीवनमें अुचित समय पर सद्विचार और अुचित मार्गदर्शन मिलता रहे, तो अुसके परिश्रम, समय, द्रव्य आदि सबका सदुपयोग होता है और अुसका जीवन सफल होता है। बचपनमें हमें जो सुसंस्कार मिले, अुनका हमारे जीवन पर अच्छा परिणाम हुआ। हमारे जीवनमें वे कल्याणप्रद सिद्ध हुअे। किंतु आगे चलकर अध्यात्म-मार्गमें योग्य मार्गदर्शन नहीं

मिल पाया। अुसके अभावमे हमारी बहुतसी शक्ति व्यर्थ खर्च हुअी। यह मुझे अपने अनुभव और निरीक्षणसे स्पष्ट दिखाअी देता है। सदिच्छा रहते हुअे भी अुतनी मात्रामे मनुष्यका जीवन सार्थक नही होता। अिसके अनेक कारणोमे से अेक कारण यह भी प्रतीत होता है कि मनुष्यको ठीक समय पर अुचित मार्गदर्शन नही मिलता। अिससे वह कुछ कल्पना और भ्रममे पड़कर अुसीमे अुलझा रहता है। अैसी स्थितिमे वह अनेक रम्य, रसमय और दिव्य कल्पनाअे करता रहता है। हम किसी भी संप्रदाय या पंथके विषयमे विचार करे, तो आज भी यही स्थिति हमे दिखाअी देगी। जिस भ्रममे बहुतसे लोग पड़े हुअे हो, वह भ्रम अुन्हे भ्रम नही मालूम होता, किंतु ज्ञान और दिव्यता मालूम होता है। अनुभव, निरीक्षण, परीक्षण, विवेक और सारासार परखनेकी दृष्टि और शक्तिके बिना यह बात ध्यानमे नही आती। यदि ध्यानमे आ जाय तो भी अेक बार माने हुअे मत और पकडी हुअी बाते अहकारके कारण छोडना कठिन होता है। अिस प्रकारके अनेक कारणोसे भ्रम वैसे ही चलता रहता है, चलने दिया जाता है। सर्वत्र यही परंपरागत स्थिति चलती रहनेके कारण हमे अुसमे कोअी दोष नही दिखाअी देता। अिसके विपरीत, अुस परपराको चलाना ही धार्मिक कर्तव्य माना जाता है। अिस प्रकारका भ्रम सामुदायिक रूपसे चलता आता है, अिसलिअे अुसका निवारण असभव-सा लगता है। चित्तकी शुद्धि तथा सद्‌गुणोके अुत्कर्षमें ही मानव-जीवनकी सफलता है, यह बात अभी भी हमारे मनमे दृढतासे जमती नही है। अिसके कारण अूपर दिये गये है। मैने अपने विचार पहले आपको बताये थे। अपने विचार बताकर मैने आप पर कोअी अुपकार किया था अैसी बात नही। अुससे मुझे भी आनद मिला था। मेरे जैसा अनुभव आप सबको मिले और आपका जीवन अधिक व्यापक, पवित्र तथा विवेक-प्रधान बने, यही मेरी अिच्छा है और यही प्रभुसे प्रार्थना है।

शुभेच्छुक
नाथ

१६

व्रतोकी आवश्यकता

अुन्नतिके अभिलाषी मनुष्यके लिअे निग्रह-शक्ति यानी मानसिक दृढताकी अत्यत आवश्यकता होती है। मनकी आदत अिद्रियोके वेगोके अनुसार चलनेकी होती है। मनको अयोग्य मार्ग पर जानेसे रोकनेकी शक्ति सयम-शक्ति है। अिस शक्तिकी वृद्धिके लिअे हमारा निश्चयी बनना जरूरी हे। निश्चयी बननेके लिअे हमे कुछ नियम स्वीकार करने चाहिये। अिस प्रकारके नियमोको ही व्रत कहा जाता है। हेतुरहित तथा ज्ञानरहित व्रतो या नियमोके आचरणका अुन्नतिकी दृष्टिसे कोअी मूल्य नही हे, अिसलिअे वे कर्मकाड बन जाते हैं।

नियम दो प्रकारके होते हैं। अेक प्रकार है निषेधका। अुसमे त्यागका महत्त्व होता है। दूसरे प्रकारमे निश्चित कर्म करनेका आग्रह होता है। अुसमे कर्तृत्व और पुरुषार्थ पर जोर होता हे। श्रेयार्थीको दोनों प्रकारके नियमोसे अपना मानसिक बल-बढाना चाहिये।

सत्य, ब्रह्मचर्य, अहिसा, अपरिग्रह और अस्तेय ये पाच मुख्य व्रत माने गये है। आध्यात्मिक मार्गमे अिनका बहुत बडा महत्त्व है। सन्यास मार्गको अपनानेवाले विशेप रूपसे अिन व्रतोके पालनका प्रयत्न करते हैं। किन्तु मानव-समाजकी अुन्नतिकी दृष्टिसे विचार करने पर मालूम होगा कि अिन व्रतोकी आवश्यकता प्रत्येक मनुष्यके लिअे है। अिन व्रतोके पालनके बिना कोअी भी समाज सच्चा मानव-समाज नही बन सकता और न वह टिक सकता है। मानव-जातिकी अुन्नतिके लिअे आवश्यक सयम और सद्गुणोका अिन व्रतोमे समावेश हुआ हे।

जिन्होने कर्ममार्ग त्यागकर सन्यास ले लिया है, अुनके लिअे सत्यासत्यके प्रसग जीवनमे बहुत कम आते है। सत्यकी जरूरत व्यवहारमें ही पडती है। सत्य, सयम, प्रेम, दया, परिमित परिग्रह, प्रामाणिकतासे आजीविका-प्राप्ति आदिकी जरूरत व्यवहारमे ही रहती है।

सत्यसे ही हम सबका व्यवहार निर्दोष, सरल, सुसगत तथा किसीको हानि न पहुचे अिस तरह चलाना सभव है। लोगोंके परस्पर व्यवहारमे प्रेम, विश्वास, अैक्य, संगठन, प्रामाणिकता आदि सद्‌गुणोकी जरूरत होती है। सत्याचरण करनेवालोंमें धैर्य, सहनशीलता और सादगी आदि सद्‌गुण होने चाहिये। अेक सद्‌गुणको अपनाने पर दूसरे अनेक सद्‌गुणोकी साधना करनी पडती है। वे अेक-दूसरेके आधारसे खिलते है। सद्‌गुणोके आधार पर ही मानव-समाज टिक सकता है। समाजमें जब सत्य घटता है तो अधाधुधी, अव्यवस्था, क्लेश, झझट तथा झगड़े पैदा होते है। तब समाजके नियमनके लिअे अनेक कानून और नियम बनाने पड़ते है। मनुष्योके दोषो तथा दुर्बलताके कारण यह सब करना पडता है। कानूनके अमलके लिअे अलग अलग विभाग खोलने पड़ते है। अिन सबका खर्च मानव-समाज पर पडता है। हम रेलके टिकटका जो मूल्य चुकाते है, अुसमे केवल हमारा किराया ही नही होता, पर बिना टिकिटके मुसाफिरी करनेवालोको रोकनेकी व्यवस्थाका खर्च भी सम्मिलित होता है। अिस दृष्टिसे विचार करने पर मालूम होगा कि आज जिस प्रकार मानव-जातिका आचरण हो रहा है अुससे कितनी शक्ति, द्रव्य और समयका व्यर्थ खर्च होता है। यदि हम सत्यके अुपासक बन जाय तो हम पर अकारण लगनेवाले करोमे बहुत कमी हो जावेगी। सत्य हर मनुष्यको प्रिय होता है। चाहे वह लालच, कमजोरी या किसी प्रलोभनके कारण सत्य मार्गसे दूर रहता हो, फिर भी अुसकी यह अिच्छा रहती है कि वह जिनके भी सपर्कमे आता है, वे अुसके साथ सत्यका ही व्यवहार करे। असत्यका आचरण करनेवालेके साथ सबंध आने पर हमे निर्भयता नही मालूम होती। अिसलिअे असत्यके सबधकी कोअी अिच्छा नही रखता।

सत्य

ब्रह्मचर्यका मतलब है सभी प्रकारका सयम। छोटी-बड़ी सभी वासनाओका सयम साधे बिना ब्रह्मचर्यकी साधना सभव नही है। गृहस्थके लिअे आरोग्य आवश्यक है। अुसे मितव्ययी भी होना चाहिये। अुसमे नियमितता होनी चाहिये। यह सब सयमके बिना सभव नही। भोगेच्छाका नियमन ही

ब्रह्मचर्य

सयम है। भोगोकी ओर मुडनेवाली वृत्तिको वशमें किये विना सयम सध नही सकता। मानव-जाति स्वैर-विहार करने लगे और धर्म-अधर्म, भला-वुरा, योग्य-अयोग्य, अुचित-अनुचितका कुछ भी विचार न करके स्वच्छदी वन जाय, तो वह ससारमे टिक नही सकेगी। अत मानव-जातिकी अुन्नतिके लिअे हर व्यक्तिको अपनी अिच्छा, वासना, आशा आदिको अकुशमें रखनेकी जरूरत है। अिनका योग्य नियमन ही सयम है।

अहिंसामे किसी भी प्राणीको दु ख न देना तो आता ही है, पर दु ख पहुचानेका विचार भी मनमें नही अुठना चाहिये। वैर, द्वेप, कलह आदि दुर्गुण मानव-जातिका नाश करनेवाले है। अहिंसा, प्रेम, दया, करुणा आदि सद्‌गुण मानव-जातिके अस्तित्वके लिअे अत्यत आवश्यक है। हमे दूसरा कोअी दु ख दे यह अच्छा नही लगता। दूसरे हमें सुख दे यह अिच्छा हम रखते है। अहिंसा सवको प्रिय हे। मानव-जातिकी वृद्धि हिंसासे नही, अहिंसाके प्रतापसे हुअी है। क्षमा, करुणा, अुदारता आदिका अहिंसासे गहरा सवव है। अहिंसाके साथ साथ दयाका विकास हो, तभी अहिंसाकी वृद्धि होती हे। अहिंसाका अर्थ 'हिंसा न करना' अितना ही किया जाय, तो व्यक्ति या समाजकी अुन्नति नही हो सकती। अहिंसा अभावात्मक सद्‌गुण है। वह केवल निपेधात्मक आज्ञा है, मन पर नियत्रण रखनेकी रीति हे। वैसा किया जाय तो आगे चलकर निष्क्रियता पैदा होनेकी सभावना है। अिसलिअे अहिंसाके साथ दयाका आग्रह होना ही चाहिये। दयाभावमे क्रियात्मकता है। अहिंसा और दयाके विना मानव-जातिमे प्रेम-सवधका विकास नही होगा। जिसके लिअे दया पैदा होती हे अुसके लिअे हमारे मनमे समभाव अुत्पन्न होता है। दया, प्रेम, मैत्री, अुदारता ये सव समभाव निर्माण करनेवाले गुण है। अिसलिअे अहिंसा, सत्य, दया और प्रेमकी आवश्यकता है।

सन्यासीके अपरिग्रहके विपयमे सूक्ष्म विचार करने पर मालूम होगा कि वह सच्चा अपरिग्रह नही हे, क्योकि अुसका जीवन दूसरोके परिग्रह पर चलता हे। मनुष्यके नाते अपने निर्वाहके लिअे आवश्यक चीजे प्राप्त करनेमे दोप नही है। सदा-

चारसे जीनेके लिअे, कुटुबके निर्वाहके लिअे और कठिन समयके लिअे जो सग्रह करना पडता है, अुसे लोभ या सदोप परिग्रह नही कहा जा सकता। लेकिन जरूरतसे अधिक वस्तुओंकी प्राप्तिमें लोभ है ओर अुनके जरूरतसे अधिक अुपयोगमें अुडाअूपन है। किसी वस्तुकी दूसरोको वडी आवश्यकता हो अुस समय अुसका अपने लिअे भी अुपयोग न करके केवल लोभसे अुसका सग्रह कर रखना कृपणता और दुष्टता है। आवश्यक जरूरतोके लिअे किये जानेवाले सग्रहमें तथा लोभमे वहुत फर्क हे। दीर्घदृष्टि रखकर स्वयंको तथा कुटुवियोंको आगे चलकर कोअी कठिनाअी न हो, अिस विचारसे आवश्यक वस्तुओंका शुरूसे सग्रह करके रखनेमे दोप नही है; वल्कि वैसा करना सावधानी और दूरदर्शिता है। अुचित और परिमित परिग्रह अिस दिशामें मध्यम मार्ग है।

अस्तेय

अस्तेयका मतलब है शुद्ध मार्गसे आजीविका चलाना। किसीकी भी हिसा, शोपण, लूट या ठगाअी न करते हुअे आजीविका चलानेका ही नाम अस्तेय है। अिसके विरुद्ध किसीकी कठिनाअीसे लाभ अुठाना, दूसरेके परिश्रमसे फायदा अुठाना, दूसरेको दुःखी वनाकर सुख भोगना ये सव तरीके चोरीकी तरह निद्य है। समाज चलानेके लिअे, अुसकी अुन्नतिके लिअे तथा अुसके धारण, पोषण ओर रक्षणके लिअे जिस विद्या, कला, हुनर, ज्ञान तथा परिश्रम आदिकी जरूरत होती है, अुनमे से किसीके द्वारा आजीविका चलाना आजीविकाका शुद्ध मार्ग है। अस्तेयका अर्थ है शुद्ध जीवन। किसी भी प्रकारका समाज-द्रोह किये विना अपना जीवन लोकोपयोगी रीतिसे चलाना अस्तेय है। सामाजिक नीति, चारित्र्य, शील और स्वास्थ्यको बिगाड़कर हम अपनी आजीविका चलानेका प्रयत्न करे, या हमारी आजीविकाके मार्गसे समाजमे अिस प्रकारकी बुराअी बढती हो, तो वह अेक प्रकारकी चोरी ही है। अिसलिअे वह निद्य और त्याज्य है।

अिस तरह पच महाव्रतोके विषयमे विचार करे, तो अुनमें जीवनकी शुद्धि और सद्गुणोकी वृद्धि समाअी हुअी दिखाअी देगी। दुनियाके सभी प्रचलित धर्मोंमे अिन व्रतोका आग्रह है। जो कुछ अतर दिखाअी देता

है, वह देश, काल और परिस्थितिके कारण है। त्याग, सयम और सद्-गुणोकी वृद्धिके लिअे व्रतोकी व्यवस्था है। पच महाव्रतोका शुद्ध पालन ही सच्ची मानवता है।

१७

धारणा-शक्तिकी आवश्यकता

वुद्धिसे मानव-जीवनका महत्त्व और अुसकी विशेषता जच जाने पर भी जीवनको शुद्ध और सार्थक बनानेके लिअे प्रयत्नपूर्वक अुचित पात्रता हासिल करनी पडती है। मान्य हो जाने पर भी किसी बातको आचरणमें अुतारनेके लिअे कुछ विशेष गुणोकी आवश्यकता होती है। अुन गुणोको प्राप्त करने तथा बढानेके लिअे हमे प्रयत्नशील रहना पडता है। आज बुद्धिमान लोगोका बौद्धिक स्तर काफी बढ गया है। वे सामान्यत किसी बुद्धिगम्य कठिन विषयको भी समझ सकते हैं। लेकिन अुस विषयके मुख्य तत्त्वानुसार आचरण करनेकी आवश्यक शक्ति अुनमे नही पाअी जाती। किसी विषयको समझने और अुसके तत्त्वानुसार आचरण करनेमे बडा अतर है। समझनेके लिअे बौद्धिक शक्तिको और आचरणके लिअे मानसिक और कभी कभी शारीरिक शक्ति तथा कौशलकी भी जरूरत होती है।

जीवनका महत्त्व समझमे आने पर भी मानवता या जीवन-शुद्धिके लिअे प्रयत्नशील रहना पडता है। अुसके लिअे सहनशीलता, धीरज और दृढता आदि सद्गुणोकी जरूरत होती है। जीवनके अुदात्त ध्येयको प्राप्त करनेके लिअे क्षुद्र हेतुओको छोडना पडता है। क्षणिक तथा तुच्छ सुख-सुविधाओंका त्याग करना पडता है। सादगी तथा व्यवस्थितता अपनानी पडती है। जीवनका रुख भोग-प्रधान रहा हो, तो जीवन-शुद्धि साधनेके लिअे मनको त्यागकी ओर मोडना पडता है। त्यागके लिअे सहिष्णुता जरूरी है। सहिष्णुता दृढता और निग्रहसे आती है। अिन सब गुणोका आधार हमारी धारणा-शक्ति पर होता है। अत जीवन-शुद्धिके मार्गमे धारणा-शक्तिका बडा महत्त्व है। किसी भी वस्तुको जोरसे पकडकर

रखनेके लिअे जैसे हाथके स्नायुओमे पर्याप्त शक्तिकी जरूरत होती है, वैसे ही सहिष्णुता, सयम, निग्रह, निश्चय, धैर्य आदि किसी भी सद्गुणको ग्रहण करनेके लिअे धारणा-शक्तिकी जरूरत होती है। विपत्तिके समय कभी कभी धैर्य और शाति रखनी होती है; तब भी अिसी शक्तिकी आवश्यकता पड़ती है। आजकल वह शक्ति हममे बहुत कम होनेसे, समझनेकी शक्तिके बावजूद भी, हम अपनी और समाजकी अवनति निष्क्रिय बनकर देख रहे हैं। हम अन्याय, दुष्टता, जुल्म, अज्ञान, दरिद्रता आदि सब कुछ सहन कर रहे हैं। अिन सबके दुष्परिणामोको हम न जानते हो सो बात नही। अुन्हे तो हम प्रत्यक्ष भुगत ही रहे हैं। लेकिन टालनेकी शक्तिके अभावमे हम अुन्हे चुपचाप सहन करते रहते हैं। यह सहिष्णुता हमे अवनतिकी ओर ले जा रही है; क्योकि वह भय और लाचारीसे पैदा हुअी है। यह हमारी दुर्बलता, दीनता और कायरताकी निशानी है। सहिष्णुता जब हमारी अुन्नतिमे सहायक होती है, तब सद्गुणका काम करती है। जब हम अपनी अुन्नतिके लिअे समझबूझकर कष्ट सहते है, तब अुस सहिष्णुतामे हमारे सद्गुणोका दर्शन होता है और अुनका विकास होता है। यह सहनशीलता 'तितिक्षा' कहलाती है। अिस तितिक्षाके बिना हम सतोषपूर्वक त्याग नही कर सकते। जहा सतोषपूर्वक त्याग और त्यागके साथ शांति दिखाअी देती है, वहा वैराग्य है अैसा समझना चाहिये। भोगके प्रति अनुराग या रस न होना वैराग्य है। जिस वस्तुके प्रति हमारे मनमे आसक्ति या अनुराग नही होता, अुसका त्याग करनेमे हमे दु.ख या कठिनाअी नही होती। अुलटे, बधनसे छूटनेके आनदका अनुभव होता है। गरमीमे जैसे शरीर पर कपड़ा नही सुहाता, वैसे ही अिद्रियजन्य सुखका लोभ छोड़नेसे जिनके चित्तको शाति मालूम होती है, अुनमे सच्चा वैराग्य है अैसा समझना चाहिये।

लेकिन यह तो बहुत अुच्च मानसिक अवस्थाकी बात है। हमारी बुद्धि द्वारा स्वीकृत जीवन-ध्येय सिद्ध करने तथा अुस दिशामे प्रयत्नशील होनेके लिअे हमे सबसे पहले धारणा-शक्ति प्राप्त करनी चाहिये और अुसका विकास करना चाहिये। अुसका विकास किये बिना हममे दृढ़ता नही आ सकती। दृढ़ता और निश्चयके बिना त्याग न तो सधेगा और

न टिकेगा। धीरज और अन्तःकरणकी शक्तिके विना त्यागमें सहजता नहीं आयेगी। अिसलिअे सहिष्णुता, दृढता, त्याग, धीरज, निग्रह आदिमें से कोअी भी गुण धारणा-शक्तिके विना प्राप्त नही किया जा सकेगा।

जीवन-शुद्धिका प्रयत्न करनेवालेको प्रारभमें तो कुछ अतर्बाह्य कष्ट सहन करने ही होते है। चित्तके कुसस्कारो और बुरी आदतोको मिटानेके लिअे मनके साथ झगडना पडता है। अिसमे कष्ट सहन किये विना काम नही चलता। अतर्बाह्य झगडेमें टिके रहकर सफलता प्राप्त करनेके लिअे धीरज रखना पडता है। या जीवन-शुद्धिके लिअे प्रयत्न न करने-वालोंको भी कम कष्ट नही सहना पडता। हमारी दुराशाअे, भिन्न भिन्न प्रकारकी तृष्णाअें, कामनाअे, अिंद्रियजन्य लालसाअे, काम-क्रोधके आवेग, असत्याचरण, रागद्वेष, सामाजिक रीति-रिवाज, धार्मिक अधश्रद्धा, अज्ञान, भोलापन, हमारे साथ होनेवाले अन्याय, छल-कपट, विश्वासघात, कृतघ्नता, प्रेमभगके आघात आदि अतर्बाह्य कारणोंसे प्रतिदिन हमे काफी कष्ट सहना पडता है। लेकिन अिस सहनशीलतामे दिन-प्रतिदिन हम अधिक पामर और जड वनते जाते है। हम तथा हमारा समाज अिसी अवस्थामे रूढिके अनुसार चलता रहता है, अिसलिअे हमे अपनी अवनतिका भान नही होता। यह स्थिति अितनी रूढ वन गअी है कि अुससे निकलनेका विचार तक हमारे मनमें नही आता। अिस प्रवाह-पतित अवस्थाके कारण हममें तथा समाजमें अनेक हल्की तथा क्षुद्र मनोवृत्तिया बढती रहती है। अुससे परस्पर सघर्ष तथा क्लेशके प्रसग निर्माण होते तथा बढते रहते है। अतर्बाह्य वातावरण अत्यत मलिन बना हुआ है। जीवन-शुद्धिकी दृष्टिसे यह अत्यत अवनत अवस्था है। क्या अिस अवस्थामें भी हमे कष्ट सहन नही करना पडता? और कष्ट सहन करके भी सिवा अवनतिके हम क्या पाते है?

अिस तरह जीवन पर विचार करनेसे मालूम होगा कि चाहे जैसा और मनमाना जीवन विताने पर भी कष्ट तो सहन करने ही पडते है और अुन्नतिका रास्ता पकडें तो भी कष्ट सहन करना पडता है। फिर अुन्नतिके लिअे ही क्यो न प्रयत्न किया जाय? अेक मार्ग अपनानेसे अवनति निश्चित है और दूसरेमें अुन्नतिकी आशा है। अैसी स्थितिमे

विवेकी मनुष्य अुन्नतिका ही मार्ग ग्रहण करेगा। अुस मार्गमें जो भी कष्ट सहन करने पडे, अुन्हे वह धैर्य और सहनशीलतापूर्वक सहना ही पसद करेगा। जब हम अुदात्त हेतु सम्मुख रखकर समझ-बूझकर कष्ट सहन करनेको तैयार होते है, तब अुस मार्गमे आनेवाले सकटों और अडचनोका मुकाबला करनेकी हमारी तैयारी होती है और अुदात्त हेतु रहनेके कारण हममे नित्य नया अुत्साह पैदा होता रहता है। आत्म-विश्वास और सफलताके विषयमे दृढ श्रद्धाके कारण सकटो और कष्टोके सबधमे हममे निर्भयता और निश्चितताकी वृत्ति निर्माण होती है। अुन सबके परिणाम-स्वरूप कष्टोकी भयानकता और अड़चनोंकी तीव्रताका हममे भान नही होता। अिस प्रकार अुन्नतिकी अिच्छावाले जीवन तथा अुन्नतिका हेतु न रखनेवाले जीवन दोनोमे सहिष्णुता दिखाअी देती हो, तो भी अुन्नतिके लिअे प्रयत्नशील जीवनमे दिखाअी देनेवाली सहिष्णुताके साथ धीरज, आत्म-विश्वास, अुत्साह, धन्यता आदि गुण होंगे, तो दूसरे प्रकारके जीवनमे दीनता, दुर्बलता, जडता, भीरुता आदि दोष दिखाअी देंगे। अेक ही सहिष्णुता सद्‌गुणोके साहचर्यसे अुन्नतिका और दोषोके सबधसे अवनतिका कारण बनती है। अिससे हम अितना जान सकते है कि अेक ही तरहकी शक्ति जब अुदात्त हेतुसे अुचित रूपमे काममें आती है तब वह मनुष्यका अुद्धार करती है और क्षुद्र हेतुके लिअे अज्ञानसे अुपयोगमे आती है तब व्यक्तिके नाश या अवनतिका कारण बनती है। तैरनेवाला तथा तैरना न जाननेवाला दोनो अकस्मात् पानीमे गिरने पर हाथ-पैर जोरसे हिलानेकी कोशिश करेंगे ही, लेकिन जिसे तैरना नही आता वह अव्यवस्थित ढगसे हाथ-पैर हिलानेकी क्रिया अधिक तेजीसे करने पर भी डूब जायगा और तैरनेवाला बचकर बाहर निकल आयेगा। शक्ति तो दोनोकी ही खर्च होगी, पर परिणाम परस्पर-विरुद्ध आवेगा। लडाअीमें शूर अपने बाहुबलसे प्रतिपक्षीको पराभूत करके विजयी होता है और भीरु सारी शक्ति पैरोमे केंद्रित करके भाग खड़ा होता है। पैरोकी शक्तिको वह हाथमे केंद्रित कर सके तो वह शक्ति अुसे वीर बना सकती है। लेकिन अुसके लिअे आवश्यक धीरज और धारणा-शक्ति अुसमे हो तभी यह काम हो सकता है।

अिस सबके प्रतिपादनका हेतु यह है कि अुन्नतिके लिअे, अेकाध शक्ति ही पर्याप्त नही है। अुस शक्तिके साथ दूसरे आवश्यक सद्‌गुणोका सुमेल होना चाहिये। बुद्धिको अेकाध शक्ति जच जाय और अुसे हम स्वीकार कर ले, तो अुतनेसे ही हम अपना जीवन-ध्येय प्राप्त नही कर सकते। जीवन-शुद्धि या मानवताका ध्येय हमे जच जाय या मान्य हो जाय, तो भी अुसकी सिद्धिके लिअे बौद्धिक शक्तिके साथ साथ धारणा-शक्तिकी खास आवश्यकता रहती है। अच्छी बाते समझने जितना हमारा बौद्धिक विकास हुआ है, मानवताके कुछ लक्षण भी हममे आये है, जिससे मानवताका अुच्च ध्येय हमे मान्य होता है। वह हमे रुचिकर तथा प्रिय भी लगता है। आज हमारा बौद्धिक स्तर अितना अूचा अुठा, यह हमारा सद्‌भाग्य ही है। लेकिन अिससे आगेकी दृष्टि और शक्ति भी हममे आनी चाहिये और अुसके लिअे हमे प्रयत्नशील रहना चाहिये। अिसके लिअे धारणा-शक्तिकी जरूरत है। तत्त्वज्ञानकी चर्चामे गहरी अुतरनेवाली हमारी बुद्धि कुशाग्र और समर्थ बन जाय, तो भी दृढता, निग्रह, निश्चय, सयम, धैर्य आदि गुणोकी धारणाके बिना अिस मार्गमे हम आगे नही बढ सकते। तलवारको चाहे जितनी पैनी बना ले, बदूक अथवा पिस्तौलको साफ करके कारतूसोसे चाहे जितनी लैस कर ले, तो भी हृदयमे धीरज, दृढता और साहस न हो तो शेरके सामने आने पर अुन शस्त्रोका कोअी अुपयोग हमसे नही होगा। विचार करने पर मालूम होता है कि लगभग यही सबध बौद्धिक समझ और धारणा-शक्ति तथा धैर्यके बीच है। अपनी अशुद्धि दूर करके शुद्ध बननेके लिअे अिस शक्तिकी अत्यत आवश्यकता है। अुसके बिना सद्‌गुण धारण नही किये जा सकते। धीरजके बिना केवल तितिक्षाके कारण सहिष्णुता बढे, तो भी सभवत वह हमे अन्याय, जुल्म और कपट सहनेवाला बनायेगी और फिर हममे गुलामी तथा जडताकी वृत्ति पैदा करेगी। लेकिन तितिक्षाके साथ हममे धीरज और दृढता भी हो, तो तेजस्विता और आत्म-विश्वास प्रकट होगा। मनमे सद्‌भावना पैदा हो, तो भी अुसका सद्‌गुणमे पर्यवसान होनेके लिअे धारणा-शक्ति जरूरी है। हमारा जीवन शुद्ध होना चाहिये, हमारा व्यवहार शुद्ध होना चाहिये, अैसा लगे तो भी वैसे आचरणके लिअे मनको अुस ओर गतिशील बनानेवाली आवश्यक

शक्ति हममे होनी चाहिये। अुसे सिद्ध करने पर ही हमारे जीवनमे परिवर्तन हो सकेगा। दोषो और दुर्गुणोकी ओरसे वह हमे सद्‌गुणोंकी ओर ले जायगी। दीनता और लाचारीको निकालकर वह हममे नम्रता और विनय पैदा करेगी। अहकारके स्थान पर आत्म-विश्वास पैदा करेगी। आशा और तृष्णासे छुड़ाकर हमे सतोष देगी। हमारी पगुता और जडताको दूर करके वह हमे स्फूर्तिवान तथा चैतन्यशील बनावेगी। दुर्वलतासे सामर्थ्यकी ओर ले जावेगी। जीवनके हर क्षेत्रमे मददगार बनकर वह हमारे जीवनको पवित्र, अुज्ज्वल, प्रभावशाली और सफल बनायेगी। अिस शक्तिके सिद्ध होने पर हमारी अुन्नति, हमारी शुद्धि और मानवताका आधार है। हर श्रेयार्थीको अिसकी साधना करनी पडती है। अिसकी साधनाके बिना कोअी अुन्नति नही कर सकता। अत जीवनके महत्त्व और विशेपताको समझ कर अिस शक्तिकी प्राप्तिके लिअे प्रत्येक व्यक्तिको प्रयत्नशील बनना चाहिये।

१८

धारणा-शक्तिका अभ्यास – १

जीवन-शुद्धिके प्रयत्नमे धारणा-शक्तिका महत्त्व कितना है, अिसके विपयमे पिछले लेखमे विस्तारपूर्वक बताया गया है।* जीवन-शुद्धिके लिअे अनेक सद्‌गुणोकी जरूरत होती है, अिसका भान या विश्वास हो जानेसे ही सद्‌गुणोकी प्राप्ति नही होती। अुसके लिअे सद्‌गुणोका अनुशीलन और योग्य अभ्यास करना पडता है।

प्रकृतिके नियमोके अनुसार मनुष्यका जन्म होता है। बडे-बूढे अुसका पालन-पोपण करते है। अुसका शरीर कुछ तो प्रकृतिके नियमोके अनुसार और कुछ योग्य तथा व्यवस्थित पालन-पोषणके कारण विकसित होता रहता है। शरीरकी वृद्धिके लिअे जिस तरह प्रकृतिका क्रम कारण है, वैसे ही मानव-जातिमे प्रचलित आरोग्य, खान-पान, पालन-पोषण, सवर्धन आदि विपयोका शास्त्रीय ज्ञान भी कारण है। अुस ज्ञानको यदि मानव-जातिसे निकाल दिया जाय, तो अिसमे संदेह नही कि मानव

* 'धारणा-शक्तिकी आवश्यकता' नामक लेखमे।

पुन अपनी प्राथमिक अवस्थामे पहुच जायेगा। मनुष्यके अतिरिक्त दूसरा कोओी भी प्राणी ससारमें विलक्षण परिवर्तन नही कर सकता। पच महाभूतोकी भिन्न-भिन्न शक्तियोका या अुन्हे अेकत्र करके अुनसे पैदा होनेवाली शक्तियोका अुपयोग करके अपने लिअे सुखकर और सुविधा-पूर्ण दुनिया बनानेका प्रयत्न मनुष्य ही कर सकता है। अिन प्रयत्नोमे से कुछ अुसकी अिच्छाके अनुसार सफल होते हैं और कुछ निष्फल भी होते हैं। फिर भी हम यह तो निश्चयपूर्वक समझ ही सकते है कि वह अपने प्रयत्नसे शक्ति, बुद्धि, विद्या, कला, ज्ञान, सहयोग, सहानुभूति आदिके कारण आजकी स्थिति तक पहुचा है। केवल नैसर्गिक क्रम और अनु-कूलता पर ही आधार न रखते हुअे अुसने अपनी बुद्धिका अुपयोग तथा पुरुषार्थ करके अपने शरीर, बुद्धि और मनको अधिकाधिक कार्यक्षम बनाया है। अिन तीनोका विकास अुसने साधा है। कुछ भावनाअे, सस्कार और सद्गुण मनुष्यमें बीजरूपमे नैसर्गिक ही अुतर आते है। अुनका विकास योग्य सहवास, शिक्षण और परिस्थितिके कारण कुछ अशमे सहज रूपसे होता है। फिर भी यदि अुनका विशेष विकास करना हो तो हर व्यक्तिको खास प्रयत्न करना पडता है। वह प्रयत्न धारणा-शक्तिके अभ्यासके विना नही हो सकता। अिसी कारणसे जीवन-शुद्धि और जीवन-सिद्धिके मार्गमे अिस शक्तिका विशेप महत्त्व है।

विचार करने पर मालूम होगा कि हमारे नित्यके स्वाभाविक शारीरिक कार्योंके चलते रहनेमें धारणा-शक्ति ही कारणरूप होती है। शरीरके भिन्न भिन्न अवयवोमे, स्नायुओमे, धारण करनेकी शक्ति न हो, तो कोओी भी काम न हो सकेगा। हाथकी क्रियाशक्ति, पैरोकी सारे शरीरका भार वहन करनेकी और चलनेकी शक्ति, जठरकी पाचन-शक्ति आदि सब शक्तियोका आधार धारणा-शक्ति ही है। अितना ही नही, यदि किसी भी शक्तिको हम धारणा-शक्ति कहे, तो वह अतिशयोक्ति नही होगी। अिनमे से कुछ शक्तिया वश-परपरासे मिलनेके कारण हमे सहज मालूम होती है, तो कुछ शक्तिया हमारे द्वारा प्रयत्नपूर्वक प्राप्त की हुओी होती है। ये भी कालातरमे हमे स्वाभाविक जैसी ही लगती हैं। लेकिन अुनमें से हरअेक विशिष्ट शक्ति हमारे पूर्वजो द्वारा तथा हमारे

अपने प्रयत्नसे पहले सिद्ध की हुअी होती है। हम शिक्षित कहलानेवाले लोग हाथमे, कधो पर या सिर पर अधिक भार नही अुठा सकते, क्योंकि अुन भागोके या अवयवोके हमारे स्नायुओंमे भार सहन करनेकी शक्ति बढी हुअी नही होती। यह शक्ति प्रयत्नके विना प्राप्त नही होती। अेकाध वजनदार चीज हम हाथसे अुठा भी ले, तो अुसका भार हम ज्यादा देर तक सह नही सकते या अुसे लेकर अधिक दूर तक हम चल नहीं सकते। अिन क्रियाओके लिअे भिन्न-भिन्न प्रमाणमे अधिकाधिक शक्तिकी जरूरत होती है। अुसके लिअे भिन्न भिन्न स्नायुओंको योग्य तालीम देनी पडती है। सतत अभ्यासके विना स्नायुओमे आवश्यक शक्ति पैदा नही हो सकती। शरीरकी तरह बुद्धिकी बात ले तो अुसमे भी यही दिखाअी देता है।

स्मृति—स्मरण रखना बुद्धिका अेक गुण है। अुसके लिअे भी बौद्धिक शक्तिकी जरूरत होती है। वह शक्ति किसीमे कम तो किसीमे अधिक होती है। विषय, पदार्थ, कार्य और घटनामे से किसीकी स्मृति रखनेका अर्थ है अपने मस्तिष्कमे किसी भी जगह अुसका प्रतिबिम्ब पकड़ रखना। यह पकड जिसे सध नही पाती अुसे किसी बातका स्मरण नही रहता। छोटे बच्चे या जिनके मस्तिष्कका विकास न हुआ हो अैसे अज्ञानी लोग अधिक समय तक स्मरण नही रख पाते। कारण, पकड रखनेका बल अुनके स्नायुओंमे नही होता। अुनकी धारणा-शक्ति बढी हुअी नही होती। छोटे बच्चेको या अनाड़ी आदमीको दो सदेश अेकसाथ कहकर दो भिन्न-भिन्न स्थानोमे पहुचानेके लिअे भेजा जाय, तो कदाचित् वे दोनोंको भूल जायेगे या पहुचानेमे कुछ गडबडी कर देगे। लेकिन अेक ही सदेश कहा जाय तो वे बराबर अुसे पहुचा सकते है। वही सदेश पहुचानेमे बीचमे कुछ समय चला जाय तो अुसका भी विस्मरण होना सभव है। अनेक विषयोका स्मरण रखनेके लिअे अथवा अुसे अधिक समय तक टिकाये रखनेके लिअे अुनके मस्तिष्कका आवश्यक विकास नही हो पाया है। अिसी कारणसे अुनमे धारणा-शक्ति नही होती। धारणा-शक्तिके लिअे भी मस्तिष्कका कुछ प्रमाणमे विकास होना आवश्यक है। अुसके बाद भी स्मरण रखनेके लिअे मस्तिष्कमे कुछ क्रियाअे निर्माण करनी पडती है। कुछ खास स्नायुओको और ज्ञान-ततुओको गति देनी पड़ती है। अिस तरहके प्रयत्नसे ही अुनमे

धारणा-शक्ति बढकर मनुष्यका बौद्धिक विकास होता है। भूली हुअी बातोका स्मरण करनेके प्रयत्नमे हमें अपने मस्तिष्कमें कुछ तीव्रता लानी होती है। किसी अेक बातका विस्मरण न हो अिसके लिअे अुसी समय हमें अेक प्रकारकी मानसिक दृढता पैदा करके सावधानी रखनी होती है। अैसे प्रसगो पर हम अपने मस्तिष्कको कुछ विशिष्ट गति देते हैं। अुन प्रसगोकी तीव्रता, सावधानी और गति देनेके प्रयत्नोसे हमारे मस्तिष्कमें, अुसके सूक्ष्म स्नायुओमें और ज्ञानतंतुओमें धारण करनेकी शक्ति आती है। जीवनके अैसे भिन्न-भिन्न प्रसगोमें धारणा-शक्तिकी वृद्धि होती है।

अिस तरह जीवनमे धारणा-शक्तिकी वृद्धि होती हो, तो भी जीवन-शुद्धिका प्रयत्न करनेकी दृष्टिसे वह पूरी नही है। हरअेक मनुष्यके शरीरकी, अुसकी शक्तिकी तथा बुद्धिकी वृद्धि अुसकी बढती हुअी आयुके प्रमाणमे होती है। फिर भी जिन्हे अपने शरीर, अुसकी शक्ति या अपनी बुद्धिका किसी निश्चित मर्यादा तक विकास करना हो, अुन्हे अिसके लिअे खास अभ्यास करना पडता है। अिसके बिना अुसे अिच्छित सिद्धि प्राप्त नही हो सकती। अिसी प्रकार जीवन-शुद्धि और जीवन-सिद्धिके लिअे भी मनुष्यको कुछ अभ्यास और प्रयत्न करना ही पडता है। अपेक्षित और खास शक्तिकी वृद्धि प्रयत्नके बिना नही होती और अिस प्रकारके दृढ सकल्पके बिना अुस दिशामे मनुष्य जीवनभर प्रयत्नशील नही रह सकता। जीवन-सबधी कोअी अुदात्त हेतु या कोअी अुच्च आकाक्षा रखे बिना प्रयत्नके लिअे आवश्यक अुत्साह सतत टिक नही सकता। अिसलिअे दृढ सकल्प और महत्त्वाकाक्षाके बिना जीवन-शुद्धिके लिअे आवश्यक धारणा-शक्ति हम प्राप्त नही कर सकते। अपने दोषो, दुर्गुणो और अवनत अवस्थाके लिअे दुःख और लज्जा मालूम हुअे बिना मनुष्य अुन्नतिके पथ पर आगे बढ नही सकता। अपयश और अपकीर्तिका जिन्हे भय न लगता हो या अुसके लिअे जिन्हे लज्जा न आती हो, अैसे लोग यशके लिअे कभी प्रयत्नशील रह नही सकते। अपनी अशुद्धि और दोषोके लिअे हमे दुःख मालूम हो, तो ही हम जीवनको शुद्ध करनेके प्रयत्नोमे दृढतापूर्वक लगेगे। मानवताको शोभा न देनेवाली बल्कि कलकित करनेवाली बातो तथा अपने दोषो और दुर्गुणोके विषयमे हमारे मनमे घृणा पैदा होनी चाहिये। दुर्गुणोके

लिअे दु:खका अनुभव हुअे विना और सद्‌गुणोके प्रति निरहंकारिता आये बिना हमारी अुन्नति नही हो सकेगी, अिसका हमें सतत भान रहना चाहिये। दोषोके त्याग और सद्‌गुणोके प्रयत्नपूर्वक अनुशीलनके लिअे सदैव सावधान और दक्ष रहना चाहिये। त्याग और अनुशीलनके लिअे धारणा-शक्ति जरूरी है। अपने भीतरकी अिस शक्तिको हमेशा काममें लगाकर हमे जाग्रत रखना चाहिये और अुसे प्रयत्नपूर्वक वढाना चाहिये। अुसे जाग्रत कैसे करना और किस तरह वढ़ाना, अिस विषयमे जीवनके दूसरे अनुभवोसे थोडा सूक्ष्म और गहरा विचार करना हमे सीखना चाहिये।

हमारे हाथकी चीज कोअी जवरदस्ती छीनना चाहे तव वह चीज हाथसे न छूटे अिसके लिअे अुस समय हम अपने शरीर, वुद्धि आदिकी सारी शक्तियोका प्रवाह अुस वस्तुको पकड़े हुअे स्नायुओमे जिस प्रकार लाते है, भयके प्रसग पर भागते समय सारी शक्ति और गति जैसे पैरोमे लाते है, विकट प्रश्नोको हल करते समय हम अपनी ज्ञानशक्तिका प्रवाह जैसे मस्तिष्कके ज्ञानततुओमे लाते है, अुसी तरह मनकी दुर्बलता दूर करनेके लिअे और अुसकी शक्ति वढानेके लिअे हमे अतर्मुख वनकर आत्म-अवलोकन करना चाहिये। सारी शक्तियोके प्रवाहको निग्रहके द्वारा योग्य स्थान पर लाना — केद्रित करना हमे आना चाहिये। हममे कौन कौनसे दोष है, किस प्रकारकी मानसिक दुर्बलता है, क्या अशुद्धि है, कौनसे दुर्गुण कितनी मात्रामे है, यह सब ढूढना चाहिये। कुसंस्कार और बुरी आदते कौनसी है और अुनमे क्या फर्क है, यह हमे जानना चाहिये। दोषोमे व्यक्तिगत कौनसे है और ससर्ग तथा सम्पर्कके कारण, परिस्थितिके कारण और कठिन प्रसग, आवेश और आवेगके कारण आये हुअे कौनसे है, यह भी हमे जानना चाहिये। अविवेक, असावधानी, जड़ता और लापरवाहीके कारण होनेवाले दोष कौनसे है, यह हमे पहचानना चाहिये। रूढि, लोकलाज, सकोच, भय, लालच आदि कारणोसे कौनसे दोष बन पड़ते है, यह भी हमे समझ लेना चाहिये। आज तकके अुस विषयके अज्ञानके कारणोको ढूढ़ना चाहिये। किन दोषोके विषयमे हमे दु:ख न होकर अुलटा अभिमान और गौरव मालूम होता है, किनके विषयमें दु:ख और शरम लगती है तथा किन दोषोके वारेमे पश्चात्ताप होता है, यह सव ध्यानमे रखना चाहिये। अिससे अुनकी तीव्रता,

मदता, सौम्यता, अुग्रता या दृढता समझमे आवेगी। अपने मनकी स्थितिका पूर्ण ज्ञान होनेके लिअे मनुष्यको अपने मनके अच्छे गुणोकी भी ठीक पहचान होनी चाहिये। अपने सुसस्कार, अच्छी आदते और अच्छे स्वभावकी भी हमे जानकारी होनी चाहिअे। हमारा स्वभाव वन चुके सद्‌गुण कौनसे है यह हमारे ध्यानमे आये, तो अुसके आवार पर हम अपनी अुन्नति कर सकेगे। अिस प्रकार अपने मनका निरीक्षण, परीक्षण और पृथक्करण करने पर अपने किस मानसिक दोपके लिअे हमारी शारीरिक और वौद्धिक अपात्रता किस अश तक कारणभूत हे, यह भी हमारे ध्यानमे आवेगा। अिस तरह सव दृष्टियोसे अपनी जाच करने पर सही स्थिति हमारे ध्यानमे आयेगी और तद्‌नुसार हम आगे वढनेकी कोशिश करेगे।

हमारे मानसिक दोपोके लिअे यदि हमारी शारीरिक या वौद्धिक अपात्रता कारणभूत हो, तो हमे अुसे दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिये। कोअी भी सद्‌गुण दूसरे सद्‌गुणके आधारके विना रह नही सकता। अुसी तरह कोअी भी दोप दूसरे दोपोकी सहायताके विना टिक नही सकता। अिस कारणसे कौनसा दोष किस दोष पर अवलवित है, अिसकी पहचान हमें होनी चाहिये। हममे निर्भयता न होकर डरपोकपन हो, तो अुसका कारण हमारी शारीरिक, वौद्धिक अथवा आर्थिक दुर्वलता है या और कोअी दूसरा कारण है, अिसका हमे ज्ञान होना चाहिये। सत्यनिष्ठा और प्रामाणिकताका हममे अभाव हो, तो अुसके कारणोकी हमे जानकारी होनी चाहिये। किस कारणसे हमारा मन प्रसग अुपस्थित होने पर विचलित होता है, यह ध्यानमें रखकर अुन कारणोको दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिये। ठीक कारण समझे विना चाहे जैसा अुपाय या प्रयत्न करते रहनेसे अुस प्रयत्नमे सिद्धि नही मिलती। अिसलिअे दोपोकी और अुनके कारणोकी हमे जानकारी होनी चाहिये। कोअी अेक भी सद्‌गुण हमारा स्वभाव वन गया हो तो अुसके आवारसे अुन्नति जल्दी सध सकती है। यदि हममे करुणा हे तो त्यागके विना करुणाका कार्य नही हो सकता। त्यागकी तैयारी न हो तो धारणा-शक्ति द्वारा वह शक्ति निर्माण करनी चाहिये। लेकिन वही करुणा हमारा स्वभाव वन जाय तो धारणा-शक्तिके विना भी करुणाका काम हमसे सहजमे वन पडेगा।

हमारी मानसिक दुर्बलताके कारण हमारी अुन्नति रुक जाय, तो दुर्बलता और अुसके कारणभूत दूसरे दोषोको दूर किये विना हम आगे नही बढ सकते। अैसे समय अपने जीवन-संबधी अुच्च अुद्देश्य और महत्त्वाकाक्षाका स्मरण करके हमे जाग्रत रहना चाहिये। हमारा जीवन अुच्च और पवित्र अुद्देश्यके लिअे है, अिसका हमे सतत भान रखना चाहिये। अपने मार्गकी भयप्रद कल्पनाओको दूर करके जीवन-संबधी सत् और महान संकल्पको बार बार जाग्रत करना चाहिये। दौर्बल्य और दोषोका त्याग करते समय कुछ कष्ट भी सहना पडे तो अुसे सहन करना चाहिये। अिस विचारसे हमारे निश्चयको दृढतासे स्थिर रखनेके लिअे किसी भी भयकी परवाह न करनेवाली निर्भय और अचल वृत्ति निर्माण करनी चाहिये। त्यागके लिअे संयम साधना चाहिये। अिस प्रकारके संयमकी तैयारी करनी चाहिअे। संयमका अर्थ है आदतके कारण अिच्छानुसार दौडनेवाली वृत्तियोको रोकना। अैसे समय त्याग, मनकी दृढ़ता, वृत्तियोको खींचकर अपने स्थान पर रखनेकी शक्ति — अिन सबके लिअे धारणा-शक्तिकी जरूरत होती है। अुस शक्तिका प्रसंगानुसार निर्माण करते आना चाहिये। ये सब गुण साधते समय मन या चित्तको निश्चय और निग्रह द्वारा कठोर बनाना पडता है। अिन्जेक्शन लेते समय अथवा शरीरके वेदनायुक्त भाग पर शस्त्रक्रिया कराते समय मनुष्य जैसे निश्चयपूर्वक मनको तैयार करता है, कडा बनाता है, वेदना और दु:ख सहनेके लिअे अुस भाग, अवयव या स्नायुमे कड़ापन लाता है; जरूरत हो तो अुसका संकोच करता है और शरीरकी शक्तिका प्रवाह अुस स्थान पर केन्द्रित करनेका प्रयत्न करता है, अथवा शारीरिक बलका प्रयोग दिखानेवाला या हाथ पर मोटर चलानेवाला मनुष्य प्रसंगानुसार अपने खास भागोको जैसे दृढ बनाता है, सारी शक्तियोके प्रवाहको अुसी खास स्थान पर लाकर वहा केन्द्रित करता है, अुसी तरह दोषोका त्याग करने तथा सद्गुणोको जाग्रत करनेके लिअे जिस ज्ञानतंतु पर तनाव लाना जरूरी हो अुस स्थान पर अपनी सारी शक्तियोका प्रवाह केन्द्रित करनेकी सिद्धि हमे प्राप्त करनी चाहिये। हमारे मस्तिष्कमे सारे ज्ञानतंतुओका मूल है। सारे सूत्र अुसी स्थान पर है। अिसलिअे वहा सभी शक्तिया जाग्रत करना या निर्माण करना हमे आ

जाय, तो चाहे जिस दोप या विकार पर हम विजय प्राप्त कर सकते है। अुस स्थानकी कमजोरी, दुर्बलता, मिटानेके लिअे आवश्यक शक्ति हमे सकल्पपूर्वक धारण की हुअी धारणासे प्राप्त हो सकती है। बार बार अिस प्रकारकी धारणाका अभ्यास करके धारणा-शक्तिको बढाया जा सकता हे। अिस शक्तिकी सहायतासे दोपोको त्यागने और सद्गुणोका अनुशीलन करनेकी शक्ति हम सदाके लिअे प्राप्त कर सकेंगे। अपनी शक्तिको भोग-विलास या निरर्थक कामोमे खर्च न करके यदि हम अुसका सग्रह करे और आवश्यकतानुसार अुस अेकत्रित शक्तिको अुचित स्थान पर केन्द्रित करनेका अभ्यास करे, तो हम बुद्धिको स्वीकार्य सारी अच्छी बाते आचरणमे ला सकेंगे। धारणा-शक्ति बढने पर हममें दुर्बलता नही रहेगी। त्याग, सयम, धैर्य, अुदारता आदि कोअी भी सद्गुण धारण करके तथा अुसका अनुशीलन करके अुसे बढाना सभव हो सकेगा। अिस प्रकारकी शक्ति प्राप्त करना हो तो मनुष्यको हर रोज कोअी मानसिक अभ्यास करना चाहिये। अिस अभ्याससे हमे चित्तकी अेकाग्रता, स्थिरता और दृढता सिद्ध करनी चाहिये। अिस प्रकार किया हुआ थोडा अभ्यास भी हमे जीवनभर काम देगा। अुसका अुपयोग करनेसे ही अभ्यासमे प्रगति होती है। विवेक और सावधानी रखकर जो मनुष्य चित्तवृत्तियोके विपयमें जाग्रत रहता हे और अपनी अुन्नति और कल्याणके लिअे अपनी शक्तियोका अुचित अुपयोग करनेमे सदा तत्पर रहता हे, वही धारणा-शक्तिकी सहायतासे जीवन-शुद्धि साधकर जीवनको सार्थक बना सकेगा। जीवन-शुद्धिके लिअे जिस प्रकार सात्त्विक आहार, सत्सग, सद्व्यवसाय, सद्वाचन और सत्कर्म आवश्यक हैं, अुसी प्रकार धारणा-शक्ति भी आवश्यक हे। क्योकि अिन सब साधनोसे जो कुछ हमारी बुद्धिकी समझमे आता है, बुद्धिको स्वीकार्य होता है, अुसे आचरणमे लानेके लिअे आवश्यक शक्तिकी भी हमे बडी जरूरत रहती है। शक्ति निर्माण करना और अवसर आने पर अभीष्ट कार्यके लिअे अुसके प्रवाहको अुपयोगमे लाना, ये दोनो बाते हमे साधनी चाहिये।

अिस मार्गकी दो अन्य बाते भी ध्यानमे रखनी चाहिये। किसीको अिस मार्गमे जल्दी सिद्धि प्राप्त होती हे, तो किसीको बहुत समय तक अभ्यास करने पर भी बहुत कम सफलता मिलती है। अिसका आत्म-

विश्वास और शुभ निष्ठाके साथ विशेष संबंध है। ये गुण जिनमें होते हैं अुनकी प्रगति जल्दी होती है। कोअी कार्य चाहे जितना कठिन हो, लेकिन वह मेरे लिअे प्रयत्न-साध्य है और प्रयत्नसे सिद्ध होगा ही, यह आत्म-विश्वास जिनमें होता है; तथा परमात्मा, हमारा शुभ संकल्प या विश्वका न्याय तथा नियामक अटल धर्म — अिनमें से किसी पर भी दृढ श्रद्धा रखने अथवा जीवन-शुद्धिके प्रयत्नमें जो कष्ट सहना पडेगा अुसे सहन करनेमें मेरा और मानव-जातिका कल्याण है अैसी शुभ निष्ठा जिनमें होती है, वे अिस मार्गमें अभ्यासकी सहायतासे जल्दी सफल होते हैं। आत्म-विश्वास और सत्-तत्त्वविषयक निष्ठाकी सहायतासे धारणा-शक्तिके अभ्यासमें बड़ी तेजीसे प्रगति होती है। यह सब जानकर और समझकर हमें अभ्यास करना चाहिये। शरीर, बुद्धि और मनके विकासमें अभ्यासका बड़ा महत्त्व है। अभ्याससे कठिन समझे जानेवाले कार्य आसान हो जाते हैं। अभ्याससे कसरतबाज सर्कसमें तार पर चलते हैं, कोअी अष्टावधानी या शतावधानी हो जाते हैं, तो कोअी योगमें सिद्धि प्राप्त करते हैं। अभ्यासके विषयमें संत तुकारामने कहा है :

साधूनी बचनाग खाली तोळा तोळा।
आणिकाते डोळा न पाहवे ॥१॥
साधूनी भुजंग धरितील हाती।
आणिके कांपती देखोनिया ॥२॥
असाध्य ते साध्य करिता सायास।
कारण अभ्यास तुका म्हणे ॥३॥

[धीरे धीरे अभ्यास या आदत बढाने पर कुछ लोग तोला तोला भर बछनाग (जहरी वनस्पति) पचा जाते हैं, दूसरोंसे वह देखा तक नहीं जाता, क्योंकि थोडासा भी बछनाग खानेसे मृत्यु हो जाती है। कुछ लोग अभ्याससे जिन्दा सांप पकड़ लेते हैं। दूसरे अुसे देख थरथर कांपने लगते हैं। तुकाराम महाराज कहते हैं कि असाध्य दीख पड़नेवाली बातें भी सतत अभ्याससे सिद्ध हो सकती हैं। अिसका कारण अभ्यास ही है।]

धारणा-शक्तिका अभ्यास – २

धारणा-शक्तिके अभ्यासके विषयमें पिछले लेखमें जो विवेचन किया गया है, अुससे पाठक जान गये होंगे कि अुस शक्तिको बढानेके लिअे अभ्यासकी जरूरत रहती है। सबसे प्रथम हममें अुन्नतिकी महत्त्वाकांक्षा होनी चाहिये। तभी हम अभ्यासके पीछे लग सकते हैं। फिर महत्त्वाकांक्षाके प्रमाणमें हमें निश्चयपूर्वक सतत प्रयत्नशील रहना चाहिये। अुन्नतिकी केवल कल्पनासे ही जिस मार्गमें सफलता नहीं मिलती। अुस कल्पनासे अुन्नतिकी अिच्छा निर्माण हो और अुसका महत्त्वाकांक्षामें रूपांतर हो, अितनी प्रबल और तीव्र वह होनी चाहिये। अैसी प्रबल अिच्छा स्वभावतः हममें निश्चयका निर्माण करती है। निश्चय हमें सतत प्रयत्न करनेके लिअे बाध्य करता है। प्रयत्नसे सफलता मिलती है और सफलताके कारण हमारे निश्चयमें दृढता आती है और हमारा आत्म-विश्वास बढता है। अिन सब बातोंके लिअे मनकी अेक प्रकारकी दृढता आवश्यक होती है। यह दृढता हमारी धारणा-शक्ति है, जो आगे चलकर सदा हममें निवास करती है। अिस क्रममें निश्चयका बडा महत्त्व है। किसी भी महत्त्वपूर्ण विचार, संकल्प, अिच्छा और क्रियामें आग्रहपूर्वक लगे रहनेकी वृत्ति ही निश्चय है। और अुस निश्चयको पकडकर रखनेकी शक्ति ही धारणा-शक्ति है। वृत्ति या विचारसे आग्रहपूर्वक चिपके रहनेके लिअे भी कुछ मनोबलकी जरूरत होती है। अिस मनोबल और निग्रह-शक्तिके आधार पर निश्चयको पूर्ण करते करते हमारी धारणा-शक्ति बढती जाती है।

हर व्यक्तिमें कम या अधिक मात्रामें अिस प्रकारकी निग्रह-शक्ति रहती ही है। अुसकी वृद्धिके लिअे कडे नियमोंके पालनका आग्रह रखकर वैसी आदत बनाना आवश्यक होता है। अुदाहरणके लिअे, यदि हम देरसे अुठते हों तो जल्दी अुठनेका नियम लेना चाहिये। हमारे खाने-पीने, बोलने-

वरतनेमे अतिशयता, अव्यवस्थितता या अनियमितता हो, तो अुन दोषोको सुधारनेके लिअे हमे स्वय अुचित नियम लेने चाहिये। व्यायाम तथा परिश्रमके विषयमे भी हमे विवेक रखना चाहिये। अिस प्रकार जीवनकी हर वातमें नियम और अनुशासन पैदा करनेके लिअे अधिकाधिक कडे नियमोंके द्वारा अपनेमे जागृति और वल लानेका प्रयत्न हमे करना चाहिये। जीवनके आवश्यक क्षेत्रके सब काम हमारी ओरसे निर्दोष, व्यवस्थित और अनुकरणीय हो, अैसा हमारा आग्रह होना चाहिये। अिस प्रकारके आग्रह तथा आचरणसे हमारी दोषयुक्त आदतें और कुसस्कार कम होगे और हमारी मानसिक शक्ति धीरे धीरे वढेगी। जीवन-सवधी विचारोको तथा जीवनको अच्छी दिशामे मोड़नेके लिअे अपनी पहलेकी बुरी वृत्तियों तथा दोषोके साथ हमे झगड़ना होगा। नियम पालनेके कारण धीरे धीरे बढते जानेवाले हमारे मनोवल तथा निग्रह-शक्तिसे अपने प्रयत्नमे हमे सफलता मिलेगी। नियम-पालन प्रारम्भमे तो कुछ कठिन मालूम होगा ही। अिस कठिनाअीके समय ही हमे अपने मानसिक वलको अेकत्र करना होगा। अैसे अवसर पर निग्रह और निश्चयके द्वारा मनको जाग्रत करके अुसमे चेतना लानी होगी। अिस प्रकारके प्रयत्नोसे हमारी धारणा-शक्तिमे वृद्धि होगी। अिन सतत प्रयत्नोसे हममे जो शक्ति बढती है वह हमारी स्थायी शक्ति होती है। मानसिक शक्ति जाग्रत करनेके लिअे समय समय पर किये गये प्रयत्नोसे अुस वलकी वृद्धि होगी और वह हमारा स्वाभाविक वल होगा। अुसकी प्राप्तिके बाद हमे पहलेकी तरह आग्रह या निग्रहके लिअे शक्तिको जाग्रत करनेकी जरूरत नही पडेगी। स्थायी धारणा-शक्ति प्राप्त हो जाने पर नियम-पालन या अनुशासन-पालन कठिन नही लगेगा। निश्चयपूर्वक नियम-पालन करते रहनेसे पहलेके पडे हुअे कुसस्कारो तथा बुरी आदतोंकी पकड़ कम होती रहेगी और निग्रह तथा निश्चयके कारण बढ़ी हुअी शक्तिसे नियम-पालनकी कठिनाअी कम होती रहेगी। अिस तरह नियम-पालन या अनुशासन-पालन हमारे जीवनका सहज अंग बन जायेगा।

अिस प्रकार अुत्तरोत्तर अेकसे अेक कठिन नियमोके पालनका हम अभ्यास करते रहे, तो अुस प्रमाणमे हमारी धारणा-शक्तिकी वृद्धि होती रहेगी। अिस अभ्यासमे अपनी मन स्थिति तथा अपने मनमे अुठनेवाली

वृत्तियोकी ओर हमे सदा ध्यान देना चाहिये और अुनकी जाच करनी चाहिये। नियम-पालनसे हमे ज्यो ज्यो शाति और प्रसन्नता बढनेका अनुभव हो, त्यो त्यो हममे धारणा-शक्तिकी वृद्धि हो रही है अैसा हमे विश्वासपूर्वक समझना चाहिये। किन्तु अिसीमे कृतार्थता न मानकर और अितनेसे ही सतुष्ट न होकर अधिकाधिक कठिन नियम लेने चाहिये तथा बढी हुअी धारणा-शक्तिसे अुन्हे पूरा करनेका विशेष प्रयत्न करना चाहिये। अेक ही प्रकारकी शारीरिक क्रिया वार वार व्यायामके निमित्तसे करके जैसे हम अपनी शारीरिक शक्ति बढाते है, वैसे ही प्रसगोपात्त अपने सूक्ष्म ज्ञानततुओका कभी सकोच करके तो कभी अुन्हे शिथिल बनाकर और कभी अुनमे चेतना लाकर अुनकी शक्ति बढानी चाहिये। निश्चयमे दृढता लाकर अुसे पूरा करनेके लिअे वार वार जो मानसिक क्रियाअे करनी पडती है अुनके कारण तथा अिस प्रयत्नमे सूक्ष्म ज्ञानततुओ पर वार वार जो सस्कार तथा परिणाम होता रहता है अुसके कारण स्थायी मानसिक शक्ति प्राप्त होती है। शुभ निश्चयके लिअे वार वार अेक ही प्रकारकी मानसिक क्रिया की जाती है। अुससे सूक्ष्म ज्ञानततुओ पर स्थायी परिणाम होता है। अुनकी शक्ति बढती है। अिस प्रकार निश्चयके कारण और अुसे पूर्ण करनेके सतत प्रयत्नके कारण हम अपनी धारणा-शक्ति बढा सकते है।

हमे धीरज और सहनशीलताकी जरूरत हो अुस समय सावधानीसे मन पर नियत्रण रखकर और अपनी शक्तिको जाग्रत करके सारी शक्तियोके प्रवाहको मनमे केन्द्रित करे, तो हम धैर्य धारण कर सकते है। हम अपने मनको अुस समय अुपदेश दे, धीरज बढानेवाले शब्दोका मन ही मनमें अुच्चार करे और हृदयमे धैर्य जाग्रत करनेका प्रयत्न करे, तो नष्ट हो रहे धैर्यका हममें फिरसे सचार होगा। समर्थ रामदास स्वामीने अपने मनको सावधान करनेके तथा दृढ बनानेके लिअे ही अपने मनको जो अुपदेश दिया है वह 'मनाचे श्लोक' नामसे प्रसिद्ध है। अभ्यास करनेकी अिच्छा रखनेवालोको अुसे पढना चाहिये। वे अपने ही मनको यह अुपदेश देते है "हे मन, तू कायरकी भाति ससारके भयसे भयभीत न बन। धैर्य धारण कर। भयोको दूर कर। अीश्वर पर निष्ठा रखकर तू हिम्मत रखेगा, तो 'काल के कोपसे भी तेरा नाश या अनिष्ट नही होगा। तू निंद्य काम कभी न कर।

सत्कर्मका आचरण करता रह। सदाचारको कभी न त्याग। चदनकी तरह दूसरोके लिअे घिसता रह और सुगंध फैलाता रह।" अिस तरह मनको अुपदेश देकर अुसकी शक्ति बढानेका मार्ग अुन्होने बताया है। यदि हम मनको अुपदेश देकर समझावे, सभाले और अभ्यासमे लगावें, तो हमारे मनकी अैसी अज्ञात शक्तिया जाग्रत हो सकती है जिन्हे हम नही जानते। अुन शक्तियोको ज्यादा बढाया जा सकता है और अुनके द्वारा हम सन्मार्गमे विजयी बन सकते है।

जिस विषयका हम चिंतन करते है अुसीमे हमारा चित्त तदाकार बन जाता है। चित्तका यह धर्म ही है। अुसमे जो भी वेग हम निर्माण करे अुसीसे वह भर जाता है। काम, क्रोध, लोभके प्रसगोंमें वह तद्रूप बन जाता है। अर्थात् विकारमय हो जाता है। दु:ख और अुसके कारणोका हम ज्यो ज्यो चिंतन करते है त्यो त्यों मन दु:खसे व्याप्त बनता जाता है। शोकग्रस्त व्यक्ति शोकके प्रसगका तथा अुसके कारणोका ज्यो ज्यो वर्णन करता है त्यो त्यो वह अधिक व्यथित बनता है। सत तुकाराम कहते है "शोके शोक वाढे। हिमतीचे धीर गाढे।" दु:ख और शोक करते रहनेसे दु:ख और शोक बढते है तथा चित्त शोकमग्न हो जाता है और हिम्मत रखनेसे धैर्य संचारित होता है। जो रस हम चित्तमें निर्माण करते है अुसी रसवाली चित्तवृत्ति बनती है। करुण, वीर, शोक आदि अनेक रसोमे से जिस रसका मनुष्य चिंतन करे अुसीमे वह तन्मय हो सकता है। चित्तके अिस धर्मको पहचानकर मनोबलकी प्राप्तिके लिअे, धैर्य निर्माण करनेके लिअे हमे प्रयत्नशील रहना चाहिये। 'हिम्मते मर्दा मददे खुदा' अैसा अेक मुस्लिम सतका वचन है। अुसका भी यही अर्थ है। मनोबल बढ़ानेके लिअे पवित्र सकल्प, अुच्च ध्येय, निश्चय, नियम-पालन और प्रसग अुपस्थित हो तब अपनी समस्त शक्तियोका केंद्रीकरण आदि बातोका हमे अुपयोग करना चाहिये।

बुद्धिको स्वीकार्य अच्छी बातोके आचरणके लिअे हमे मनकी भिन्न भिन्न शक्तियोकी जरूरत पड़ती है। अिसलिअे अुन्हे जाग्रत करना और समय पर अुनका अुपयोग करना हमे आना चाहिये। विवेकपूर्वक अपना ध्येय निश्चित करनेके बाद अुस ध्येयके विरुद्ध तथा अुसमें बाधक सभी

बातो और विषयोसे मनको हटाना या खीचना हमे आना चाहिये। वृत्ति या क्रियाके रूपमे चलनेवाले प्रवाहको रोकनेके लिअे मनोबलकी आवश्यकता रहती है। अैसे समय अपनी सारी शक्ति अुस काममे लगानी चाहिये। काम-क्रोधके वेगोको रोकना, आशा-तृष्णाके चक्करसे बाहर निकलना, क्रोध आने पर क्षमावृत्ति धारण करना, अनुचित मार्गसे स्वार्थसिद्धि होनेके अवसर पर मोहसे बचकर निर्लोभ और निःस्पृह रहना, अिनमे से किसी भी प्रसगमे अुत्कट मनोबलकी जरूरत रहती है। अिस तरहके प्रसगोमे मनको रोकनेके लिअे अपनी शक्तिका अुपयोग करना हमे आना चाहिये। गाडीको अूबड-खाबड जगहमे, विकट स्थानमे चलाते समय खूब सभालकर ले जाना आवश्यक होता है। घोडोके वेगको कम करके सावधानीके साथ गाडीको अिच्छित स्थान पर ले जाना होता है। अच्छे साफ रास्तेसे जाना हो तो घोडोको प्रोत्साहन देकर गाडीका वेग बढाया जा सकता है। प्रसगानुसार घोडोकी गतिको अधिक बढाना या कम करना आदि कार्य विवेक, सावधानी और कुशलतासे करने होते है।

हमारे जीवनकी गाडीकी भी यही बात है। जीवनमे जब त्यागकी जरूरत हो तब अपनी वृत्तियोको नियत्रणमे रखनेकी कला हमे सधनी चाहिये। वृत्तियोको रोकना ही अुनका सयम करना है। सयमसे त्यागकी शक्ति निर्माण होती है। सयम और त्याग सिद्ध करनेके लिअे अेकसे अेक कठिन नियम लेने होते है। सयम और त्यागके कारण जिस प्रमाणमे हमारी शाति और प्रसन्नता बढे, अुसी प्रमाणमे सयम और त्याग हमे पसद आये और अुसी प्रमाणमे वे सिद्ध हुअे अैसा समझना चाहिये। वे अिस प्रकार सध जाय तो हमारे प्रतिदिनके व्यवहारमे आसानीसे अुनका आचरण होने लगेगा। सयम और त्याग हमारा सहज स्वभाव बन जाय, यही अिस विषयकी सिद्धि है।

त्याग, सयम आदिके प्रयत्नोमें हमारी अनुचित वृत्तियोका सकोच करते करते वे क्षीण होती जाय और अन्तमे हमारे चित्तमें कभी अुनका दर्शन भी न हो, अैसी अवस्था साधनेके लिअे अेक प्रकारके मानसिक बलकी जरूरत रहती है। अिस तरहकी साधनासे चित्तकी अशुद्धि नष्ट होती है। किन्तु अितना कर लेनेसे जीवन-सिद्धि नही हो जाती। जीवन-सिद्धिके लिअे

चित्तकी शुद्धिके साथ सद्गुणोंका अुत्कर्ष साधना होता है। आध्यात्मिकताके लिये, मानवताके लिये, दोनों सिद्धियोंकी जरूरत होती है। सिद्धियोंके लिये आवश्यक मनोबलकी प्राप्तिके लिये अमुक वृत्तियोंके निरोधका अभ्यास आवश्यक होता है। अुस तरहके अभ्यासमें साधकको मनोबल प्राप्त होकर त्याग और संयम सिद्ध हो जाते हैं। किन्तु सद्गुणोंके अुत्कर्षके लिये भिन्न प्रकारकी मानसिक शक्तिकी जरूरत होती है। अूपर कहा गया है कि चढ़ावकी अपेक्षा अुतार पर गाड़ी चलाते समय घोडोंको सभालकर हाँकना पड़ता है, घोड़ोंकी लगाम तंग रखनी पड़ती है। किन्तु गाडी तेजीसे चलानी हो तो घोड़ोंकी लगाम ढीली रखकर अुनको तेज चलनेके लिये प्रोत्साहित करना पड़ता है। संयम साधनेके लिये, चित्तशुद्धि प्राप्त करनेके लिये, मनको रोकने तथा सभालनेकी दिशामे हमे अपनी शक्ति लगानी पड़ती है और सद्गुणोंका विकास करते समय सद्वृत्तियोको मुक्त रखना पडता है। करुणा, वात्सल्य, प्रेम, अुदारता आदि सद्भावनाओंके विकाससे ही सद्गुणोंकी प्राप्ति होती है। अैसे समय सद्भावनाओ और सद्गुणोके विकासमें बाधा डालनेवाले मोह और सकुचितताके कारणो और बधनोको तोड़ना पडता है और सद्भावनाओ तथा सद्गुणोके लिये रास्ता साफ और खुला कर देना होता है। सयमके समय अपनी अनुचित वृत्तियोको रोककर अपनी मन शक्तिका अुपयोग अेक रीतिसे करना पड़ता है, और सद्गुणोके विकासके समय भिन्न मार्ग अपनाना पडता है; अुस समय सद्भावनाओको जाग्रत करके अुत्साहसे अुन्हे गति और वेग देना होता है। अिसके लिये भिन्न शक्तिका अुपयोग करना होता है। निषिद्ध वृत्तियोके वेगको रोककर अुनका नाश करनेमे कुछ ज्ञानततुओको कभी तनाव देना पडता है, कभी अुनका सकोच करना होता है, तो कभी कुछको दृढ करते करते अुन्हे जड भी बनाना पडता है। सद्गुणोका विकास करते समय प्रथम सद्वृत्तियोको जाग्रत करना होता है। यदि वे जाग्रत हो तो जिस समय जिन सद्गुणोकी आवश्यकता हो अुस समय अुन्हे सत्कर्ममे परिणत करना पड़ता है। अुस समय हमारे ज्ञानततुओमे कुछ क्रियाअे करनी होती है। सत्कर्मके लिये जिन अिन्द्रियो, अवयवो और स्नायुओका अुपयोग करना

होता है, अुन स्थानो पर शक्तियोके प्रवाहको लाना पडता है। असद् वृत्तियोका त्याग तथा अुस विषयका निग्रह करनेसे सयम सिद्ध होता है। किन्तु सद्‌वृत्तियोको केवल चित्तमे धारण करनेसे ही सद्‌गुणोका अुत्कर्ष नही होता। अयोग्य वृत्तियोका अभाव करनेमे कोअी वाह्य कर्म करनेकी जरूरत नही होती, लेकिन आतरिक कष्ट सहन करना पडता हे। अुसके लिअे सहिष्णुताकी जरूरत होती है। कभी कभी सयमके लिअे वाह्य कर्मंमे भी कष्ट सहन करना पडता है। लेकिन सयमके लिअे अधिकतर अतर्निग्रहकी जरूरत रहती है, अत अुसके लिअे शक्तिका अुपयोग करते समय अुसका वाह्य आविष्करण दिखाअी पडनेकी कम सभावना रहती है। लेकिन सद्‌गुणोका सवर्धन सत्कर्मोके विना नही हो सकता। और शक्तिके वाह्य आविष्करणके विना सत्कर्म सिद्ध नही होता। अुसे सिद्ध करनेके लिअे अनेक तरहसे शक्तिका अुपयोग करना पडता है।

अिस तरह असद् वृत्तियोका अभाव करनेमे तथा सद्‌वृत्तियोको जाग्रत करके अुनका सत्कर्म द्वारा सद्‌गुणोमे पर्यवसान करनेमे भिन्न-भिन्न प्रकारसे धारणा-शक्तिका अुपयोग करना होता है। अिस तरहकी प्रक्रियासे धारणा-शक्तिमे अनेक प्रकारसे वृद्धि होती है। अिसमे भी अनुचित कर्मों और वृत्तियोका सकोच करते करते अुनका अभाव साधनेमे जो शक्ति अुपयोगमें आती है अुस शक्तिके तथा सद्‌वृत्तियोका कर्ममे पर्यवसान करके सत्कर्मकी सिद्धि पानेके लिअे अुपयोगमे आनेवाली शक्तिके भिन्न भिन्न स्वरूपो तथा प्रकारोको ध्यानमें रखना आवश्यक होता है।

अिस जगह यह भी ध्यानमे रखना चाहिये कि केवल मनोवल ही सपूर्ण धारणा-शक्ति नही है। चित्तमे सद्‌वृत्तियो और सद्‌भावनाओको जाग्रत करके अुन्हे अुत्तान करनेके लिअे मनोवलकी जरुरत होती है। लेकिन अुन वृत्तियो तथा भावनाओको सत्कर्मका रूप देनेके लिअे सत्कर्ममें अुपयोगी होनेवाली अिद्रियोकी और वौद्धिक शक्तिकी तथा अुचित कर्म-कौशलकी आवश्यकता रहती है। अुन सवमें यदि धारणा-शक्ति न हो तो सत्कर्ममे सिद्धि नही मिलती। अिसलिअे शारीरिक, वौद्धिक और मानसिक तीन प्रकारसे अुपयोगी सिद्ध होनेवाली धारणा-शक्ति जीवन-सिद्धिके मार्गमें अत्यत आवश्यक हे। अनुचित मार्गकी तरफ ले जानेवाली वृत्तियोके प्रवाहको

रोकनेके लिअे आवश्यक संयम और सद्गुणोके अनुशीलनसे सन्मार्गमें प्रगति साधनेके लिअे आवश्यक पुरुपार्थ — अिन दोनोकी आराधना और अुपासना अिस मार्गमे आवश्यक है। अिस प्रकारकी आराधना और अुपासना धारणा-शक्तिको बढ़ाती है। केवल मनोबलकी अपेक्षा सपूर्ण धारणा-शक्तिका महत्त्व अधिक है। क्योकि मनोबलमे केवल मानसिक धारणा-शक्ति ही आती है, लेकिन संपूर्ण धारणा-शक्तिमे शरीर, मन और बुद्धि तीनो प्रकारकी शक्तियोंका समावेश होता है। विचार करने पर मालूम होगा कि जीवनके सर्वांगीण विकासकी दृष्टिसे, जीवन-शुद्धि तथा जीवन-सिद्धिकी दृष्टिसे धारणा-शक्तिका कितना महत्त्व है। चित्तकी स्वाधीनता-प्राप्तिके प्रयत्नोमें अिस शक्तिकी अत्यंत आवश्यकता है। अिन सब बातोको जानकर हमें अिस शक्तिके आराधक और अुपासक बनना चाहिये, अर्थात् अिस विपयमे दृढ़तापूर्वक प्रयत्नशील रहना चाहिये।

२०

धारणा-शक्तिका अभ्यास – ३

पिछले दो लेखोंमे अिस विपयका किया गया विवेचन कुछ अधूरा-सा है, अिसलिअे कुछ और स्पष्टीकरण करनेकी जरूरत मालूम होती है। यह विपय अत्यंत गहन और सूक्ष्म है, अिसलिअे केवल लिखनेसे ही पाठकोको समझाना कठिन है। फिर भी अभ्यास करनेवालेको कुछ लाभ तो हो ही सकता है। अभ्यासका सबंध विशेषत: अतर्मुखतासे है। अत. धारणा-शक्तिका अभ्यास करनेवालेको पहले अतर्मुख होनेकी साधना करनी चाहिये। अुसके बिना अिस मार्गमे प्रगति नही हो सकती। अपने विकासके लिअे आवश्यक बल प्राप्त करना अभ्यासका अुद्देश्य है, अत: अुसी दृष्टिसे हमे प्रयत्नशील रहना चाहिये। अपने विकासके लिअे आवश्यक शक्ति हमे ही अपने भीतर जाग्रत करके अुसे बढ़ाना पड़ता है। जैसे शारीरिक शक्ति प्राप्त करनेके लिअे आरोग्यप्रद तथा पौष्टिक भोजनके साथ साथ गलत ढगसे शक्तिका व्यर्थ खर्च न हो अिसके लिअे

सयम रखनेका प्रयत्न करना पडता है, वैसे ही जीवनको अच्छा, पवित्र, अुन्नत तथा पुरुषार्थी वनानेके लिअे भी हमें भिन्न भिन्न शक्तियोकी जरूरत होती है। वे शक्तिया अतर्मुखता, मानसिक अभ्यास, ज्ञानततुओकी शुद्धि और दृढताके विना प्राप्त नही हो सकती। अिसलिअे साधकको अिस विषयमे विचारशील तथा प्रयत्नशील रहना पडता है।

जीवनमे हमे जो दु ख सहने पडते हैं, अुनके लिअे हमारी शारीरिक या वौद्धिक अपात्रता कुछ अशमे कारणभूत होती है। लेकिन विचार करने पर मालूम होता हे कि हमारे और समाजके दु खोमें हमारी तथा दूसरोकी अनेक वुरी आदतें, कुसस्कार, दोष, दुर्गुण आदिका ही बहुत वडा हाथ रहता है। हमारी अिच्छाअें, वासनाअे, कामनाअे अुचित है या नही, यह हम नही सोचते। वैसे ही अुन्हे पूरा करनेके हमारे मार्ग तथा साधन धर्म-सम्मत या शुद्ध है या नही, अिसका भी हम ध्यान नही रखते। हमारे अैसे व्यवहारके कारण किन किनको, किस प्रकारकी कितनी कठिनाअिया सहन करनी पडती है, अिसका भी हम विचार नही करते। अिस प्रकारकी हमारी मन स्थिति तथा जीवन-व्यवहार होनेके कारण हम सव अेक-दूसरेको दु खी वनाते हैं। ये दु ख हम सवकी मन स्थिति और गलत जीवन-व्यवहारके परिणाम हैं, यह वात हम कभी नही समझते। अुलटे अपने दोपोके कारण हमें तथा समाजको जो हानि और कष्ट सहन करने पडते हैं, अुन्हे अुसी तरहके अधिक तीव्र दोपो द्वारा दूर करनेका हम प्रयत्न करते है। यदि हम विचार करें तो मालूम होगा कि हम सवके दोषोके कारण निर्माण होनेवाली प्रतिकूल परिस्थितिको वदलना तव तक सभव नही है, जव तक हम सब अपने मानसिक दोपोको नही सुधारते। अपने दोषोको समझनेकी वुद्धि हममें हो, किन्तु अुन्हे दूर करनेके लिअे आवश्यक मानसिक वल न हो, तो वह वल हमें प्राप्त करना चाहिये। अुसे प्राप्त करनेके लिअे धारणा-शक्तिके अभ्यासकी जरूरत है।

कुछ व्यक्तियोमें निश्चय-वल स्वभावत ही अधिक होता हे। अुनके निश्चय-वलके कारण अुन्हे अिच्छित सिद्धिकी प्राप्ति होती हे। क्योकि कार्यसिद्धिके लिअे आवश्यक त्यागकी शक्ति अुनमे स्वभावत ही

होती है। लेकिन कभी कभी अैसे लोगोंसे भी दोष हो जाते हैं। वे जान-बूझकर या आग्रहपूर्वक गलत रास्ते पर नही जाते; परन्तु बुरी संगति, संगतिके सहज आनंद या स्नेहका आकर्षण, अुचित प्रसंग पर गलत बातोको अस्वीकार करनेके लिअे आवश्यक धैर्यका अभाव, दूसरोंके आग्रहके वश हो जाने जितनी संकोचशीलता आदि अनेक कारणोसे वे रूढिगत तथा निषिद्ध बातोके प्रवाहमें बह जाते हैं। फिर हर रोज वैसी बाते करते रहनेके कारण अुन्हे आदत-सी हो जाती हैं और आगे चलकर वे अुसमें बद्ध हो जाते हैं और दोषी बन जाते हैं। जीवनके विषयमें वे गंभीरतापूर्वक सोचते ही नही। जीवन सबसे अधिक गंभीरता-पूर्वक विचार करने जैसा विषय है, अैसा अुन्हे महसूस ही नही होता। अत. वे दोषोसे पैदा होनेवाली बुराअियोकी ओर विशेष ध्यान नही देते। लेकिन जब अुन्हे जीवनका महत्त्व और गंभीरता समझमे आती है, जीवनका ध्येय भूलकर बुरी बातोमे हम कहा तक भटक गये अिसका भान होता है, तब वे अनिष्टकारी बातोसे बाहर निकलनेका तुरत निश्चय करते हैं। निश्चय करते ही अुनकी स्वत.सिद्ध त्यागशक्ति जाग्रत होती है। और अुसी शक्तिके द्वारा वे अपने निश्चयको पूर्ण करते हैं। अिस प्रकार अेकदम निश्चय करके अुसे पूरा करनेवाले व्यक्ति भी समाजमें मिलते है। जिनमे अिस प्रकारकी निश्चय-शक्ति न हो, और फिर भी जो अपने जीवनको निर्मल और दोषरहित बनाना चाहते हो, अुनके लिअे अपनी मानसिक शक्ति बढ़ानेका अभ्यास नित्य श्रद्धापूर्वक करना लाभप्रद होगा।

पिछले दो लेखोमें अिस विषयमे जो निरूपण किया गया है अुस परसे पाठकोके ध्यानमे यह बात आ गअी होगी कि मनुष्यको लगन और सावधानीके साथ किस प्रकार प्रयत्नशील रहना चाहिये। अिस लेखमें यह बात कहनी है कि धारणा-शक्ति बढ़ानेके लिअे संकल्पकी दृढता और ध्यानाभ्यासका कितना और कैसा अुपयोग होना चाहिये। हर व्यक्तिकी वृत्तियां, विचार और अुसके द्वारा जान या अनजानमे होनेवाले कर्मों तथा क्रियाओका प्रवाह अुसके तत्सम्बन्धी पूर्व-विचारों और आचारोंके अनुसार होता है। भूतकालके अनुरूप वर्तमान और वर्त-

मान स्थितिके अनुसार भविष्यकाल वनता है। अिस प्रकार पूर्वकालसे चलते आये जीवन-प्रवाहके अनुसार आगेका जीवन-प्रवाह चलता रहता है। अुसमे परिवर्तन करना हो तो मनुष्यको समझ-बूझकर, सावधानी और दृढतासे आग्रहपूर्वक प्रयत्न करना होता है। हमेशाकी तरह चलने-वाले जीवनमे हमे सावधानीपूर्वक कुछ करना नही पडता। हमेशाकी आदतोके अनुसार हमारी वृत्तिया चलती रहती है और हम कर्म करते रहते हैं। हमेशाके निश्चित रास्तेसे हम अपने घर आते है तव आस-पासके रास्तेकी ओर या दूसरी तरफ ध्यान चले जाने पर भी हमारे पैर आदतके अनुसार भूल किये विना हमे अपने घर पहुचा देते है। लेकिन नअी जगह जाना हो तो हमे सावधानीपूर्वक रास्ता खोजते हुअे जाना पडता हे। अिसी प्रकार हमारी अिद्रियोको सदाके कर्म-प्रवाहके अनुसार चलनेकी आदत पड जाती है। अैसे कामोमें सावधानी, दृढता, दक्षताकी जरूरत नही पडती। लेकिन पडी हुअी आदत बदलनी हो तब असावधान रहनेसे काम नही चलता। अुसके लिअे हमारी समस्त स्थूल और सूक्ष्म अिद्रियोको जाग्रत रखकर प्रयत्न करना पडता है। अिसमे सदेह नही कि अिस प्रयत्नमें यदि हम अपने शुभ सकल्पको दृढ करके अुससे निर्माण होनेवाली शक्तिका अुपयोग कर सके, तो हमारा काम वहुत आसान हो सकता है। दृढ सकल्प द्वारा हम अपनी धारणा-शक्तिको अपेक्षित स्थान पर लगा सकते है। सकल्प हमारे चित्तको जाग्रत रखता है। हमारे सकल्पमे जितनी तीव्रता होती है अुतना ही हमारा चित्त जाग्रत रहता हे। जाग्रत चित्तमे दोष दाखिल नही हो सकते। अुलटे, चिपके हुअे दोष, पडे हुअे सस्कार और आदते तथा स्थायी वने हुअे स्वभावकी चित्त परकी पकड ढीली पडती जाती है। अिस तरह अपने सकल्पमे जितनी तीव्रता और अेकाग्रता हम लाते है, अुतना ही हमारा मार्ग सुलभ बनता हे। सच्चे मनसे की हुअी प्रार्थना सफल होती है, अुसका यही कारण है। जव हम हृदयसे किसी भी वातकी अिच्छा करते है और अुसकी प्राप्तिका प्रयत्न करते है, तव अुसमें स्वाभाविक ही तीव्रता आती है। तीव्रतामे विरोधी या प्रतिकूल सयोगो पर विजय प्राप्त करनेकी शक्ति रहती है। सकल्प तीव्र अिच्छाके सातत्यका सूक्ष्म

किंतु दृढ स्वरूप है। अुसमे जिस मात्रामे तीव्रता, अुत्कटता, दृढता और तेजस्विता रहती है, अुसी मात्रामे वह प्रभावशाली रहता है। शस्त्र जितना सूक्ष्म धारवाला और तीक्ष्ण होता है, अुतना ही वह अुपयोगी होता है। अिन्जेक्शनकी सुअी जितनी सूक्ष्म, नुकीली और मजबूत होती है, अुतना ही वह अच्छा काम देती है। हमारी संकल्प-शक्तिके विषयमें भी यही बात है। हमारे सकल्पकी शुद्धि, सूक्ष्मता, तीव्रता आदि बाते हमारे अपेक्षित अुद्देश्यके लिअे सहायक होती है। सकल्प जिस स्थान पर जाग्रत तथा दृढ होता है, जहा वह सूक्ष्म और तीव्र बनकर चेतनावान रहता है वह स्थान चित्त है। यदि अुस स्थानमे हम सकल्पकी आराधना करे तो संकल्पमें बल आता है। वह बल हमारे कुसस्कार पर ही असर करता है सो बात नही, पर बाहरी परिस्थिति पर भी अुसका असर होता है। अपने ही संकल्पका यदि हम सतत ध्यान रखकर अुसकी शक्ति बढाते है, तो हमारी मलिनता कम होनेके कारण अुस शक्तिका हमे अनुभव होता है। यह अनुभव प्राप्त करनेके लिअे अपने सकल्पका ध्यान रखकर हमे अुस संकल्पकी आराधना करनी चाहिये। अिस आराधनासे हमारी धारणा-शक्ति बढ़ेगी और अिस तरह बढ़ी हुअी धारणा-शक्तिको जरूरतके समय काममे लाकर हम अपनी अुन्नति कर सकेगे।

अेकाग्रता और ध्यानके अभ्यासमे सुषुम्णा नाड़ीका संबध आता है। अिस नाड़ीकी गति मेरुदड (रीढ) मे से चलती है। शरीरके ज्ञान-तंतुओ द्वारा वृत्तियो और विचारोका प्रवाह चलनेका वही मार्ग है। अेकाग्र होनेके लिअे अपनी वृत्तियोके प्रवाहको हम जब अेकमार्गी बनाकर अेक लक्ष्य पर केन्द्रित करनेका प्रयत्न करते है, तब हमारे मेरुदडसे वह प्रवाह तेजीसे चलने लगता है। तथा अुस ओरके ज्ञानततु चैतन्यमय बनकर प्रवाहको गति देते है। अिस सारे प्रवाहको और अुसकी गतिको अेक केन्द्रमे लाकर अपने सकल्पमे दृढता, अुत्कटता, तीव्रता और तेजस्विता लानेका अभ्यास करना हमे आना चाहिये। सकल्पको हमे अपने मस्तिष्कमे ही दृढ करना होता है। अेक ही शुभ संकल्प जाग्रत करके अुसीमे अेकाग्रता साधनी होती है। यदि मस्तिष्कमे अपने ज्ञानततुओके प्रवाहको हम अेकदम केन्द्रित न कर सकें, तो हृदय-स्थानको लक्ष्य बनाकर वहा अिस

मानसिक अभ्याससे हमारे हानिकारक पूर्व-संस्कारो और आदतोका वल अेक ओर कम होता है और दूसरी ओर हमारे ज्ञानततुओमें दृढता आती है। अिस दृढताके फलस्वरूप अपने निश्चय पर दृढतासे स्थिर रहनेकी हमारी शक्ति वढ़ती है। अिस तरह पहलेके अनिष्ट संस्कारोका नाश और नये निश्चयकी दृढताके कारण अपने विकास-मार्गमे हमारी प्रगति होती है। हाथ-पैरोके स्नायुओमें वल आनेसे जिस प्रकार शारीरिक शक्तिका स्वभावत विकास होता है, अुसी तरह ज्ञानततुओमें शक्ति आनेसे तथा अुस वलके प्रवाहको सकल्पपूर्वक अपेक्षित स्थान पर लगानेसे हमारे चित्तमे अेक स्थायी शक्ति वास करने लगती है। यह स्थायी शक्ति हमारी अुन्नतिमे सच्ची सहायक और अुपयोगी वनती है। अल्प समयके लिअे हुआ शक्तिका आविर्भाव हमारी अुन्नतिमें विशेष अुपयोगी नही वन सकता। हमे स्थायी शक्तिकी जरूरत है। चित्तकी अैसी शक्ति वढाये विना हमारा चित्त स्वाधीन नही वन सकता। चित्तकी शक्ति द्वारा ही चित्तकी निषिद्ध वृत्तियोको वशमे करना पडता है। चित्तसे ही चित्तको सभालना पड़ता है।

सत तुकाराम कहते है . "मैं अपने मन और अपनी वुद्धिको क्षण-क्षण सही दिशामे मोड़ता हू। अिस तरह वुरी वृत्तियोको समेटकर मैं स्वय अपना चौकीदार वनकर अपना रक्षण किया करता हू। मनमे अुठनेवाली अनुचित वृत्तियोको अपने मनसे ही मैं रोकता हूं।"

अपनी सद्वृत्तियोको जगाकर तथा अुन्हे दृढ वनाकर अुनकी सहायता और वलसे मानसिक शक्ति वढ़ानेके लिअे प्रयत्नशील रहना ही अुन्नतिकी दृष्टिसे श्रेयस्कर है।

२१

मौन और वाचाशुद्धि

प्रश्न — आध्यात्मिक मार्गमे मौनका बड़ा महत्त्व है, अैसा कअी लोग कहते है। मौनसे चित्तको परमात्माकी ओर लगानेमे मदद मिलती है, मनकी शक्ति वढ़ती है तथा चित्त शात और प्रसन्न रहता है। मौनसे अनेक सिद्धिया प्राप्त होती है, अैसा भी कहा जाता है। अिस विषयमे आप कुछ वतानेकी कृपा कीजिये।

अुत्तर — आध्यात्मिक मार्ग आप किसे कहते है? और अुस विषयमे आपके क्या विचार है, यह जान लेने पर ही अुत्तर देनेमे सुविधा होगी।

प्रश्न — जिस मार्गसे परमात्माकी प्राप्ति या ज्ञान होता है वह अध्यात्म मार्ग है। अिस मार्गमे मौन भी अेक साधन है, अैसा कहा जाता है।

अुत्तर — मौनसे परमात्माकी प्राप्ति या ज्ञान होता है या नही, अिस विषयकी चर्चा न करके परमात्माके विषयमे गहराअीसे विचार करनेके लिअे चित्तकी जिस प्रकारकी अवस्था आवश्यक होती है, अुसे प्राप्त करनेमे मौनका कितना अुपयोग हो सकता है, अिस विषयमे अपने विचार कहू तो चलेगा?

प्रश्न — हां, जरूर कहिये।

अुत्तर — क्या आपको मौनका कुछ अनुभव है?

प्रश्न — अेक बार मै बहुत बीमार था। डॉक्टरने मुझे बात न करनेकी सूचना की थी। अुस समयका साधारण अनुभव है। वोलनेसे थकावट न लगे और शक्ति क्षीण न हो, अिसलिअे डॉक्टरने वोलनेकी मनाही की थी। अुस समय कुछ दिन तक न वोलनेसे मुझे कुछ लाभ हुआ था। मौनका अिससे अधिक अनुभव मुझे नही है।

अुत्तर — अिसका अर्थ यह है कि बोलनेमे खर्च होनेवाली आपकी शक्ति न वोलनेके कारण कुछ वची और वह आपके शरीर-रक्षणमें

अुपयोगी बनी। मौनके कारण शक्तिका व्यय न होकर अुसका सग्रह होता है, यह तो आप अपने अनुभवसे जानते है। बीमारीमे मौनसे सगृहीत शक्तिका जैसे शरीर-रक्षणमे अुपयोग होता है, वैसे ही चित्तके द्वारा कोअी महत्त्वका काम करवाना हो अुस समय हम अुसकी शक्तिको व्यर्थ न जाने दे तो ही अुसका महत्त्वपूर्ण कार्यमें अुपयोग हो सकता है। शरीरसे चित्तका कार्य सूक्ष्म होता है। अत अिस विषयमे विचारपूर्वक काम किये बिना केवल मौन रखनेसे चित्तकी सगृहीत शक्तिका सदुपयोग अपने-आप नही हो जायगा। अिसलिअे पहले तो अिस विषयमें चित्तके धर्मोको समझना ठीक होगा। जैसे शरीरके द्वारा होनेवाले ज्ञात-अज्ञात कर्मो तथा क्रियाओमे हमारी शारीरिक शक्ति खर्च होती है, वैसे ही हमारी ज्ञानेद्रियो द्वारा जान या अनजानमे होनेवाले कर्मो या क्रियाओमे भी चित्तकी शक्ति खर्च होती है। गहरी नीदमे यह शक्ति फिरसे भर जाती है और अुसका सग्रह होता है। अिस प्रकार जब शक्तिका व्यय नही होता, तब हमे आराम मालूम होता है। ज्ञानेद्रियों द्वारा दो प्रकारकी क्रियाअे होती है। भय, चिता, शोक, विकार, चित्तकी विकृत या क्षुब्ध अवस्था — अिन कारणोसे ज्ञानेद्रियो पर तनाव पड़नेसे हमारी शक्तिका क्षय होता है। सद्भावना, विकाररहित आनदके प्रकारों, अुत्तम विचारो, चित्तकी समरसता आदिमे ज्ञानेद्रिया काम तो करती है, लेकिन अिनसे शक्ति प्राप्त होती है और चित्तशक्ति बढती है। हमारे नित्यके व्यवहारमे अिस ओर हमारा ध्यान नही जाता। चित्तमे अुठनेवाली वृत्तियोके अनुसार ही हमारी अिद्रियोकी क्रियाअे चलती रहती है। हममे विवेक और सावधानी न होनेसे या जीवनमे किसी पवित्र आदर्शको सिद्ध करनेकी महत्त्वाकाक्षा न होनेसे वृत्तियोका प्रवाह जैसे चलता है वैसे ही हम अुसे चलने देते है और अुसी तरह अिद्रियोकी क्रियाये भी होती रहती है। पाच ज्ञानेद्रियोके पचविध विषयोमे ही हमारा चित्त सदा रममाण होता है। जीवनके अिस क्रमको बदलनेके लिअे हमे हेतुपूर्वक अुस दिशामे प्रयत्न करना चाहिये। अिन प्रयत्नोमे से मौन अेक प्रकार है। वाणीके सपूर्ण सयमका अर्थ है मौन। सचमुच जो अपने चित्तके द्वारा कोअी विशेष कार्य करवाना चाहते हो, किसी गूढ और पवित्र विषयका

गहराअीसे विचार करना चाहते हों, अुन्हे चाहिये कि वे अपनी कर्मेंद्रियो और ज्ञानेंद्रियोकी क्रियाओका यथासभव सकोच कर ले, अुन्हे समेट ले —अर्थात् अुनका संयम करे। केवल शब्दोच्चार बंद करनेसे वह कार्य पूर्णरूपसे सिद्ध नही होगा। फिर भी केवल वाणीका—अेक कर्मेंद्रियकी क्रियाका—सयम करनेसे भी कुछ शक्ति बचती ही है और अिस प्रकार शब्द-सयमका असर चित्तमे अुठनेवाली वृत्तियो पर होनेसे अुनकी चचलता कम होती है। अिससे चित्तशक्तिका व्यय कम होता है और अुसका सग्रह होता है। अुस शक्तिका अुपयोग हम अपने अिच्छित कार्यमे कर सकते है।

प्रश्न—ज्ञानेंद्रियोकी शक्तिका व्यय कब होता है और अुनकी शक्तिका सग्रह कैसे बढ सकता है? अिस विपयमे आप कुछ अधिक स्पष्टीकरण करे तो ठीक होगा।

अुत्तर—ज्ञानेंद्रियोसे होनेवाले कार्योंके दो भेद हैं। अेक होता है प्रिय विपय और दूसरा होता है अप्रिय विपय। प्रिय विषयमे हमारी ज्ञानेंद्रियोको जो कार्य करना पडता है अुसमे रस पैदा होनेसे अर्थात् प्रीतिके कारण हमे सुख और आनदका अनुभव होता है। अिसमे अिंद्रियोको श्रम नही पडता तथा अुससे मिलनेवाले रसानुभवके कारण अिंद्रियोकी शक्ति बनी रहती है। अितना ही नही, ज्ञानेंद्रियो द्वारा हमे अेक प्रकारका आराम मालूम होता है। लेकिन यह लाभ विपयके प्रिय होनेके साथ साथ वह कल्याणप्रद हो तभी मिलता है। विपय प्रिय होने पर भी यदि वह कल्याणप्रद न हो और अुसका परिणाम दु.खदायी हो, तो अुससे भी हमारी ज्ञानेंद्रियोकी शुद्धि और शक्ति कम होती है और कुल मिलाकर चित्तकी शक्ति क्षीण होती है। मौनमे प्रिय या अप्रिय किसी भी विपयके लिअे अुपयोगमें आनेवाली वाणीको हम काममें नही लाते। बोलनेसे ही दूसरोके साथ हमारा सबंध आता है। अुस सबधके कारण जिन जिन विपयों पर बातचीत होती है, अुन अुन विपयोंके अनुरूप हमारी चित्तवृत्ति बन जाती है। यह स्थिति अुस समय तक ही सीमित न रहकर बातचीत या चर्चा बद होने पर भी चलती रहती है; अर्थात् वे विपय हमारे चित्तमे घुटते रहते है। अिस तरह वाणीका सयम न

करनेसे हमारी शक्ति और समयका निरर्थक व्यय होता है। अिसी बातको मैं अधिक स्पष्ट करता हूं। हमारे प्रत्येक कार्यके पीछे विवेक-दृष्टि न होनेसे और अुस प्रकारकी आदत न होनेसे हररोजके बोलनेमें हम कितना निरर्थक बोलते है, यह बात विचार करनेसे ध्यानमें आयेगी। अिंद्रियोंकी पडी हुअी आदतोंके अनुसार हम बरतते हैं। हमारा बोलना, हमारा संभाषण, हमारी चर्चा कअी बार अुद्देश्यहीन होती है। यह अनुभवकी बात है। बातका प्रारंभ अेक विषयसे होता है। फिर अुससे पैदा होनेवाले भिन्न भिन्न विषयोंकी ओर वह प्रवाह मुड़ता है। बातचीत होती तो बहुत है, लेकिन अुसमें से सार या तथ्यके रूपमें कुछ भी प्राप्त नहीं होता। कअी बार तो बातचीतका प्रारंभ किस विषयसे हुआ था, अिसका भी स्मरण नहीं रहता। अिससे केवल वाचालता बढ़ती है और अुसके साथ कअी मानसिक दोषोंकी वृद्धि होती है। वाणी द्वारा कर्मका आरंभ होने पर बातचीतके विषयोंके अनुसार चित्तवृत्तियां अुठने लगती है और अुनकी तीव्रताके अनुसार हमारी ज्ञानेंद्रियों पर अुनका परिणाम होता है, तनाव पड़ता है। बात पूरी होने पर भी चित्त तथा ज्ञानेंद्रियों पर पड़ा हुआ तनाव दूर नहीं होता। अिस प्रकारके तनावसे हमारी शक्तिका क्षय होता है। जिन्हें अपने चित्तसे विशिष्ट काम करानेकी अिच्छा हो, अुन्हें चाहिये कि वे चित्त और ज्ञानेंद्रियोंके अैसे धर्मोंको समझकर व्यवहार करें। जो व्यक्ति अंतर्मुख होकर किसी विषयका गहराअीसे विचार करना चाहता है, अुसके लिअे मौनका पालन आवश्यक है। यह साधारण अनुभव है कि जब दो व्यक्ति मिलते हैं, कुछ समय दोनोंको अेक साथ रहनेका मौका आता है, तब कभी कभी कुछ बोलना ही चाहिये अैसा मानकर बोलते हैं। जबान बिना बोले रह नहीं सकती और विचारोंको मनमें रोका नहीं जा सकता, अिसलिअे लोग कुछ बोलते ही हैं। अिसका कारण विचारोंकी स्थिरता या विवेक नहीं, किन्तु मानसिक चंचलता ही मुख्यतया होती है। संत ज्ञानेश्वरने ज्ञानी लोगोंके अनेक लक्षणोंमें परिमित बोलनेको भी अेक लक्षण बताया है। वे कहते हैं कि ज्ञानी लोगोंकी वृत्ति कम बोलनेकी रहती है। बोलनेका मौका आने पर अुनके मुखसे अिस प्रकार शब्द निकलते हैं:

मग प्रार्थिला विपाये। जरि लोभे बोलो जाये।
तरि परिसतया होये, माय बापु ।।
कां नादब्रह्मचि मुसे आले। की गगापय असळळे।
पतिव्रते आले। वार्धक्य जैसे।
तैसे साच आणि मवाळ। मितले आणि रसाळ।
शव्द जैसे कल्लोळ। अमृताचे ।।

ज्ञानेश्वरी, अ० १३, ओवी २६८–२७०

कोअी वोलनेके लिअे अुनसे प्रार्थना करे और वे प्रेमसे वोलने लगे, तो सुननेवालोको अुनका बोलना माता-पिताकी तरह आनददायक लगता है। अुनकी वाणी क्या है मानो नादब्रह्म (वेद)का ही मूर्तरूप है, अथवा स्वच्छ गगाजलकी अुछलती तरगे है, अथवा पतिव्रता स्त्रीको प्राप्त हुआ वार्धक्य है (पातिव्रत्य और वार्धक्य दोनोके मिलनेसे पूज्यता दुगुनी हो जाती है)। अुनके मुहसे निकलनेवाले सत्य और मृदु, परिमित और प्रेमल शव्द अमृतकी लहरोकी तरह आह्लादक मालूम होते है। अिसी प्रकार सत कवीरने भी कहा है :-

अतिका भला न वोलना। अतिकी भली न चूप।
अतिका भला न बरसना। अतिकी भली न धूप।

सतोके अिन वचनोसे यही समझमे आता है कि चिंतनशील और मननशील व्यक्ति अकारण बोलता नही। अुचित और आवश्यक मात्रामे ही वह वोलता है। जिनसे अिस प्रकारकी परिमितता न सधती हो, वे अतिरेकसे बचनेके लिअे चित्तको अैसी आदत डाले। अैसी आदत डालनेके लिअे मौनकी आवश्यकता है।

यह विषय भलीभाति समझमे आ जाय, अिसके लिअे अेक और महत्त्वपूर्ण बातकी तरफ ध्यान देना चाहिये। केवल मौन पालनेसे चित्तके सभी प्रवाहोको अपेक्षित कार्योमे लगाया ही जा सकेगा, अैसा निश्चित नही है। अपने भाव, अूर्मि, विकार, विचार, अिच्छा, कामना आदिको व्यक्त करनेके लिअे मनुष्य अधिकतर शव्दोका — वाणीका अुपयोग करता है। केवल वोलनेकी आदत हो जानेसे कअी बार स्वभावगत वाचालताके अनुसार मनुष्य वोलता रहता है। मौनसे यह वद हो जाता है। हमारे

मौनके कारण दूसरे भी हमारे साथ बोलना बंद करते है या कम बोलते है। अिस प्रकार हमारा शव्द-व्यवहार कम होनेसे भाषण या सभाषणके कारण चित्तमे पैदा होनेवाली चचलता या ज्ञानततुओ पर पडनेवाला तनाव कम होता है। मौन धारण करनेवालोमे से कुछ अैसे लोगोको मैने देखा है जो स्वयं वोलते नही, पर दूसरोका भाषण, बाते या चर्चा सुनते रहते है, जिससे मौनके सच्चे लाभसे वे वञ्चित रह जाते है। क्योकि दूसरोके वोलनेसे मनुष्यके चित्त पर जो परिणाम होते है, वे परिणाम अुनके चित्त पर होते ही रहते है। कुछ लोग ताश खेलनेमे या सोनेमे मौनका समय बिताते है। अैसे मौनके पीछे अुनका अुद्देश्य मनन और चितनका नही होता, वह केवल कर्मकाडके जैसा हो जाता है। लेकिन अिससे मौनके सच्चे अुद्देश्यकी सिद्धि नही होती। मौनका सच्चा अुद्देश्य प्रथम तो यह होना चाहिये कि वह शब्द-व्यवहारका सयम साधकर अुसके द्वारा चित्तवृत्तियोंको रोके और चित्तकी सभी शक्तियोको अपेक्षित पवित्र कार्यमे लगाये। व्यर्थ जानेवाली शक्ति और समयको बचाकर तथा चितन-मननसे शक्तिको बढ़ाकर अुसे अपेक्षित कार्यमे लगानेका हेतु सिद्ध करना हो, तो सपूर्ण रूपसे शव्द-सयम साधना चाहिये। हमारे मुखसे निकलनेवाले शव्दोका सयम अेकागी सयम है। शब्द-सयम दोनो तरहसे साधना चाहिये। जिह्वाका सयम दो प्रकारसे साधना पडता है: अेक वाणी यानी शव्दोच्चारका सयम और दूसरा स्वाद-सयम। अिसी तरह शब्द-सयम अपनी और दूसरोंकी ओरसे — अिस तरह दोनो ओरसे साधना जरूरी है। जो लोग केवल अपने शव्दोका ही सयम पालते है, अुनका मौन गूगोकी सिद्धि जैसा होता है, जो सुन तो सकते है मगर वोल नही सकते। लेकिन जो चित्तकी अेक खास स्थितिके लिअे मौन पालते है, अुनको जैसे जिह्वा द्वारा शव्दका व्यवहार वद करना चाहिये, वैसे ही श्रवणेद्रियकी ओरसे भी सयमी रहनेका प्रयत्न करना चाहिये। अपने अुद्देश्यकी सिद्धिके लिअे अुपयोगी ग्रथोके वाचनके अतिरिक्त दूसरा वाचन भी अुन्हे वंद कर देना चाहिये।

अैसा मौन हमारी वृत्तियोको अंतर्मुख करनेमे अुपयोगी सिद्ध होता है। अपनी वृत्तियोको अतर्मुख करके और अुनका निरीक्षण-परीक्षण करके

अपने ही अतरकी गहराअीमे जानेका अभ्यास करनेके लिअे हमे मौनका अुपयोग करना चाहिये। हम अपनी ही यानी अपनी चित्तवृत्तियोकी शोध न करे, तो हमे अपनी सच्ची स्थितिकी पहचान नही होगी। शोध दो प्रकारसे करनी होती है। अेक, अपनी वृत्तियोकी शोध करके अुन्हे पहचाननेकी; और दूसरी, अशुद्ध वृत्तियोको शुद्ध करनेकी। हमारी वृत्तिया किस प्रकारकी है, हमारे चित्तकी सच्ची अवस्था क्या है, अिसकी हमे ठीक जानकारी ही नही होती। अुनका संपूर्ण ज्ञान हमे होना चाहिये। अतर्मुखताके बिना यह बात सिद्ध नही होगी। अिसीलिअे अिस मार्गमे अतर्मुखताकी बड़ी जरूरत है। स्वाभाविक रूपसे बाहर दौडनेवाली वृत्तियोको रोके बिना अंतर्मुखता नही सधती। कर्मेंद्रियो तथा ज्ञानेद्रियोके बाह्य व्यवहार कम किये बिना अिधर-अुधर दौडनेवाली वृत्तियां पूर्ण रूपसे हमारे ध्यानमे नही आती। मौनसे शब्द-व्यवहार अटकता है। शब्द-व्यवहार कम होने पर शब्दोके कारण अुठनेवाली वृत्तिया कम होती है। बोलनेका व्यवहार कम होनेसे अुसके आधार पर चलनेवाले व्यवहारोमे मंदता आती है और आगे चलकर वे वद भी हो जाते है। यह स्थिति अतर्मुखताके प्रयत्नमें सहायक होती है। सूक्ष्म विचारोका चिंतन-मनन अतर्मुखताके बिना नही हो सकता। मौनसे ये बाते साध्य बनती है। लेकिन मौन अूपर लिखे अुद्देश्यसे धारण किया हुआ होना चाहिये। चित्तको आध्यात्मिक सूक्ष्म विपयोकी गहराअीमे ले जानेके लिअे अुपयोगी हो सके अैसी अतर्मुखता जिस मौनमे सधती है वही सच्चा मौन है। अुसके अतिरिक्त दूसरे मौनका जीवन-विकासकी दृष्टिसे कोअी अुपयोग नही है। मौनका सही अुपयोग अिस मार्गमे हो अैसी जिनकी अिच्छा है, अुन्हे चाहिये कि वे अपना साध्य पवित्र रखें। मौनसे अतर्मुखता सधती है या नही, अिस ओर हमे ध्यान देना चाहिये। हम जिस साधनका अुपयोग करते है अुस साधनसे अपने साध्यकी ओर हमारी प्रगति हो रही है या नही, यह पहचानने जितना विवेक, सावधानी और परख आदि गुण हममे होने चाहिये।

मौनका महत्त्व चाहे जितना हो, तो भी वह जीवनका साध्य नही परन्तु साधन है, यह वात हमे कभी भूलनी नही चाहिये। मौन

द्वारा मिली हुअी सिद्धियोकी प्रतीति मौन छोड़ने पर ही मालूम होती है। अुनमे से प्रथम सिद्धि वाचाशुद्धि है। कअी दिन तक मौन रखने पर भी वाचाशुद्धि न सधे तो मौन द्वारा वाचाशुद्धिसे अधिक कठिन सिद्धि प्राप्त करना असभव मानना चाहिये।

'साच आणि मवाळ। मितले आणि रसाळ। शव्द जैसे कल्लोळ अमृताचे।' ये वाचाशुद्धिके लक्षण सत ज्ञानेश्वरने बताये है। मौनसे कमसे कम अितना प्राथमिक लाभ तो होना ही चाहिये। यदि मौनसे अितना भी लाभ न हो, तो अुससे दभ और भ्रम निर्माण होनेकी सभावना और खतरा है, यह समझकर अिस विपयमें हमे सावधान रहना चाहिये।

२२

मानवताकी सिद्धिका संकल्प

ज्ञान, विद्या, धन, वल, कला आदिकी प्राप्ति आसानीसे नही होती। अुसके लिअे परिश्रम करना पडता है। अिनमे से धन तो कदाचित् विरासतमे मिल सकता है, लेकिन दूसरी किसी सिद्धि या विशेषताकी प्राप्तिके लिअे मनुष्यको स्वय ही प्रयत्न करना पडता है। योग्य मार्गके बिना अुसमे सफलता नही मिलती। अिसी तरह मानवताकी सिद्धि भी योग्य मार्गके विना नही मिल सकती। मनुष्यका शरीर प्राकृतिक नियमोंके अनुसार बढता है। वुद्धि भी अुसके साथ बढती है। लेकिन जिसे शरीर और वुद्धिका विशिष्ट विकास करना हो, अुसे वैसा शरीर और बुद्धि प्राप्त करनेके लिअे योजना बनाकर अुस दिशामे विशेष प्रयत्न करना पड़ता है। परमात्माने मनुष्यको जो विशेष शक्तिया दी है या मनुष्यने स्वय प्राप्त की है, अुनमें सकल्प-शक्ति अत्यत महत्त्वपूर्ण है। कोअी भी सफलता या सिद्धि प्राप्त करनेके लिअे मनुष्यको पहले दृढ सकल्प करना पड़ता है। शरीरको अुत्तम और शक्तिशाली बनानेकी जिसकी अिच्छा हो, अुसे पहले वैसा सकल्प करना पड़ता है और वैसा आदर्श सदा अपनी

दृष्टिके सामने रखना पड़ता है। हनुमान, भीम, रुस्तम, सैमसन, सैंडो आदिमे से किसीका भी चित्र आदर्शके रूपमें मनमे रखना होता है। भविष्यमे अुसका शरीर कैसा बने, अिसका अुत्तमसे अुत्तम कल्पना-चित्र अुसे अपनी नजरके सामने रखना पडता है। धनवान बननेकी अिच्छा करनेवाले धनके चिन्तनके साथ किसी धनी व्यक्तिका या अपनी सपन्न स्थितिका चित्र मनमे रखते हैं और अुसका सदा चिन्तन करते हैं। जिसका जैसा सकल्प और आदर्श होता है, वैसा ही अुसका चिन्तन चलता है। अुसके अनुरूप वह भावी जीवनकी योजना या नकशा बनाता है और दृढतापूर्वक अुस दिशामे प्रयत्नशील रहता है। संकल्पमात्रसे सिद्धि प्राप्त नही होती। अुसके लिअे दीर्घ प्रयत्न, दृढता, धीरज, सहिष्णुता, योजना-शक्ति आदि सद्गुणोकी आवश्यकता होती है। चारित्र्यकी सिद्धि और मानवताकी प्राप्तिके लिअे अिसी तरह प्रयत्नशील रहना पडता है। चारित्र्य और मानवताकी प्राप्ति अुचित परिश्रमके बिना अनायास नही हो सकती। हमारे आदर्शका सच्चे सकल्पके साथ सदैव अनुसधान साधकर प्रयत्नशील रहनेसे ही वह सिद्धि प्राप्त होती है।

जीवनका सच्चा आदर्श रातदिनके हमारे चिंतन और व्यवहारके अतिम हेतुसे समझा जा सकता है। रोज सबेरे अुठनेके बाद रातको सोने तक हम किस विषयका चितन करते है, धन, मान, प्रतिष्ठा, सत्ता, चारित्र्य आदिमे से किस बातकी प्राप्तिसे हम धन्यता और प्रसन्नता अनुभव करते है, अिसे यदि हम हर रोज देखते रहे तो अपने जीवनके आदर्शको समझ सकेगे। हमारे नित्य आचरणसे अपना आदर्श हमारी समझमे आ जायगा।

मानवताके सिवा अन्य कोअी भी सफलता हमे अुन्नत नही बना सकेगी, अिस सिद्धान्त पर हमारी श्रद्धा होनी चाहिये। व्यवहारमें हमे अिस प्रकारके जीवन-सकल्पकी दृष्टि रखनी चाहिये। धनका लोभी मनुष्य अपने नित्यके व्यवहारमे मानवताको खोकर धनप्राप्ति करता है और अुसीमें धन्यता और सतोप मानता है। मानवताका सही मूल्य न समझनेसे वह धनके लोभमे फसता है। अुसी तरह मान-सम्मान, प्रतिष्ठा, अैश्वर्य तथा विलासमे मग्न रहनेवाले सब अपने विषयकी तृप्तिमे सतुष्ट रहकर धन्यता मानते है। अैसे प्रयत्नोमे मानवता नष्ट होती है या नही अिस ओर

अुनका ध्यान नही जाता। लेकिन जिनमें मानवताकी सिद्धिकी अिच्छा होती है, वे अपने नित्यके व्यवहारमे अुसकी रक्षा और वृद्धि करते रहते हैं। अुसके लिअे धन खोनेका प्रसग आये या मान, प्रतिष्ठा, अैश्वर्य, सत्ता छोडनेका मौका आये, तो भी वे अुसकी परवाह नहीं करते। सब कुछ खोकर भी वे मानवताकी ही सफलता चाहते है और अुसके लिअे प्रयत्नशील रहते है। जिनकी नित्यके व्यवहारमे यह दृष्टि होती है, वे मानवताके सच्चे अुपासक है। और मानवताकी सिद्धि अुन्हे ही प्राप्त होती है।

अिसका यह अर्थ नही है कि जीवनमे धन, ज्ञान, बल, विद्या, कला, सामर्थ्य, सत्ता आदिका कोअी मूल्य नही है। अिनमे से प्रत्येककी सिद्धि या विशेपताका जीवनमें मूल्य है, अिसमे शंका नही। लेकिन अिन सबका मूल्य मानवताके लिअे है, यह हमे कदापि नही भूलना चाहिये। मानवताको खोकर प्राप्त करने जैसी कोअी भी सिद्धि नही है, यह हमे निश्चित रूपसे समझ लेना चाहिये। अिस दृष्टिसे हमें अपने जीवनकी ओर, जीवन-क्रमकी ओर और जीवन-व्यवहारकी ओर देखना चाहिये और सावधान रहना चाहिये। परमात्माने हमे मानव-जन्म दिया है, अिसलिअे हमे मानव-धर्मका पालन करके मानवताकी सिद्धि और सफलताका संकल्प करना चाहिये। अुस दिशामे प्रयत्नशील रहना चाहिये। सच तो यह है कि हमे सदा जाग्रत रहकर जीवनका लेखा लेना चाहिये। परन्तु किसी कारणसे यह वात हमसे हररोज न वन पड़े, तो कमसे कम पर्वके दिनोमे — धार्मिक, पवित्र और आनन्दके दिनोमे — हमे यह जागृति अवश्य रखनी चाहिये।

२३

तत्त्वज्ञानमें संशोधन-वृत्तिकी आवश्यकता

भारतमे अत्यत प्राचीन कालसे आरभ करके लम्बे समय तक तत्त्व-ज्ञानका अभ्यास और संशोधन चलता रहा है। यही स्थिति दूसरे अनेक विषयो तथा शास्त्रोके सबधमे भी है। ज्ञानकी जिज्ञासाके साथ सशोधनका शास्त्रीय प्रयत्न और अभ्यास जब तक समाजमें चालू रहा, तब तक हमारे देशमे प्रत्येक विषयका विकास होता रहा। लेकिन ज्ञानकी किसी भी भूमिका या मजिलको ज्ञानकी चरम सीमा समझकर अुसीमे हम कृतार्थता महसूस करने लगे, सशोधनसे सम्बन्वित तर्कको ही कभी कभी पूर्ण ज्ञान समझकर अुसी पर श्रद्धा रखने लगे, अुसीमे आनन्दकी भिन्न-भिन्न धारणाअें बनाकर आनंद मानने और बढ़ाने लगे, अुसी आनन्दमे लीन तथा मस्त रहनेका प्रयत्न करने लगे और अन्तमे अुसीमे हमने मोक्षसिद्धि मान ली तबसे अुस विपयका सशोधन वद पड़ गया।* परिणाम यह हुआ कि हमारे पूर्वजो, अुनके ज्ञान, अुनके रचे हुअे शास्त्रो और ग्रंथोका अभिमान ही केवल समाजमे वढ़ता गया। हमारे पूर्वज ज्ञानकी पराकाष्ठा तक पहुचे थे, अुन्होने सभी विषयोमे पूर्ण शोध कर रखी है, अुसके आगे शोधके लिअे अवकाश ही नही है, अैसा समझकर हम अुसी प्रकारकी श्रद्धा बढाते रहे है। जिस कुलमें पुरुषार्थी व्यक्तियोकी परपरा वद हो जाती है, अुस कुलके वंशज जिस तरह पूर्वजोके अैश्वर्य और बड़प्पनका वर्णन करके अपनेको श्रेष्ठ मानते है और बड़प्पन पानेका प्रयत्न करते है, अुसी तरह हमारी जिज्ञासा और सशोधन-वृत्ति मंद पड जाने और अुसका नाश होने पर हम ज्ञानके क्षेत्रमे अपने पूर्वजोके विपयमे अुपरोक्त दृष्टिसे सोचने और मानने लगे। अेक वार मोक्ष-विषयक जो श्रद्धा हममे घर कर गअी, अुसके कारण हमारी ज्ञानकी प्रगति रुक गअी, और तत्त्वज्ञान-संवधी किसी भी विचारसरणीको या भक्ति-भावनाके आवेशको तथा अुसमे पैदा होनेवाली तन्मयताको मोक्षका

---

* अिस विपयका विस्तृत निरूपण 'विवेक और सावना' नामक मेरी पुस्तकके 'तत्त्वज्ञानका साध्य' शीर्षक प्रकरणमे किया गया है।

साधन या जीवनकी सार्थकता मानने लगें, तभीसे जीवनके अनेक क्षेत्रोमे हम पिछड़ गये, अैसा विचार करने पर दिखाअी देता है।

सशोधन-वृत्ति नष्ट हो जानेके बाद यह विषय केवल श्रद्धाका बन गया और अुस कारणसे सिद्धातके रूपमे माने हुअे अुसके भीतरके तर्ककी तथा तद्‌विषयक विचारसरणीकी विसगति और परस्पर-विरोध हमारे ध्यानमे नही आ सके। कभी वे ध्यानमे आ जाते तो अैसा माना जाता कि यह विरोध या विसगति यथार्थ नही है और अैसा लगना हमारे अपूर्ण ज्ञानका लक्षण है, हम अपने आपको यह समझाकर पूर्व श्रद्धा कायम रखनेका प्रयत्न करने लगे कि पूर्ण ज्ञान होने पर, अनुभवात्मक सच्चा ज्ञान होने पर यह विरोध तथा विसगति नही रहेगी। अिस प्रकारकी प्रचलित मन स्थितिके कारण अिस दिशामे हमारा विकास रुक गया है, और केवल अभिमान तथा आग्रह ही बढे है। परम्परासे चली आअी और श्रद्धासे मानी हुअी समझको हम ज्ञान समझते है। अिस कारणसे अुस विषयका सशोधन करनेका विचार हमारे मनमे नही अुठता। ज्ञान विकासशील है अैसा न समझकर हमने अुसे सीमामे बाध रखा है। अिससे हमारी हानि हुअी है और हो रही है, यह हमारे ध्यानमे ही नही आता।

मेरी अपनी स्थिति भी किसी समय अैसी ही थी और अैसी ही मेरी दृढ श्रद्धा भी थी। लेकिन कुछ अभ्यास और व्यवस्थित विचार करने पर अपनी श्रद्धाके दोष मेरे ध्यानमे आये और पहले जो अभिमान मेरे मनमे था वह दूर हो गया। अिस विषयमे जिज्ञासु तथा आस्तिक होनेके कारण ज्ञानानुभवी माने हुअे अनेक श्रेष्ठ व्यक्तियोसे ज्ञान प्राप्त करनेका मैने प्रयत्न किया। जिज्ञासा और विनयपूर्वक मैने अिस विषयके अनेक प्रवचन सुने है। 'तद् विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया' अिस आज्ञाके अनुसार सद्‌भावपूर्वक सत्यकी अुपासना करते-करते मेरा अुपरोक्त मत बना है। अुसमें सत्य और तथ्य कितना है, अिसका विचार पाठक करे। वाद-विवादकी वृत्ति मुझमे नही है, अत मेरा स्वभाव वैसा नही बन पाया। फिर भी अिस विषय पर बोलने तथा विनयपूर्वक चर्चा करनेके कभी कभी प्रसग आते थे। अिसमे मुख्य अुद्देश्य सत्य-शोधनका होनेके कारण 'हार-जीत' की वृत्ति जरा भी नही रहती थी। अैसे

प्रसगोमे से अेक प्रसग मुझे याद आता है। अुसे देनेके निमित्तसे अितना प्रास्ताविक लिखना पडा।

यह कोअी १९३४ की बात होगी। बिहार-भूकपके राहत-कार्यसे वापस लौटते समय बनारस, हरिद्वार आदि स्थानोकी यात्रा करके मै बबअी लौटा था। अुस समय हरिद्वारमे कुछ रोज मै ठहरा था। हरिद्वार और अृषिकेशमे सन्यासियोकी खासी बस्ती है। किसी भी साधु-सन्यासीके पास बैठकर ज्ञानचर्चा करना वहाका रिवाज-सा है। अुस समय वहा अनेक साधु-सन्यासियोसे मै मिला। अुसमे हरिद्वारके अेक घाट पर अेक स्वामीजीसे दोपहरको मेरी अनायास भेट हो गअी। कुछ बातचीतके बाद मैंने अुनसे ज्ञानके विपयमे कुछ अधिक कहनेकी प्रार्थना की। स्वामीजीने मेरी प्रार्थना स्वीकार करके अपनी कुटी पर ३–४ बजे आनेको कहा। अुन्होंने अपना नाम 'श्री स्वामी अमृतानद सरस्वती योगीराज' बताया। वहा साधु-सन्यासियोकी अधिक बस्ती होनेके कारण अुनका स्थान सुगमतासे मिल जाय, अिस दृष्टिसे अुन्होंने अपना पूरा नाम बताया होगा, अैसा मैंने समझा। मै ठीक समय पर अुनके स्थान पर पहुचा। स्वामीजी मूलत बगालके रहनेवाले थे। अुनका शरीर भव्य और आयु लगभग ७०–७५ की होगी। वहा जाते ही मुझे जो अनुभव हुआ अुस परसे अुनकी दया, प्रेम और द्रव्यके विपयमे अुनकी नि.स्पृहताका दर्शन मुझे हुआ। विस्तार-भयसे वह घटना न देकर अुनके साथ जो वाते हुअी वही अधिकाशमे अक्षरश. यहा दे रहा हू। मैंने वह चर्चा लिख रखी थी अिसलिअे अुसे दे सकता हूं। बातचीत हिन्दीमे ही हुअी थी।

संवाद

स्वामीजी : तुम कहा रहते हो? और क्या कामकाज करते हो?

मै · बबअीमे रहता हू और कुछ सिखानेका काम करता हू।

स्वामीजी : कितना वेतन मिलता है?

मै वेतन नही मिलता।

स्वामीजी : वेतनके बिना तुम्हारा काम कैसे चलता है?

मै : जिनका काम मै करता हूं वे मेरा खर्च चलाते है।

स्वामीजी : तव तो तुम्हारी स्थिति वहुत गरीवीकी होनी चाहिये ?

मै : हा साधारण गरीवी तो है ही। लेकिन स्वामीजी, अिस चर्चाको छोड़े। कुछ ज्ञानकी वात कहिये।

स्वामीजी : तुम्हारी यह अिच्छा जानकर वहुत आनन्द होता है। तुम्हारी यह अिच्छा वहुत अच्छी है। ज्ञानसे वढकर ससारमे दूसरी कोअी भी वस्तु नही है। मनुष्य ज्ञानसे तर जाता है, यदि ज्ञान न हो तो दु.ख भोगता है। सभी ज्ञानोंमें ब्रह्मज्ञान श्रेष्ठ है। अुसे पाने पर मनुष्य जन्म-मरणसे छूट जाता है। मनुष्य-जन्मका हेतु मोक्षकी प्राप्ति है। वह विना ज्ञानके प्राप्त नही होता। हमारे धार्मिक तथा आध्यात्मिक ग्रथोमें ज्ञानकी वडी महिमा वताअी गअी है। 'न हि ज्ञानेन सदृश पवित्रमिह विद्यते'—अैसा गीतामे भगवानने कहा है। लेकिन जीव अिसकी ओर ध्यान न देकर प्रत्येक भवमे विपय-सुखमे लगा रहता है, जिससे वह चौरासी लाख योनियोमे भटकता रहता है। 'पुनरपि जनन पुनरपि मरण पुनरपि जननी-जठरे शयनम्' अिस चक्रमे वह पड़ा रहता है। ज्ञानके विना यह फेरा टलना सभव नही है। अिसलिअे मनुष्यको ज्ञानकी यानी ब्रह्मज्ञानकी वडी जरूरत है। ब्रह्म कैसा है, वह क्या है, यह जानना ही ब्रह्मज्ञान है। ब्रह्मका साक्षात्कार करना अर्थात् अुसे जानना। अैसे साक्षात्कारके विना ज्ञानावस्था प्राप्त नही होती। साक्षात्कार होनेसे हम स्वय ही ब्रह्मरूप हो जाते है और तभी मोक्षकी प्राप्ति होती है।

ब्रह्म स्वय निर्गुण, निरजन है। अुसमे अिच्छाओ तथा वासनाओका मल नही होता, अिसलिअे अुसे निर्विपय कहते है। वह केवल है। अुसके समान और अुसके अतिरिक्त दूसरा कोअी न होनेसे वह 'अेक-मेवाद्वितीयम्' है। अुसे अुपमा देनेके योग्य दूसरा कुछ भी नही होनेसे अुसे निरुपमेय कहते है। वह निरुपाधिक, अचल, शाश्वत तथा निर्विकल्प है। अिद्रियो द्वारा वह प्राप्त नही होता। वह अनिर्वचनीय है। 'यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह' अैसा अुसके विपयमे कहा गया है। अैसे ब्रह्मका ज्ञान, अुसका साक्षात्कार हुअे बिना जन्म सार्थक नही होता।

मूल निर्विकल्प ब्रह्ममे 'अेकोऽह वहु स्याम् प्रजायेय' अैसी अिच्छा—मूल स्फुरण अुठते ही चराचर ब्रह्माडका विस्तार निर्माण हुआ। अिस

विस्तारमे, मायाके मोहमें हमे फसना नही चाहिये। असके लिअे सदा ब्रह्म-चिंतन करना चाहिये। अिस मायासे छूटनेके लिअे हमे पूर्णावतार श्रीकृष्ण परमात्माकी श्रणमे अनन्य भावसे जाना चाहिये। रात-दिन अुसीका ध्यास लगना चाहिये। अुसके दर्शनकी व्याकुलता हममे होनी चाहिये। अुसका दर्शन हो, हम पर अुसकी कृपा हो, तो हमारे सारे भववध टूट जायेंगे। फिर हमे किसी भी बातका भय नही रहेगा। अुसका दर्शन, अुसका ज्ञान हो, अिसलिअे हमे निरिच्छ (अिच्छारहित), निर्विपय होना चाहिये। सभी अिद्रियोका सयम करके ब्रह्मचर्यादि व्रतोका अखड पालन करना चाहिये। किसी भी भौतिक सुखमे न पड़कर वैराग्य-निष्ठ मनसे हमे ब्रह्मकी अथवा साक्षात् ब्रह्मस्वरूप श्रीकृष्ण परमात्माकी आराधना करनी चाहिये। अिस प्रकार अेकनिष्ठ बनकर आराधना करनेसे ब्रह्म-साक्षात्कार अथवा परमात्माका दर्शन हुअे विना नही रहेगा। अिसीलिअे मानव-जन्म है और अुस हेतुको सिद्ध करनेमे ही मानव-जन्मकी सार्थकता है। अच्छा, मेरा कहना ठीकसे समझमे आया या नही ?

मै : कुछ तो समझमे आया और कुछ समझमे नही आया।

स्वामीजी . कहो, क्या समझमे नही आया ? अिसमे तो सब बात स्पष्ट है। न समझने जैसी कोअी बात नही है।

मै : ब्रह्म निर्गुण, निराकार, निरिच्छ है, अैसा आपने कहा। तो अैसे ब्रह्मको 'अेकोऽह बहु स्याम्' अैसी अिच्छा किस कारणसे हुअी ? और जिसकी अिच्छासे यह सारा ब्रह्माडका विस्तार निर्माण हुआ अैसा आप कहते है, अुसमे अितनी बड़ी अिच्छा होने पर भी आप अुसे निरिच्छ कैसे कहते है ? और ब्रह्मके अतिरिक्त दूसरा कोअी नही, अिसे यदि सच माना जाय और हम सव अुसीमे से निर्माण हुअे हो, तो फिर यह कहना चाहिये कि हम सब अुसीके अश है। और हम सबमे अिच्छा, वासना, माया-ममता भरी हुअी है, यह हम जानते है। ब्रह्म यदि निरिच्छ है तो हममे ये दोप कहासे आये ? तब तो अैसा लगता है कि अशमें रहनेवाले दोष मूलमे वडे प्रमाणमे होने चाहिये; अथवा कार्यमे दिखाअी देनेवाले दोष कारणमे भी सुप्त रूपसे होने ही चाहिये। अैसी स्थितिमें ब्रह्म निर्गुण, निरिच्छ, निर्विकल्प कैसे है, यह समझमे नही आया।

स्वामीजी : स्वय ब्रह्म तो जैसा मैंने कहा वैसा ही है; लेकिन अिस सारे दृश्याभासका कारण माया हे, अिसलिअे यह सारा अुस मायाका प्रभाव है।

मै : लेकिन अेकमात्र ब्रह्मके सिवा दूसरा कुछ न होने पर भी ब्रह्म पर या अुसके अश हम पर विरुद्ध प्रभाव डालनेवाली यह माया आअी कहासे? यह ब्रह्मसे ही निर्माण हुअी अैसा कहे, तो आपने ब्रह्मका जैसा वर्णन किया है वैसा वह नही होना चाहिये। यदि मायाको ब्रह्मसे अलग माना जाय तो अुस पर अुसकी अिच्छाके खिलाफ प्रभाव डालनेवाली यह दूसरी महान शक्ति विश्वमे है अैसा मानना पड़ेगा। अिससे ब्रह्मके सिवा दूसरा कुछ भी नही, अिस कथनमे बाधा पड़ती है। यदि ब्रह्ममें ही ये सब प्रकार भरे हुअे है अैसा माना जाय और अुसके चिंतनसे हम ब्रह्मरूप हो जाय, तो अुसका अर्थ यह होगा कि ये सब प्रकार हममे ही है। फिर अैसे ब्रह्मके साथ तद्रूप होनेसे, अुसे जाननेसे, अुसका साक्षात्कार करके हमारे स्वयं ब्रह्म बन जानेसे हमारा जन्म-मरण कैसे टलेगा, यह समझमे नही आता। अिसके सिवा, आप जिन्हे पूर्ण ब्रह्मावतार श्रीकृष्ण परमात्मा कहते है, अुनका स्त्री-पुत्रादि परिवार कितना वडा था, यह हम सब जानते है। अितना वड़ा परिवार होने पर भी अुन्हें निरिच्छ कैसे कहा जाय?

स्वामीजी : अुनका अितना बड़ा परिवार होने पर भी सब कुछ करके भी वे अकर्ता थे। वे सबसे अलिप्त थे।

मै : वे अकर्ता और अलिप्त हो, तो अलिप्तको भी स्त्रीकी आवश्य-कता मालूम होती है और निरिच्छको भी सतति होती है, अैसा अर्थ अिससे स्पष्ट होता है।

स्वामीजी : अुनके अकर्तापन और अलिप्तताको पहचाने विना हम अुनकी महिमाको जान नही सकेगे।

मै : अुनके अकर्तापन और अलिप्तताको जाननेकी कोअी भिन्न दृष्टि या भिन्न ज्ञान है या श्रीकृष्ण परमात्मा साक्षात पूर्णावतार थे अिसलिअे अुनकी सब क्रियाअे, अुनके सारे कर्म, अुनका सपूर्ण आचरण अलिप्त रूपसे

होता था अैसा मानकर चलना चाहिये? किसीके मनको अुसकी स्थिति, अुसके आचरणसे पहचानना ठीक है अथवा अुसका मन अमुक प्रकारका है, अलिप्त है, अैसा पहलेसे ही गृहीत मानकर अुसके द्वारा होनेवाले कर्मोंके विषयमे हमारी श्रद्धाके अनुसार अपना मत वनाना अुचित है? प्रथम कुछ निश्चित करने या माननेमे विवेक, विचार या अनुभवका आधार होना चाहिये या नही? अथवा परंपरासे चली आओी किसी अेक मान्यताको स्वीकार करके और अुस मान्यताको मुग्ध भावनासे दृढ करके अुसे ही सत्य सिद्धात समझना चाहिये—अुसे ही किसीका अकर्तापन या अलिप्तता कहना चाहिये? क्या अिसे ही ज्ञानदृष्टि कहा जाय? अिस सवधमे अेक वात और ध्यान देने योग्य है। वह यह कि अलिप्त या निरिच्छका भी जिन वातोंके विना काम नही चलता, वे बाते यदि सर्व-साधारण लोगोको आवश्यक मालूम हो, अुनके बिना अुनका काम न चलता हो, तो वैसा करनेके लिअे अुन्हे दोषी कैसे माना जाय? मूल ब्रह्ममे ब्रह्माड निर्माण करने जैसी अिच्छा हो तो भी चल सकता है, 'अेकोऽह बहु स्याम्' अैसा अुसे लगने पर अुसमे से अितना बड़ा विस्तार हो तो भी चल सकता है, श्रीकृष्ण परमात्माका स्त्री-पुत्रोका चाहे जितना वड़ा परिवार हो तो भी कोअी हर्ज नही, लेकिन हममे—मनुष्यमे—अणुमात्र भी किसी प्रकारकी अिच्छा नही होनी चाहिये। हम सव सयमका पालन करके व्रह्मचर्यादि व्रतोका अखड पालन करे, तभी व्रह्म या अुसके अवतार श्रीकृष्ण परमात्माका साक्षात्कार, ज्ञान, दर्शन होनेकी आशा और सभावना हो सकती है! अुन्हे चाहे जितनी सतति होने पर भी अुनकी अलिप्ततामे कोअी वाधा नही पड़ती, और हम अपनी स्वाभाविक अिच्छाके अनुसार न चलकर कठिन व्रतोको पालते रहे, यदि अुसमे जरा भी भूल हो जाय तो हमारे लिअे व्रह्मके दर्शन, ज्ञान और साक्षात्कारकी आशा नही रह जाती! हमे जीवनभर निरिच्छ और निर्विपय रहना चाहिये। यह सव जहागीरके न्याय जैसा लगता है।

स्वामीजी: जहागीरका न्याय कैसा?

मैं जहागीर वादशाह वहुत शराव पीता था। लेकिन दूसरा कोअी अुसके सामने शरावका नाम ले, तो अुसे वरदास्त नही होता था, वह सहन नही कर सकता था और शराव पीनेवालेसे वह मिलता भी नही

था। अैसा अितिहासमे लिखा हुआ मिलता है। स्वयं मनमाना मद्यपान करके भी अुसने दूसरोके लिअे मद्यपान पर प्रतिबध लगाया था। क्या ब्रह्मका और श्रीकृष्ण परमात्माका न्याय भी वैसा ही नही है? हमें थोडा विचार करके देखना चाहिये कि जिसे हम अलिप्तता कहते है, अुस अलिप्त स्थितिमे दूसरोके लिअे त्याज्य तथा निपिद्ध मानी जानेवाली बाते क्या अलिप्त पुरुष कर सकता है? यदि कर सकता हो तो अुसका कारण क्या? वे बाते अुसकी अिच्छासे होती है या पराधीनतासे होती है? अिच्छासे होती है अैसा माना जाय तो निषिद्ध बाते वह स्वय क्यो करे? यदि पराधीनतासे होती है अैसा कहे, तो अुस पर सत्ता चलानेवाली दूसरी कोअी शक्ति है अैसा मानना पड़ता है। अैसी स्थितिमे जो पराधीन है अुसकी शरण जानेकी और अुसके दर्शनकी अुत्कट अिच्छा रखनेमे जीवनकी दृष्टिसे क्या लाभ?

शकाका स्पष्टीकरण करनेके लिअे कुछ और बोलनेका मन होता है। व्यसनाधीन मनुष्य शराब पीता है। व्यसनाधीनताके कारण वह अपनी अनिष्ट अिच्छाओको रोक नही सकता, टाल नही सकता, यह हम जानते है। लेकिन जो शराबको निषिद्ध मानते है, वे दूसरोसे वैसा कहते है। शराब पीनेवाले पर मै प्रसन्न नही होता, जो अुसे निपिद्ध मानकर नही पीता अुसी पर प्रसन्न होता हू। अैसा कहनेवालेको क्या अलिप्ततापूर्वक मद्यपान करना ठीक लगेगा? यदि मद्यपान करना अुसे ठीक लगे और वह मद्यपान करता हो, तो व्यसनाधीन मनुष्यमे और अुसमे क्या अन्तर होगा? और यदि अुन दोनोमे कुछ भी अन्तर न रहे तो व्यसनाधीन ही दोपपात्र है, यह कैसे कहा जा सकता है? अिस न्यायसे देखें तो ब्रह्म तथा श्रीकृष्ण परमात्माको निर्विपय और अलिप्त कैसे माना जाय? और हम सेच्छ, सविषय और लिप्त होनेके कारण दोपी कैसे कहे जा सकते है? मेरी समझमे कुछ आया और कुछ नही आया, अैसा जो मैंने कहा अुसके पोछे यह बात है। आप अिस पर विचार करके मुझे समझावे।

स्वामीजी तुमने मुझसे जो पहले कहा कि ज्ञानकी बात कहिये वह ज्ञानप्राप्तिकी जिज्ञासा-बुद्धिसे तुमने नही कहा था, अैसा तुम्हारी बातचीतसे लगता है।

मैं : केवल वैसी ही बात नही हैं। क्योंकि आप जिस ज्ञानके विषयमे कहते है और जिसका महत्त्व बताते है, वैसा ज्ञान मुझे नही हो पाया है; तथा आपने जो कुछ कहा अुस पर जो शकाअे मनमे अुठी अुसका निराकरण भी नही हो पाया है। लेकिन आपको अैसा लगे कि मैंने जिज्ञासा-बुद्धिसे प्रार्थना नही की, तो भी आपकी बातसे जो शकाये अुठनेकी बात मैंने कही है अुनका समाधान हो सके अिस तरह आप अपना कथन अधिक स्पष्ट रूपसे कह सकेंगे ?

स्वामीजी : तुम्हारा समाधान कैसे हो सकेगा, यह तो मैं नही जानता। लेकिन मेरी बातसे तुम्हारे मनमे पैदा हुअी शकाओका मैं निरसन नही कर सकूगा। तुमने जो कुछ कहा अुसका मेरे पास कुछ अुत्तर नही है।

मैं लेकिन मेरी शकाये मिथ्या है या मेरी विश्लेषण-पद्धति गलत है, अैसा आपको मालूम होता है क्या ?

स्वामीजी नही, मुझे वैसा बिलकुल नही लगता।

मैं . तब ठीक है। मैं आपसे आज्ञा लेता हू। प्रणाम। आपने मेरे लिअे बोलनेका परिश्रम किया और अपना कुछ समय मुझे दिया, अिसके लिअे मैं आपका बड़ा आभारी हू। आप जैसे बड़े पुरुषके साथ बोलने या विचार करनेमे मेरी अिच्छाके विरुद्ध या अनजानमे मुझसे कोअी अविनय हुआ हो, तो अुसके लिअे आप मुझे क्षमा करे, यही प्रार्थना है।

स्वामीजी कुछ देर और बैठो। तुम्हे कुछ अधिक कहना चाहिये अैसा मुझे लगता है। तुम्हारी बातचीतसे तुम गुण-दोषके बडे विवेचक और तार्किक हो, अैसा मुझे दिखाअी दिया। अिस प्रकारकी तार्किकतासे हृदयमे भक्ति और दूसरी सद्भावनाओको भी अवकाश नही मिलता। तार्किकताके जोशमे मनकी कोमलता, भावुकता, प्रेमलताका दिन-प्रतिदिन नाश होता है, और अुससे हृदयमे रुक्षताकी वृद्धि होनेकी सभावना रहती है। क्या अपने कल्याणकी दृष्टिसे भक्तिकी, दूसरी सद्भावनाओकी और मनकी कोमलताकी हमे आवश्यकता नही होती ?

मैं अिसमे सदेह नही कि कल्याणकी दृष्टिसे आपके कहे अनुसार अिन सबकी अत्यत जरूरत है। मेरी शकाओ तथा बातचीतसे मै अत्यत तार्किक और निरा आलोचक हू अैसा आपको लगे तो अुसमें आश्चर्य

नही है। मै स्वय सूक्ष्म विचारक और विवेकी वननेका प्रयत्न करता हू और विवेकी वननेका अर्थ भावनारहित होना हे, अैसा मै नही समझता। सभी मानवीय गुणोका अुत्कर्प करके अुनका यथासमय यथायोग्य अुपयोग करनेकी कला साधना मानव-जीवनकी वहुत वडी सिद्धि है अैसा मै मानता हू। और अुस सिद्धिकी प्राप्तिका आधार अधिकाश हमारी शुद्ध विवेक-शक्ति पर है। ज्ञान, भक्ति, दूसरी सद्भावनाअे, सद्गुण, मनकी कोमलता अिन सवका जीवनमे अुचित अुपयोग करनेके लिअे आवश्यक विवेक यदि मनुष्यमे प्रधान रूपसे न हो, तो वह अपनी पूर्णता साध नही सकेगा अैसी मेरी समझ है। मेरे हृदयमे भक्ति और दूसरी भावनाओका कितना वडा स्थान है, यह आप मेरे अल्प परिचयसे कैसे जान पायेगे? फिर भी आपने अिस विपयमे प्रेमपूर्वक जो सूचनाअे दी है वे मुझे आदरपूर्वक मान्य है। अुनका मै कभी विस्मरण नही होने दूगा। मै फिरसे आपका आभार मानकर और आपसे क्षमा मागकर जानेकी अिजाजत लेता हू। प्रणाम।

*

अिस प्रकार हमारी वातचीत हुअी। अन्तमे स्वामीजीने जो कुछ कहा अुससे मैने अैसा नही माना कि अुन्हे चर्चामे मैने परास्त किया, और आज भी मै अैसा नही मानता हू। वाद-विवादमे दिग्विजय-प्राप्तिकी अिच्छा न होनेसे मुझे कभी वैसा नही लगा। मेरी दृष्टि केवल सत्यान्वेपणकी रहती है। विनय, नम्रता और सभ्यता न छोडकर, अहकारमे न पडकर सत्यान्वेपण करना चाहिये, अैसा ही मुझे लगता है। हमारे वीच सवाद हुआ, लेकिन वाद नही हुआ। जो चर्चा हुअी अुसमे वहुत गूढता, पाडित्य या सूक्ष्म वुद्धिका प्रदर्शन दोनो ओरसे नही हुआ। स्वामीजी मेरे प्रश्नोका अुत्तर नही दे सके, अिससे मै चर्चा-कुशल भी सिद्ध नही होता। स्वामीजी वडे गभीर स्वभावके थे। वे दूसरे वाद-विवाद करनेवालोकी तरह क्रोधित भी नही हुअे और न अुन्होने मुझे नास्तिक ही माना। अुन्होने मुझे तार्किक और आलोचक ही माना। मुझ पर क्रोध न करके अुन्होने प्रेमसे मुझे विदा किया। तार्किक मनमे भक्तिका अुदय और अुत्कर्ष नही हो सकता अैसा अुन्हे लगा, अिसलिअे अुन्होने वैसी प्रेमभरी सूचना मुझे की।

अुसमे मुझे कुछ भी अनुचित नही लगा। अुनकी बातचीतसे और अुनके शात स्वभावसे अुनके लिअे मेरे मनमे आदर ही पैदा हुआ। वे अनुभवके चार शब्द कहे और मै सुनू, अैसी ही मेरी भावना थी। कोअी मनुष्य कुछ कहे अुसके बाद जो बात न जचे या ठीकसे समझमे न आवे, अुससे पैदा होनेवाली शकाअें पूछना अथवा अधिक स्पष्टीकरण करनेके लिअे नम्रता-पूर्वक प्रार्थना करना — यही मेरा क्रम था। मै जानता था कि मेरी पूछी हुअी शकाअे और प्रश्न अैसे नही थे जिनका निरसन हो सके और प्रश्न सुलझे। फिर भी अिस विषयमे स्वामीजीने अपने मन और बुद्धिका किस प्रकारसे समाधान किया, यही समझनेकी अिच्छा अुनसे पूछे हुअे मेरे प्रश्नो और शकाओके मूलमे थी।

मै जो मुख्य बात कहना चाहता हू वह यह है कि तत्त्वज्ञानकी भिन्न भिन्न प्रणालिया है। अुनमे सत्यान्वेषणकी दृष्टिसे आज भी सशोधन होता रहे यह आवश्यक है। गूढ प्रश्नोको सुलझानेके लिअे हमे तर्क करना पडता है। तर्कके बिना किसी भी गूढ विषयमे बुद्धिका प्रवेश नही होता। लेकिन किसी भी सूक्ष्म विचार या तर्कको हम अनुभव या अनुभवात्मक ज्ञान न समझे। किसी तर्कसे अधिक सूक्ष्म तर्क हमे न सूझे, तब तक प्रथम तर्कसे ही हम दृढतापूर्वक चिपके रहते है और अुसे ही ज्ञान समझते है। वैसा हम न समझे। तर्कको ही ज्ञान समझ लेने पर अुसमे यदि विसंगति या परस्पर-विरोध हो तो वह हमारे ध्यानमे नही आता। तर्कको ज्ञान समझकर अुसे जिस प्रमाणमे दृढ किया होगा, अुसी प्रमाणमे हमारी सत्य-शोधनकी गति मद होगी। वह गति मद न हो अिसलिअे हमे तर्कको ही ज्ञान नही समझना चाहिये। हमे ज्ञानकी मर्यादा नही बाधनी चाहिये। और केवल परपरासे चली आअी मान्यता पर श्रद्धा नही रखनी चाहिये। अुसके विषयमे अभिमानी और आग्रही नही रहना चाहिये। निष्पक्ष रहकर नम्रतापूर्वक, निरहकारी बनकर हम सत्यकी अखंड अुपासना करते रहे। अनादि कालसे मानव-जातिके श्रेष्ठ पुरुष पूर्व ज्ञानमें वृद्धि करते आये है। हमे भी अुसी मार्गसे चलते रहना चाहिये। अिसीमे सच्चा पुरुषार्थ है और श्रेय है।

२४

सबकी भलाओमें हमारी भलाओ

मानव अब अेकाकी अवस्थामे रहनेवाला प्राणी नही रहा। अब वह समुदायमे अेक-दूसरेकी सहायतासे जीवन बितानेवाला प्राणी बन गया है। अत अुसके लिअे केवल अपने ही सुख-दु.ख तथा कल्याणका विचार न करके सबके सुख-दु.ख और कल्याणका विचार करना आवश्यक हो गया है। अपनी जीवन-पद्धति तथा आचरण वैसा ही रखना मानवका धर्म है, अुसीमे मानवता है।

मनुष्यकी तरह दूसरे प्राणियोंमे भी केवल अपना ही दु.ख दूर करके सुख प्राप्त करनेकी वृत्ति काम करती है। अुनमे जीवन-रक्षा और वशवृद्धिकी प्रेरणा भी होती है। वे केवल अपनी नैसर्गिक बुद्धिसे अपनी अिच्छा और प्रेरणाके अनुसार वरतते है। लेकिन मनुष्य हजारो सालके अनुभव और प्रयोगके बाद केवल नैसर्गिक बुद्धि या प्रेरणाके अनुसार चलनेवाला. प्राणी नही रहा। वह दिनोदिन अधिक विकासको प्राप्त करनेवाली अपनी बुद्धिसे कुदरतकी प्रतिकूलताके कारण होनेवाले दु.खोको टालनेके और अुसकी अनुकूलता साधकर सुख प्राप्त करनेके प्रयत्नमें लगा हुआ है। अिस प्रयत्नमे ही अुसकी बुद्धिका विकास तथा मानसिक भावनाओकी वृद्धि होती रही है। अेक समय दूसरे प्राणियोकी तरह मनुष्य भी अकेला रहता था। लेकिन आगे चलकर किसी समय अुसमें वात्सल्यकी वृद्धि हुअी और अकेले रहनेकी अपेक्षा समुदायमे रहनेके सामर्थ्य और निर्भयता आदिका विशेप अनुभव होनेसे वह सगठन बनाकर रहने लगा। अुसमे वात्सल्यके साथ साथ मातृ-पितृभाव तथा बधु-भगिनी-भावका निर्माण हुआ तथा अुसके आधार पर कौटुबिक रचना और सस्था निर्माण हुअी। अैसे अनेक कुटुबोके पडोस, निकटता, सहवास और सहयोगमे से मैत्रीभाव जाग्रत हुआ। आगे चलकर अुसीमे से गांव, प्रांत, देश, राष्ट्र, महाद्वीप तथा अखिल मानव-जातिकी अधिकाधिक व्यापक और

अेकत्वकी कल्पनाअे कालक्रम तथा परिस्थितियोके कारण निर्माण होते होते सामाजिक विचारोकी वृद्धि होती रही है। मानवमे निर्माण हुअी अिन अेकत्वकी कल्पनाओकी पूर्णताका आधार मनुष्योके आपसी प्रेम, अुदारता, विश्वास, केवल व्यक्तिगत स्वार्थं या सुखके प्रति अनिच्छा, तथा व्यापकताका आनंद आदि सद्‌गुणों पर है। यह तथा अिस प्रकारके अन्य सद्‌गुण जितने अंशोमे अपनाये जावेगे, अुतने अशोमे अिस मार्गमे हमे सिद्धि मिलेगी। अिस मार्ग पर आगे बढनेके लिअे योग्य आचार-विचार, चारित्र्य, शील और हृदय-शुद्धि, अर्थात् शारीरिक, बौद्धिक तथा मानसिक पात्रताकी अत्यत आवश्यकता है, अैसी दृढ श्रद्धा हममे होनी चाहिये। अिस प्रकारकी पात्रता ही सच्ची मानव-सस्कृति है। अिस सस्कृतिकी वृद्धि करनेवाला धर्म ही सच्चा मानव-धर्म है, वही हमारी सच्ची सपत्ति है। मानव-जन्मकी प्राप्तिकी यही मुख्य सिद्धि है, अैसा हमे विश्वास होना चाहिये।

अेक-दूसरेके परस्पर कल्याणकी अिच्छा तथा अुस प्रकारके सतत प्रयत्नोसे यह सिद्धि प्राप्त हो सकती है। अिसलिअे मनुष्यको केवल अपने ही सुख-दु ख और कल्याणकी दृष्टिसे कभी नही चलना चाहिये। अिस प्रकारका आचरण मानव-धर्मकी दृष्टिसे अधर्म है। अुसे कर्तव्य नही परन्तु समाज-द्रोह मानना चाहिये। अिस प्रकारके द्रोहसे बचनेके लिअे यह आवश्यक है कि हमारा आचार-विचार सकुचित नही परन्तु व्यापक हो। केवल अपने सुख-दु खके विचारोके अनुसार चलनेकी अवस्थासे मनुष्य हजारो वर्ष पहले बाहर निकल चुका है। आज वह बहुत आगे बढ गया है। जो मानव या मानव-समूह आज भी सकुचिततामे ही सुख मानने तथा ढूढनेकी अवस्थामे रहेगा, वह ससारमे पिछड जायेगा। ससारमे अुसके लिअे मानवके नाते जीना दूभर हो जायेगा। यह बात हमे अब तकके अितिहासको देखते हुअे ध्यानमे रखनी चाहिये। अितिहाससे मिलनेवाली अिस सीखसे हमे सावधान होना चाहिये। हमे अपनी बढती हुअी बुद्धि और मनोबलका अुपयोग मानव-सस्कृतिको टिकाकर अुसे बढ़ानेमे तथा मानव-धर्मके अनुसार चलनेके लिअे आवश्यक सर्वांगीण पात्रता सिद्ध करनेमे ही करना चाहिये।

मनुष्य अेकाकी अवस्थामें बाहर निकलकर मानवता, सबका कल्याण आदिकी व्यापक कल्पनाओं तक पहुंचा हुआ दिखाओ दे, तो भी अुन कल्पनाओंने अभी भावनाका रूप धारण नहीं किया है। कल्पनाओंको भावनाओंका रूप ग्रहण करनेमें काफी समय लगता है। आगे चलकर भावनाके साथ योजना-शक्ति तथा कर्म-कौशलके साथ कर्तृत्व-शक्ति आने पर अुचित कर्म होते रहें, तो ही मनुष्यमें सद्गुण निर्माण होते हैं। दृढ़ होते होते वे सद्गुण हमारा स्वभाव बन जाय, अिसके लिअे अुनका चिंतन, मनन और सतत आचरण करना पड़ता है, जिसमें बहुत समय लग जाता है। अिसलिअे हम सबकी — मानव-जातिकी अैसी स्थिति आनेमें भले ही बहुत समय लगे, तो भी निराश न होकर अुस दिशामें हमें सतत प्रयत्नशील रहना चाहिये।

आज मानवताका जो प्रचार हो रहा है, अुसमें भावनाकी अपेक्षा कल्पनाका ही अंश अधिक है। शब्द-चातुर्य और शब्द-लालित्यके कारण अुसमें भावनाओंका आभास अवश्य दिखायी देता है। पर मानवताकी सिद्धिकी दृष्टिसे वे अपूर्ण हैं। हमारे प्रचार-कार्यमें शब्दोंकी प्रचुरता बढ़ रही है, फिर वे शब्द किसी लेखके रूपमें हों (जैसे कि मेरे ये शब्द), या भाषण-प्रवचनके रूपमें हवामें फैलनेवाले हों, रेकार्ड किये हुअे हों या विद्वत्तापूर्ण, आलंकारिक अथवा प्रभावपूर्ण भाषासे सुशोभित हों। शब्दोच्चारसे अधिक मानव-जातिकी प्रगति अिस विषयमें नहीं हो सकी है, यह आजकी स्थितिसे स्पष्ट दिखाओ देता है। यह सच है कि थोड़ेसे मनुष्योंके अंतःकरणोंमें अिन भावनाओंका प्रवेश दिखायी देता है, लेकिन मानव-जातिको मुख्य सिद्धि प्राप्त हो अितनी समर्थ ये भावनाअें नहीं हो सकी हैं। क्योंकि जनताके चित्तमें अभी अुनका प्रवेश नहीं हो पाया है। समग्र मानव-जाति प्रेम, बंधुभाव तथा मैत्रीका यानी समताका आचरण करे, अिसके लिअे आवश्यक विधि-निषेधों तथा आचार-विचारोंका अुपदेश अनेक महात्मा और संत प्राचीन कालसे देते आये हैं। अुन्हींको हम अलग-अलग धर्मके नाम देते हैं। लेकिन वे अलग-अलग धर्म नहीं हैं। वे अेक ही मानव-धर्मका परिचय करानेके लिअे देश, काल और भाषाभेदके अनुसार कहे हुअे आचार और विचारके नियम हैं। यह बात

न समझकर देश, काल और भाषा-सबधी संकुचित भावनाओंके कारण हम अुन नियमोको ही पूर्ण धर्म मान लेते है और अुसका अभिमान रखते है तथा आपसमे और मानव-जातिमे वैर बढाते है। अिन नियमोके पूर्ण व्यापक स्वरूपको समझकर मानवताकी अतिम सिद्धि तक पहुचनेका हमारा प्रयत्न नही होता। अपने सकुचित ज्ञानको ही पूर्ण ज्ञान मानकर धर्मके नाम पर अधर्मका आचरण करनेमे ही हम धन्यता समझते हैं। महापुरुषोके वचनोका अपनी रुचिके अनुसार अर्थ लगाकर हम अनर्थ करते रहते है। यह बड़े दु:खकी बात है। अिस सबका सार यही है कि हममे अब तक मानवताकी भावना नही आयी है। हमारे सामने अुसकी कल्पनामात्र है। केवल शाब्दिक वर्णन और आडबरसे हम अुस विषयके बौद्धिक आनद या अभिमानमे निमग्न रहनेके प्रयत्नको ही धर्मकी पूर्ण सिद्धि मान रहे हैं।

पूर्णत. या अंशत: अूपर लिखी हमारी स्थिति होने पर भी हम मनुष्य है और दूसरे प्राणियोकी तुलनामे श्रेष्ठ है, यह वास्तविक बात अगर हम सबको मान्य हो, हमारे अत:करणमे वह स्वप्नदशा तक पहुची और दृढ हो गअी हो, तो हमारा जन्म मानवताकी सिद्धिके लिअे है यह बात भी बुद्धिको विवेक द्वारा जचाकर हमे अपने मन पर दृढतासे जमा देनी चाहिये। अति प्राचीन कालसे अब तक मानवताकी जो प्रगति हमसे सध सकी है, अुससे आगे बढे सिवा हमारा निस्तार नही है। और प्राप्त की हुअी मानवतामे से ही आगे बढ़े सिवा दूसरा कोअी गौरवास्पद मार्ग भी हमारे लिअे नही है।

हममें वात्सल्यका विकास हुआ है। कुटुम्ब तथा नागरिकताके भाव कुछ अशोमे हममे आये हैं। अब हम अुससे पीछे लौट नही सकते। जो भी हो, हमे आगे बढ़ना ही चाहिये और अपना विकास साधना चाहिये। मानवताके विकासकी तथा अुसकी अतिम सिद्धिकी मर्यादा हमारी कल्पनामे आ गयी है। अुसे प्रमाण मानकर हमे अपना जीवन-क्रम चलाना चाहिये। अतिम सिद्धिसे आज हम चाहे जितने दूर हो, आगेका मार्ग चाहे जितना कठिन हो, फिर भी अुसी मार्गसे हमे आगे बढ़ना चाहिये। यह बात हम सबके मन पर पूर्णतया अंकित हो जानी चाहिये।

सबके सुख-दु खमे हमारा सुख-दु.ख है और सबके कल्याणमें हमारा कल्याण है — अिस श्रद्धासे हम प्रयत्नशील बनें, तभी मानवताकी सिद्धि तक पहुच सकते हैं। यह बात हमारे मन पर दृढतासे जमे बिना हमारी भिन्न भिन्न शक्तियोका अुपयोग हम अुस दिशामे नही कर सकेंगे और अिस प्रकारकी निष्ठाके बिना हम अिस मार्गमे स्थिर भी नहीं हो पायेंगे। हमारे हृदयकी सामुदायिक कल्याण-सबधी भावना और अुसके अनुसार प्रत्यक्ष होनेवाले कल्याणप्रद कार्योंके आधारसे ही हम अिस दिशामे प्रगति कर सकेंगे।

जिस सामाजिक विचार-पद्धति या आचरणसे हमारे सद्गुणोकी वृद्धि होती रहे, हममे पवित्रता आवे, हमारे आपसी सघर्ष नष्ट हो और हममे परस्पर प्रेम, मैत्री, अुदारता, विश्वास तथा अेकताकी वृद्धि होती रहे, वही सच्ची मानव-सस्कृति है और अुसीसे हम सबका कल्याण होगा। वही हम सबका जीवन-ध्येय होना चाहिये। अिस प्रकारकी मनोदशा, अैसी सिद्धि, मनुष्यके अतिरिक्त किसी अन्य प्राणीको प्राप्त नही हो सकती। अिसी ध्येयको सामने रखकर हमें वैयक्तिक, कौटुबिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, औद्योगिक आदि प्रत्येक सबंध तथा क्षेत्रमे वरतना चाहिये। अिस प्रकारकी जीवन-दृष्टि रखकर आचरण करनेसे हमारे जीवनके सभी सबध धर्म-सबध हो जायेंगे और सभी क्षेत्र कल्याणक्षेत्र दिखायी देंगे। अिस प्रकार हम अपने जीवनके सभी सबधो और क्षेत्रोमे अुदात्त भावसे सतोषपूर्वक व्यवहार करने लगे, तो हमारा जीवन-व्यवहार, हमारे कर्तव्य और हमारा धर्म भिन्न नही रह जायेंगे। अिस मार्गसे हमारी तथा समाजकी अुन्नति हुअे बिना नही रहेगी। अैसी स्थितिमे समाजमे कोअी दु खी और दरिद्र नही दिखाअी देगा; कोअी अज्ञानी और अभागा नही मिलेगा, कोअी दोषी और दुर्गुणी दिखाअी नही देगा। अिस स्थितिमे सबमे प्रेम और विश्वास ही दिखाअी देगा। फिर कौन किसे धोखा देगा और लूटेगा? फिर कौन किसकी कठिनाअीका लाभ अुठाअेगा? कौन किसका शोषण करेगा? कौन किसकी हिंसा करेगा? मानव-सस्कृति अिसी स्थितिमे बढती और टिकती है। अैसी स्थितिमे ही मानव-व्यवहार सहज और शुद्ध रीतिसे चलते रहेंगे। जीवन-

शुद्धिका — मानवता-प्राप्तिका यही मार्ग है। अिसीमें मानव-जातिका कल्याण है।

अिस अुदात्त ध्येयकी प्राप्तिके लिअे प्रारभ हमे स्वय अपनी शुद्धिसे करना चाहिये। ज्यो ज्यो अिस मार्गमे प्रगति होगी, ज्यो ज्यो हमारा मन शुद्ध होता रहेगा, त्यो त्यो हमारा जीवन-व्यवहार शुद्ध होता जायेगा। हमारे आसपासके वातावरण पर अुसका सुपरिणाम होने लगेगा। फिर अिस मार्गमे दूसरोकी सहायता करनेकी शक्ति हममे स्वभावत प्रकट होने लगेगी। हमारा अपना तथा दूसरोका कल्याण भिन्न नही है, अैसी हमे प्रतीति होगी। अिस महान प्रतीतिके — अनुभवके लिअे ही हमारा जन्म है, और अिसीमे जीवनकी सार्थकता है।

हमारी कुछ विचार-प्रेरक पुस्तकें

	रु न पै
गीताका सदेश	०.३०
मगल-प्रभात	० ३७
रामनाम	० ५०
सत्यके प्रयोग अथवा आत्मकथा	१ ५०
सत्य ही ओश्वर है	० ८०
सर्वोदय (रस्किनके 'अन्टु दिस लास्ट' के आधार पर)	०.३५
सर्वोदय	२ ००
हिन्द स्वराज्य	०.७०
विचार-दर्शन – १	१ ५०
विवेक और साधना	४ ००
सुमवाद	० ५६
धर्मोदय	१ २५
गीता-मथन	३ ००
जीवन-शोधन	३ ००
मनार और धर्म	२ ५०
स्त्री-पुरुप-मर्यादा	१ ७५
आशाका अेकमात्र मार्ग	२.००
आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा — भाग १	१ ५०
,, ,, ,, — भाग २	१.५०
,, ,, ,, — भाग ३	१ ५०
गाधीजी और गुरुदेव	० ८०
गाधीजीकी साधना	३ ००
ठक्करवापा (जीवन-चरित्र)	३ ००
वापूकी छायामे (परिवर्धित)	४ ००
वापू — मैंने क्या देखा, क्या समझा ?	२ ५०

नवजीवन ट्रस्ट,
अहमदाबाद–१४